आर्यसमाज आज के सन्दर्भ में

डॉ. धर्मपाल
डॉ. कमलकिशोर गोयनका

वैदिक प्रकाशन

आर्यसमाज आज के सन्दर्भ में

आर्य समाज : आज के सन्दर्भ में

सम्पादक

डॉ० धर्मपाल

डॉ० कमलकिशोर गोयनका

वैदिक प्रकाशन

१५, हनुमान रोड

नई दिल्ली-११०००१

प्रकाशक : वैदिक प्रकाशन
१५, हनुमान रोड
नई दिल्ली-११०००१

मूल्य : पच्चीस रुपये

मुद्रक : ट्रिंगल आर्ट कम्पोजिंग एजेन्सी
द्वारा संगीता प्रिंटर्स, मौजपुर-५३

आर्यसमाज : आज के सन्दर्भ में

सम्पादक : डॉ० धर्मपाल
डॉ० कमलकिशोर गोयनका

प्रथम संस्करण : १९८७

ARYASAMAJ : AAJ KE SANDARBH MEIN :
Edited by Dr. Dharampal and Dr. Kamaal Kishore Goyanka; Published by Vedic Prakashan, 15, Hanuman Road, New Delhi-110001, First Edition 1987. Rs. 25=00

भूमिका

महर्षि दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी पर आयोजित समारोह अब एक ऐतिहासिक घटना बन गयी है। सन् १९८३-८४ में सारे देश में उनकी निर्वाण-शताब्दी मनायी गयी और देश ने उस महान् देश प्रेमी, धर्म-सुधारक, चिन्तक तथा अपने समय के सबके अधिक तेजस्वी महापुरुष को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। निर्वाण-शताब्दी पर आयोजनों का आरम्भ अजमेर से हुआ और उसका समापन हुआ जनवरी, १९८५ में देश की राजधानी दिल्ली में। सारे देश में आर्यसमाज को लेकर एक नयी जाग्रति उत्पन्न हुई और महर्षि दयानन्द के साथ इस संस्था के महान् योगदान पर विद्वानों ने विचार-विमर्श किया। समाचार-पत्रों के अतिरिक्त रेडियो तथा दूरदर्शन पर कार्यक्रम आयोजित हुए और आर्यसमाज का मूल्यांकन किया गया। वास्तव में, इस निर्वाण-शताब्दी ने एक सम्वाद की स्थिति उत्पन्न कर दी। जनता और आर्यसमाज के अधिकारियों में इसे आयोजित करने का उत्साह छाया हुआ था और देश का एक प्रबुद्ध वर्ग आर्यसमाज तथा महर्षि दयानन्द के योगदान को ध्यान में रखते हुए इसके वर्तमान स्वरूप तथा इसके भविष्य को लेकर चिन्तित हो रहा था। हमारे देश में आत्म-मंथन, आत्म-निरीक्षण तथा आत्म-मूल्यांकन की लम्बी परम्परा रही है। समय-समय पर व्यक्ति से लेकर समाज और धर्म अपना आत्म-निरीक्षण करते रहे हैं और नयी परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में स्वयं को परिवर्तित करते हुए भविष्य के लिये अधिक अर्थवान बनाने का प्रयत्न करते रहे हैं। जो धर्म या समाज ऐसे आत्म-मूल्यांकन को बहिष्कृत करता है, उसमें नया जीवन प्रवेश नहीं कर पाता और वह धीरे-धीरे निर्जीव होने लगता है।

हमने इन सब बातों को ध्यान में रखकर निर्वाण-शताब्दी पर 'आर्यसमाज : आज के सन्दर्भ में', शीर्षक से एक परिचर्या आयोजित की, यह जानने के लिए कि महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज के सम्बन्ध में, जनता की क्या राय है, इस महान् संस्था के अतीत, वर्तमान और भविष्य के प्रति वह क्या सोचती है, तथा कहां-कहां सुधार की सम्भावनाएं हो सकती हैं। इसके लिए हमने २० प्रश्न तैयार किये और देश के १३० व्यक्तियों को हमने इन प्रश्नों को भेजते हुए उनके उत्तर आमन्त्रित किये। ये प्रश्न काफी सोच-विचार कर तैयार किये गये थे तथा इन्हें तैयार करते समय दृष्टि यही थी कि महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज के योगदान के साथ वर्तमान की दुर्बलताएं भी हमारे सामने आ जायें। इस प्रश्नावली को यहां प्रस्तुत किया जा रहा है :

आर्य समाज : आज के सन्दर्भ में
प्रश्नावली

१. आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी देश-विदेश में मनायी जा रही है। इस अवसर पर आप कैसा अनुभव कर रहे हैं ?

२. महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्म टंकारा में हुआ, शिक्षा-दीक्षा मथुरा में और निर्वाण अजमेर में। इन तीनों स्थानों पर महर्षि के स्मारकों का निर्माण हुआ है। क्या आप इन स्मारकों की वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट हैं अथवा चाहते है कि इन स्थलों पर कुछ ऐसी गतिविधियां भी प्रारम्भ की जायें जिनसे आगामी पीढ़ियां प्रेरणा ले सकें और आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में सहायता मिल सके। इस सम्बन्ध में आपके क्या सुझाव हैं ?

३. महर्षि दयानन्द के जीवन की दो प्रमुख घटनाएँ हैं—शिवलिंग के ऊपर चूहे का चढ़ना, तथा चाचा व भगिनी की मृत्यु। इन घटनाओं के फलस्वरूप उनके जीवन का लक्ष्य ही बदल गया था। उन्होंने उसी दिन से मृत्यु को जानने और मृत्युञ्जय बनने की बात को मन में ठान लिया था। क्या महर्षि दयानन्द अपने उद्देश्य में सफल हो सके और अपनी विचारधारा फैलाकर जगत का कल्याण कर सके ?

४. महर्षि दयानन्द १८८३ में दीपावली के दिन निर्वाण से पूर्व पर्याप्त समय तक रुग्ण रहे थे। क्या आप समझते हैं कि उनको उचित औषध और पथ्य न मिल सके, इसके पीछे कोई षड़यन्त्र था ? क्या महर्षि के अनुयायियों ने अपने कर्त्तव्य पालन में कोई ढील बरती थी ? आपके इस सम्बन्ध में क्या विचार हैं ?

५. स्वामी दयानन्द के निर्वाण को सौ वर्ष पूरे हो रहे हैं। इन सौ वर्षों में दुनिया बहुत बदल गयी है। मन में यह सवाल उठता है कि सौ वर्ष पहले की परिस्थितियों में जो आर्य-समाज सार्थक एवं उपयोगी था, वह आज की परिस्थितियों एवं वैज्ञानिक उत्थान के काल में किस प्रकार उतना ही सार्थक एवं उपयोगी हो सकता है !

६. महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों का आपके व्यक्तिगत जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा है ? इन ग्रन्थों के माध्यम से देश-विदेश में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार में कितनी सहायता मिली है ? आर्यसमाज के अनुयायी सम्पूर्ण विश्व में फैले हुए हैं ? इन ग्रन्थों को सभी देशों तक पहुँचाने के लिये क्या करना चाहिए ? क्या इन ग्रन्थों में कुछ ऐसे स्थल हैं जिन्हें आप हटाना चाहेंगे ?

७. आप एक पक्के आर्यसमाजी हैं ? हम जानना चाहते हैं कि आप अपने जीवन एवं व्यवहार में आर्यसमाज के सिद्धान्तों को कितना अपना सके हैं ? अपने जीवन के सन्दर्भ में बतायें कि आर्यसमाज के सिद्धान्त आज कितने व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं।

८. कृपया बतायें कि आपके परिवार में आपके बाद आने वाली नयी पीढ़ी आर्य समाज के सिद्धांतों में कितनी आस्था रखती हैं तथा वह उन्हें अपने जीवन में किस प्रकार उतारना चाहती है ? कृपया अपने पुत्र व पुत्री के उल्लेख के साथ अपनी बात स्पष्ट करें।

९. वेद किसी देश, काल अथवा जाति विशेष के लिये नहीं हैं, जबकि अन्य धर्मग्रन्थ किसी स्थान विशेष और जाति विशेष के लोगों को अधिक महत्त्व देते हैं अथवा उन्हीं के कल्याण की बात करते हैं। आपकी राय में ऐसे कौन से कारण हैं जिनकी वजह से लोग वेदों से विमुख होते जा रहे हैं ? आप बतायें कि किस प्रकार वेदों की वाणी को आज जन-जन तक पहुँचाया जा सकता है ?

१०. वेदों में स्त्रियों को सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। आर्य-समाज ने भी स्त्री-शिक्षा के प्रचार से उन्हें उचित सम्मान एवं स्थान दिलाने का बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य किया है। आज पाश्चात्य सभ्यता के फलस्वरूप स्त्री स्वातंत्र्य की बात बड़े जोरों पर है। इस सम्बन्ध में आर्यसमाज की भूमिका क्या होनी चाहिए ?

११. 'संगच्छध्वं संवदध्व'' की वेद-विहित धारणा आज की गुट-निरपेक्षता एवं विश्व-शान्ति का सन्देश देती है ? यदि वर्तमान विश्व इस मंत्र का पालन करे तो क्या विश्व-समाज का निर्माण नहीं हो सकता ? आपका क्या विचार है ?

१२. विश्व के अन्य विकासशील देशों के समान भारत में भी पश्चिमी सभ्यता अपने पैर जमाती चली जा रही है। आज भारत अपनी अस्मिता खोता चला जा रहा है और विसंस्कृतीकरण की भयावह समस्या सामने आ खड़ी हुई है। ऐसी परि-स्थिति में वेद-संस्कृति कैसे बचाई जा सकती है ? आप इसके लिए स्वयं क्या कर रहे हैं और दूसरों को क्या करने का सुझाव देते हैं ?

१३. आर्यसमाज के पहले दो नियम ईश्वर के सम्बन्ध में, अगले तीन नियम अपने स्वयं के सम्बन्ध में तथा अन्तिम पांच नियम अन्य लोगों के सम्बन्ध में कर्त्तव्य का विधान करते हैं ? इन नियमों में इतनी सामग्री मौजूद है कि इनके ऊपर आचरण करने से व्यक्ति और समाज दोनों कल्याणकारी स्थिति को प्राप्त कर सकते हैं। क्या आप अपने जीवन में इन नियमों का पालन करते हुए इस स्थिति को प्राप्त कर सके हैं ?

१४. आज भारत जिस समस्याओं से घिरा है, उनसे हम सभी परिचित हैं। ये समस्याएं हैं—क्षेत्र, भाषा एवं धर्म की संकीर्णता, राष्ट्रीय चरित्र का अभाव, अनैतिकता एवं भ्रष्टाचार, जनसंख्या का विस्फोट, बेकारी तथा युवा पीढ़ी की दिशाहीनता स्वार्थी राजनेताओं के हाथ में सत्ता का अधिकार, प्रजातन्त्र का दुरुपयोग, गरीबी एवं अशिक्षा का विस्तार, सामाजिक कार्यों के प्रति उदासीनता और स्वार्थों का जमघट आदि। एक आर्यसमाजी के रूप में आप इन समस्याओं का किस प्रकार समाधान करना चाहेंगे ?

१५. आर्य समाज ने भारत का अनेक प्रमुख समस्याओं के समाधान में सदैव दिशा-निर्देश किया है। आज भारत में दूषित वर्ण-व्यवस्था, अस्पृश्यता, पाखण्ड एवं भ्रष्ट्राचार, राष्ट्रद्रोह एवं विघटनकारी प्रवृत्तियां तथा बलात् धर्मान्तरण आदि समस्याओं का जाल फैला हुआ है। कृपया बतायें इन समस्याओं को समूल समाप्त करने के लिए आप क्या करना चाहेंगे? देश में अस्पृश्यता की समस्या, सरकारी और गैर-सरकारी तौर पर काफी कुछ करने के बाद भी भयावह बनी हुई है। आर्य समाज को इस समस्या का निराकरण करने के लिए क्या करना चाहिए?

१६. आर्यसमाज ने भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। राष्ट्र के विकास के लिए आर्य-नेता सदैव तत्पर रहे? आज राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता की भावना के विकास के लिए आर्यसमाज क्या करे?

१७. सम्पूर्ण भारत में हिन्दी का प्रयोग हो और इसे राष्ट्रीयभाषा का का दर्जा प्राप्त हो, इसके लिए आर्यसमाज ने क्या किया है? आज हम विश्व हिन्दी सम्मेलन मनाने जा रहे हैं। विदेशों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में आर्यसमाज की क्या भूमिका रही है? विश्व में हिन्दी को उचित स्थान दिलाने के लिए आर्यसमाज को को क्या करना चाहिए?

१८. यदि आज महर्षि दयानन्द सरस्वती जीवित होते तो देश की वर्तमान परिस्थितियों पर उनकी क्या प्रतिक्रिया होती?

१९ आज देश-विदेश में आर्यसमाज की जो स्थिति है तथा आर्य नेता और उनके अनुयायी जिस प्रकार आर्यसमाज को चला और अपना रहे हैं, क्या आप उससे सन्तुष्ट हैं? आर्यसमाज में नित्य नया जीवन आना चाहिए, इसके लिए आप क्या सुझाव देना चाहेंगे?

२०. आपके अनुसार आर्यसामाज क्या है और आर्यसमाज को विश्व-कल्याण के लिए, मानव जाति के कल्याण के लिए क्या-क्या कार्यक्रम अपने हाथ में लेने चाहिए?

इस प्रश्नावली को तैयार करने के उपरान्त हमने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान लाला रामगोपाल शालवाले (अब स्वामी आनन्द बोध सरस्वती) से आग्रह किया कि वे अपने एक पत्र के साथ इस प्रश्नावली को देश के कुछ चुने विद्वानों, समर्पित आर्य-समाजियों, लेखकों आदि को भेजने की कृपा करें। उन्होंने हमारे प्रस्ताव को स्वीकार करने की कृपा की और उनके निम्नलिखित पत्र के साथ उपर्युक्त प्रश्नावली भेजी गयी। लाला रामगोपाल शालवाले का पत्र इस प्रकार से है:

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा
महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान
नई दिल्ली-११०००२

दिनांक : ७ अक्तूबर, १९८३

मान्यवर,

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि स्वामी दयानन्द निर्वाण शताब्दी के अवसर पर स्वामी जी को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए तथा आर्यसमाज की आज की परिस्थितियों में उपयोगिता एवं सार्थकता का मूल्यांकन करने के लिए, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में एक प्रश्नावली तैयार की गई है। देश के प्रमुख आर्यसमाजी नेताओं, विद्वानों, राजनेताओं, बुद्धि-जीवियों, लेखकों, शिक्षकों, वकीलों, छात्रों, अनुयायियों, व्यापारियों, किसानों आदि के आर्यसमाज से संबंधित प्रश्नों पर विचार आमंत्रित किए जा रहे हैं। इन विचारों का उपयोग देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, सार्वदेशिक तथा अन्य आर्यसमाज के पत्रों तथा "आर्यसमाज : आज के संदर्भ में" पुस्तक रूप में प्रकाशन के लिए किया जायेगा। इन विद्वानों-चिन्तकों में आप भी एक हैं। आपके विचार एवं सुझाव आर्यसमाज को दिशानिर्देश करने में महत्वपूर्ण होंगे। मेरा आपसे विनम्र अनुरोध है कि आप संलग्न प्रश्नावली का उत्तर और अपना एक पासपोर्ट आकार का फोटो १५ अक्तूबर १९८३ तक भेजने की कृपा करें। मुझे विश्वास है कि इस संबंध में आपका सहयोग मुझे अवश्य प्राप्त होगा।

इस पुस्तक के सम्पादन का कार्यभार सर्वश्री डॉ० धर्मपाल आर्य, डॉ० कमल किशोर गोयनका और सुरेन्द्र कुमार हिन्दी को सौंपा गया है। सम्पादकों की सुविधा को देखते हुए, आप अपने उत्तर निम्न पते पर भेजने का कष्ट करें—

सम्पादक,
आर्यसमाज : आज के संदर्भ में
ए/एच-१६, शालीमार बाग
दिल्ली-११००३३

आपकी सेवा में व्यवस्था की सुविधा को देखते हुए एक टिकट लगा लिफाफा तथा कुछ कोरे कागज भी भेजे जा रहे हैं। इस कार्य में हमारी ओर से विलम्ब हो चुका हैं। आपका सहयोग इस कार्य को समय पर पूरा कर सकता है।

मेरा आप से पुनः अनुरोध है कि इस प्रश्नावली का उत्तर आप यथाशीघ्र देने की कृपा करें।

धन्यवाद। ह०/भवदीय

प्रधान, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा

इस पत्र के साथ भेजी गयी प्रश्नावली का प्रायः सभी ओर से स्वागत हुआ। डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार ने अपने पत्र में लिखा, "आपने जो प्रश्न उठाये हैं, वे बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।" श्री वीरेन्द्र ने भी इनके महत्त्व को स्वीकार करते हुए लिखा, "इसमें सन्देह नहीं कि प्रश्नावली का विषय आज की परिस्थितियों में बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है।" प्रो० वेदव्रत ने भी इसी बात को अपने शब्दों में लिखा, "निर्वाण-शताब्दी के अवसर पर महर्षि दयानन्द के कार्यों का लेखा-जोखा करना और इतिहास में उनके स्थान का एसेसमैन्ट करना बहुत अच्छा और महान् कार्य है। यह जो आप लोगों ने कार्य उठाया है, बहुत अच्छा है।" हमें प्रश्नावली के लगभग ४०-४५ व्यक्तियों के जो उत्तर मिले, उनमें प्रायः यही स्वर था कि यह परिचर्चा आर्यसमाज के वर्तमान स्वरूप के मूल्यांकन तथा भविष्य के स्वरूप के निर्धारण की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हमारी दृष्टि भी यही रही है कि आर्यसमाज एक महान् संस्था थी, और है तथा इसे भविष्य में इससे भी अधिक महान् होना चाहिए। यह सत्य है कि आर्यसमाज के वर्तमान स्वरूप से बड़ी संख्या में समर्पित आर्यसमाजी भी सन्तुष्ट नहीं है, लेकिन इस असन्तोष से जो आत्म-मंथन होना चाहिए, उससे हम न जाने क्यों बचते रहे हैं। यह परिचर्चा इस आत्म-मंथन की शुरूआत है, लेकिन यह इस बात की द्योतक है कि कालजयी संस्थाएं आत्म-मंथन तथा सम्वाद के द्वार को खुला रखती हैं और जड़ता, आलस्य, अकर्मण्यता, दिशाहीनता के अन्धकार को चीरकर सदैव प्रकाश की ओर अग्रसर होने के लिए प्रयत्नशील रहती हैं। यही प्रयास संस्था को जीवित रखता है और उसे जीवन्त, गतिशील तथा प्रत्येक युग में अर्थवान बनाकर रखता है।

हमें जिन विद्वानों के उत्तर प्राप्त हुए वे, चार प्रकार के थे—एक, जिन्होंने समय अभाव में उत्तर देने में असमर्थता प्रकट की; दूसरे, जिन्होंने प्रश्नावली के कुछ ही प्रश्नों के उत्तर दिये; तीसरे, जिन्होंने प्रश्नावली को ध्यान में न रखकर आर्यसमाज पर धारावाहिक लेख लिखकर भेजे; चौथे, जिन्होंने प्रश्नावली के अनुरूप प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लिखकर भेजा। स्वाभाविक था कि हमारी योजना में चौथे प्रकार के उत्तर ही आते थे, परन्तु हमने दूसरे प्रकार के उत्तरों का भी यथास्थान

प्रयोग करने का प्रयत्न किया है। हम जिन विद्वानों के उत्तरों का उपयोग नहीं कर पाये हैं, उनके प्रति हम अपराधी हैं और इसके लिए क्षमाप्रार्थी हैं, लेकिन हम उनके सहयोग के प्रति भी नतमस्तक हैं, तथा उनके प्रति भी नतमस्तक हैं जिनके उत्तर यहां प्रकाशित किये जा रहे हैं। वास्तव में विद्वानों, लेखकों तथा समर्पित आर्यसमाजियों के सहयोग के विना इस परिचर्चा की सफलता असम्भव ही थी।

हमने इस परिचर्चा को पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित करते समय प्रश्नावली के बीस प्रश्नों को बीस अध्यायों में बदल दिया और प्रत्येक विद्वान के एक प्रश्न से सम्बन्धित उत्तरों को एकत्र करके उन्हें एक साथ प्रस्तुत कर दिया। इससे पाठकों को यह सुविधा होगी कि एक विषय पर सभी विद्वानों के उत्तर एक साथ पढ़ने को मिल सकेंगे तथा इससे उन्हें अपनी राय बनाने, स्थितियों को समझने तथा भविष्य की दिशा तय करने में आसानी हो सकेगी। विद्वानों के इन उत्तरों से सम्पादकों की सहमति का कोई प्रश्न नहीं है, क्योंकि प्रत्येक विद्वान के विचार उसके निजी विचार हैं जो उनके अनुभवों पर आधारित हैं। चूँकि प्रत्येक व्यक्ति का अनुभव भिन्न-भिन्न होता हैं, अत: उनके विचारों तथा निष्कर्षों में अन्तर आना अस्वाभाविक नहीं है। यदि किसी पाठक के विचार किसी उत्तरदाता से नहीं मिलते तो भी हमें उन्हें सहज रूप से ग्रहण करना चाहिए। विचार-भेद शत्रुता का नहीं सम्वाद का आरम्भ है। यदि विचारों में अन्तर न होगा तो सम्वाद कैसे होगा ? वैसे भी हमें यह दम्भ नहीं पालना चाहिये कि हम ही सत्य पर हैं और शेष असत्य पर। सत्य को देखने की अपनी-अपनी दृष्टि होती है, इसलिए दूसरे की दृष्टि को असत्य मानने की भूल तब तक नहीं करनी चाहिए, जब तक आपके पास उसे खण्डित करने के प्रवल तर्क न हों। हमारी चेष्टा एक सामूहिक चिन्तन को प्रस्तुत करने की है, क्योंकि हमारा समाज अब सामूहिक चिन्तन से ही विकसित तथा उन्नति के शिखर तक पहुँच सकता हैं।

हमने इस प्रश्नावली में जिन प्रश्नों को उठाया है, वे आर्यसमाज के भावी अस्तित्व से मूलरूप से सम्वद्ध हैं, अर्थात् यदि आर्यसमाज को वर्तमान तथा भविष्य में एक महान् तथा शक्तिशाली संस्था के रूप में बने रहना है तो उसे इन प्रश्नों से आमना-सामना करना ही होगा और आर्यसमाज के हितैषियों, अनुयायियों, तथा विचारकों के मूल्यांकन को गम्भीरता से ग्रहण करना होगा। पाठक इस पुस्तक में संकलित विद्वानों के विचारों में पायेंगे कि प्राय: सभी उत्तरदाता आर्यसमाज के गौरवशाली अतीत के प्रति श्रद्धानत हैं, किन्तु वर्तमान के प्रति आलोचक तथा भविष्य के प्रति सन्देहशील बने हुए हैं, लेकिन इसके मूल में भाव यही है कि वे आर्य समाज को सभी दृष्टियों से, सभी क्षेत्रों एवं दिशाओं में एक जीवन्त संस्था के रूप मे देखना चाहते हैं। उनकी यह चिन्ता अत्यन्त स्वाभाविक है, क्योंकि देश और समाज की जो आज स्थिति है, उसमें आर्यसमाज की सजगता, क्रियाशीलता, राष्ट्री-

यता, समाज-सापेक्षता तथा विवेकाश्रित विचारधारा देश की सुरक्षा एवं एकता को बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान कर सकती है। आर्यसमाज सदैव से व्यक्ति केन्द्रित नहीं, समाज और देश केन्द्रित संस्था रही है और इसीलिए उसने कई दशकों तक एक साथ समाज में हलचल, उद्वेलन और परिवर्तन का शंखनाद किया है। आज का व्यक्ति भी आर्यसमाज से यही आशा करता है कि वह चाहे सीमाओं की रक्षा का प्रश्न हो या भ्रष्टाचार का, नये राज्यों के निर्माण का प्रश्न हो या सूखे अथवा बाढ़ का, धर्म-परिवर्तन का हो या जनसंख्या को सीमित रखने का, राजनेताओं के निकम्मेपन तथा भ्रष्टाचार का हो या नौकरशाही की लोक विरोधी नीतियों-व्यवहारों का, सभी में उसे जनता के नेतृत्व के लिए सामने आना चाहिए। यह कार्य केवल बाह्य-कर्मकाण्ड से नहीं होगा और न केवल नेता बनने तक सीमितरहने से बल्कि यह लिए दयानन्द की तरह लोकमय बनकर ही हो सकता है। आर्यसमाज को जनता के प्रत्येक कष्ट में उसके साथ होना होगा, संगठित होकर अहिंसात्मक सत्याग्रह से लोक-पीड़ा को दूर करने के लिए व्यावहारिक रूप ग्रहण करना होगा। आज समाज में एक नये नेतृत्व की प्रतीक्षा है और आर्यसमाज ही इस आशा को फलीभूत कर सकता है।

'आर्यसमाज : आज के संदर्भ में' अपने प्रकार का पहला प्रयास है, किन्तु यह अन्तिम नहीं होना चाहिए। यह प्रयास निरन्तर होते रहना चाहिए और प्रत्येक वर्ष न सही, दो वर्ष में एक बार अवश्य ही देखना चाहिए कि हमने जो व्रत लिये थे, वे कितने पूरे हुए और हमें अभी कितनी दूर और जाना है? एक बार लक्ष्य पूरे होने पर हमें पुन: नये लक्ष्यों को तय करना होगा और इस प्रकार यह सिलसिला निरन्तर चलता रहेगा। हमारा एक और आग्रह आर्यसमाज के कर्णधारों, अनुयायियों तथा हितैषियों से है कि महर्षि दयानन्द का संम्पूर्ण वाङ्मय एक साथ प्रकाशित हो और बहुत कम कीमत पर जनता को उपलब्ध कराया जाय। साथ ही स्वामी श्रद्धानन्द, इन्द्र विद्यावाचस्पति आदि महात्माओं, विचारकों की सम्पूर्ण रचनावली, महत्वपूर्ण राजनेताओं के पत्र-व्यवहार आदि का भी प्रकाशन होना चाहिए। हम स्वयं इसके लिए प्रयत्नशील हैं और पाठकों, विचारकों तथा आर्यसमाज के कर्णधारों का सहयोग चाहते हैं। आर्यसमाज के मन्दिरों, कार्यालयों तथा पुस्तकालयों आदि में जो महत्त्वपूर्ण सामग्री रखी या दबी पड़ी है उसे अब व्यवस्थित रूप में प्रकाशित करके जनता तक पहुंचाना बहुत आवश्यक है।

अन्त में 'परिशिष्ट' के अन्तर्गत कुछ अन्य विद्वानों के विचार, पत्र तथा परिचर्चा में भाग लेने वाले विद्वानों के पते दे दिये गये हैं। हम उन सभी के प्रति अपना आभार प्रकट करते हैं, जिनके सहयोग से यह पुस्तक छप सकी है। विशेष रूप से

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों, लाला रामगोपाल शालवाले (स्वामी आनन्द बोध सरस्वती) श्री ओ३म्प्रकाश त्यागी, श्री सोमनाथ एडवोकेट, दिल्ली आर्य-प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री सूर्यदेव और पुस्तक के प्रकाशक-दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की संस्था वैदिक प्रकाशन के अधिकारियों का हम हृदय से आभार प्रकट करते है जिनका हमें पूर्ण सहयोग मिला और जिसके कारण यह योजना पूर्ण हो सकी।

सम्पादक-द्वय

डॉ० धर्मपाल	डॉ० कमलकिशोर गोयनका
ए/एच-१६ शालीमार बाग	ए-९८, अशोक विहार फेज़ प्रथम
दिल्ली—११००५२	दिल्ली—११००५२

विषय सूची

१. स्वामी दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी तथा आपके अनुभव १७
२. आर्यसमाज के स्मारक तथा सुधार की सम्भावनाएं २३
३. महर्षि दयानन्द के जीवन की घटनाएं तथा उनके उद्देश्यों की सफलता ३३
४. महर्षि की रुग्णता और चिकित्सा की स्थिति ४१
५. आर्यसमाज की शताब्दी और उसकी उपयोगिता ४६
६ महर्षि दयानन्द के ग्रन्थ और उनकी सार्थकता 55
७. आर्यसमाज के सिद्धान्त और उनकी उपयोगिता ६४
८. आर्यसमाज के सिद्धान्त और उनकी व्यावहारिकता ७१
९. वेदों की सार्थकता एवं उनके प्रचार के उपाय ७७
१०. आर्यसमाज और स्त्री-स्वातन्त्र्य ८५
११. वेद का संदेश और विश्व-शान्ति ९२
१२. पश्चिमी सभ्यता बनाम वेद-संस्कृति की रक्षा के उपाय ९७
१३. आर्यसमाज के नियम और उनके आचरण १०४
१४. वर्तमान जीवन की समस्या और आर्यसमाज का समाधानएं १०९
१५. अस्पृश्यता की समस्या और उसका निराकरण ११६
१६. आर्यसमाज और हिन्दी १२२
१७. आर्यसमाज और राष्ट्रीयता १२८
१८. महर्षि दयानन्द और वर्तमान परिस्थितियां १६४
१९. आर्यसमाज और उसका वर्तमान नेतृत्व १३९
२०. आर्यसमाज और मानव-कल्याण १४६

परिशिष्ट : कुछ पत्र १५३

१. बनारसीदास चतुर्वेदी का पत्र
२. वीरेन्द्र का पत्र
३. वि०सा० विद्यालंकार का पत्र
४. प्रो० वेदव्रत का पत्र
५. डॉ० रामनाथ वेदालंकार का पत्र
६. भगवतदत्त जिज्ञासु का पत्र
७. सत्यकेतु विद्यालंकार का पत्र

परिचर्चा में भाग लेने वाले विद्वानों के पते

श्री अमरनाथ कान्त, १३७ गज्जूकटरा, बड़ा बाजार शाहदरा दिल्ली-११००३२
श्री अक्षयकुमार जैन, सी-४७ गुलमोहर पार्क, नई दिल्ली-११००४९
प्रि० ओमप्रकाश ४५-ए/३ पंजाबी बाग नई दिल्ली-११००२६
डॉ० कमल किशोर गोयनका ए-98 अशोक विहार फ़ेज़-I दिल्ली-52
श्री कैलाशनाथ सिंह, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ-२२६००१
प्रो० कृष्णलाल-ई-सरस्वती विहार, दिल्ली-११००३४
श्री जगतराम आर्य IX/६६३५ प्रेमगली, गांधीनगर, दिल्ली-११००३१
श्री दीवान कौल, दिल्ली
श्री देवेन्द्र आर्य, पो० सरायतरीन जिला मुरादाबाद उ०प्र०
डॉ० दु:खन राम, एग्जीबिशन रोड, पटना-८००००१
डॉ० धर्मपाल ए/एच-१६ शालीमार बाग, दिल्ली-११००५२
डॉ० धर्मेन्द्र गुप्त २७४, राजधानी एन्क्लेव, शकूर बस्ती दिल्ली-११००३४
प्रो० प्रभुशूर आर्य आर्यसमाज दयानन्द मार्ग, जम्मू-१८०००३४
डॉ० प्रशान्त कुमार वेदालंकार-७/२ रूपनगर, दिल्ली-११०००७
श्री प्रह्लाद दत्त वैद्य ३३ डिप्टीगंज सदरबाजार दिल्ली-११०००६
श्री प्रेमनाथ चड्ढा-१२, गाँधीस्क्वेयर मल्कागंज, दिल्ली-११०००७
श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, पो०फीरोजाबाद; उत्तरप्रदेश
श्री बिहारीलाल शास्त्री, पो० बरेली, उत्तरप्रदेश
श्री भगवद्दत्त जिज्ञासु-बहालगढ़, सोनीपत, हरियाणा-१३००२१
श्री भगवान चैतन्य २७१२-एस-२, सुन्दरनगर (हि. प्र.)-१७४४०२
डॉ० महाश्वेता चतुर्वेदी, आर्यकन्यागुरुकुल, हाथरस, उ. प्र.
श्री मुल्कराज भल्ला, १७८० हरध्यानसिंह रोड़ करोल बाग, दिल्ली-११०००५
डॉ० यशपाल वैद ८५ के/२०३ जनता नगर सिविल लाइन्स अम्बाला शहर-१३४००३

श्री रमेशचन्द्र ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ-१२६००१
डॉ० रामनाथ वेदालंकार ८०, वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर, सहारनपुर-२४०४०७
स्वामी विद्यानन्द सरस्वती डी-१४/१६ मॉडल टाउन दिल्ली-११०००६
कु० विद्यावती आनन्द एन-६६ पंचशील पार्क नई दिल्ली-११००१७
श्री विद्यासागर विद्यालंकार ए-८/४२ राणाप्रताप बाग दिल्ली-११००७
श्री वीरेन्द्र नेहरु गार्डन, रोड़, जालंधर शहर-४
डॉ. वेदप्रताप वैदिक ए-१६ प्रेस एन्क्लेव नई दिल्ली-११००१७
प्रो० वेदव्रत ४ चमेलियन रोड़, दिल्ली-११०००६
आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री ४१ जयेश कालोनी फतेहगंज बड़ौदा, ३६०००१
डाँ० सत्यकेतु विद्यालंकार ए-१/३२ सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-११००२६
डाँ० सहदेव वर्मा, ८७ ग्रीनपार्क, पानीपत-१३२१०३
श्री सुदर्शनदेव, शाहपुराधीश, रैयतिया बाग, शाहपुरा, राजस्थान
श्री हरकिशन सिंह मलिक सी-४, सी सी कालोनी, दिल्ली-११०००७

१

स्वामी दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी तथा आपके अनुभव

प्रश्न

आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी देश-विदेश में मनाई जा रही है। इस अवसर पर आप कैसा अनुभव कर रहे हैं ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

मेरे पितामह आर्यसमाजी थे तथा मेरा प्रारम्भिक शिक्षण भी डी. ए. वी. स्कूल में हुआ। अत: मेरी आर्यसमाज तथा स्वामी दयानन्द जी की निर्वाण-शताब्दी पर विशेष रुचि होना स्वाभाविक है।

अमरनाथ कांत

मानव मात्र में उत्थान ज्ञान-विज्ञान तथा साहित्य जागृति और विश्व के राष्ट्रों में चेतना।

प्रो० कैलाशनाथ सिह

आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार को नवीन उत्साह तथा शक्ति के साथ वैज्ञानिक आधार पर प्रारम्भ किया जाये तो ऋषि दयानन्द के बताये मार्गों पर चलने से देश-विदेश में भटकती मानवता को दिशा-निर्देश मिलेगा।

प्रो. कृष्णलाल

आर्यसमाज के क्षेत्र में किसी बड़े उत्सव की चहल-पहल, चर्चा जैसा व्यक्तिगत रूप से कोई विशेष बात नहीं।

जगतराम आर्य

गुरु-दक्षिणा के समय महर्षि ने जिस प्रकार अपने गुरु के चरणों में बैठकर गुरु की इच्छा-अनुसार प्रतिज्ञा की थी कि भारत में वेदों का पुन: प्रचार एवं प्रसार

करूंगा, भारत में प्रचलित रूढ़िवाद और कुरीतियां समाप्त करूंगा, भारत के लोगों में जो अन्ध-श्रद्धा और अन्ध-विश्वास का जाल बिछा हुआ है इसको समूल नष्ट करके छोड़ूंगा। इसी प्रकार हम अपने गुरु की निर्वाण-शताब्दी पर श्रद्धांजलि के रूप में प्रतिज्ञा करें। निर्वाण-शताब्दी के अवसर पर आर्य-जनों को ऋषि के मिशन को पूरा करने के लिए उत्साह और स्फूर्ति का अनुभव करना चाहिए।

डॉ. दुखनराम

आर्यसमाज देश-विदेश में फलता-फूलता दृष्टिगोचर हो रहा है।

देवेन्द्र आर्य

महर्षि दयानन्द निर्वाण-शताब्दी मनाना तो परमावश्यक है, परन्तु मुख्य लक्ष्य महर्षि के सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार होना चाहिए जिसके लिए महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना की थी, गुरुड़म की गंध लेशमात्र भी नहीं आनी चाहिए। महर्षि गुरुड़म के महान् विरोधी थे, अन्यथा अन्य मतावलम्बियों के समान हमें भी समझा जायेगा। हमें वैदिकधर्मी सिद्ध करने का प्रयत्न करना है।

धर्मेन्द्र गुप्त

स्वामी दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी मनाई जा रही है। मुझे लग रहा है कि यह मात्र एक परम्परा का निर्वाह किया जा रहा है और इस शोरगुल से कुछ लोग आर्यसमाज के नेता कहलाने का अवसर जुटाये हुए हैं। मेरे लिए यह दुःखद स्थिति है कि हम दयानन्द जी के सौ साल बाद अधिक प्रकाश पाने के बजाय और अधिक अन्धकार में घिर गये हैं।

प्रताप सहगल

स्वामी दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी के मनाये जाने में मेरा कोई इन्वाल्वमेंट नहीं है। इसके प्रति स्वाभाविक उदासीनता है।

प्रो. प्रभुशूर आर्य

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती की निर्वाण-शताब्दी देश-विदेश में मनाई जा रही है और सबसे बड़ा आयोजन अजमेर में ६ नवम्बर, १९८३ को होगा। यह हार्दिक प्रसन्नता व आह्लाद का विषय है, परन्तु मेरे विचार में इसे बलिदान-शताब्दी के रूप में मनाते तो अधिक उचित लगता। आर्यसमाज में बलिदानों की परम्परा महर्षि दयानन्द सरस्वती से ही आरम्भ होती है, क्योंकि उन्होंने एक-दो बार नहीं अपितु सत्रह बार विष-पान किया था। अनेक बार अन्य प्रकार के षड्यन्त्रों से भी उनकी जीवन-लीला समाप्त करने का यत्न किया गया था। जब हितैषियों ने ऋषि को जोधपुर जाने से रोका और मृत्यु का भय दर्शाया तो ऋषि ने निर्भीकता से उत्तर दिया था कि वह जोधपुर अवश्य जायेंगे, चाहे वहां लोग उनकी उंगलियों की बत्तियां बनाकर जला डालें। अन्ततः उसी यात्रा में अंग्रेज़ों के षड्यन्त्र से आपका बलिदान हो गया। महर्षि दयानन्द ने महर्षियों के जन्मदिवस मनाने की प्रेरणा

दी थी और मृत्यु-दिवस मनाने का निषेध किया था। अगर हम निर्वाण-दिवस के रूप में बलिदान-दिवस मनाते हैं तो उनका अपमान है। अतः भविष्य में इसका रूप बलिदान-दिवस का हो तो अति उचित होगा।

प्रेमनाथ

जो देश-विदेश में ऋषि दयानन्द निर्वाण-शताब्दी मनाई जा रही है वह, ऋषि दयानन्द के महान् उपकारों के परिणामस्वरूप है और लोगों में वेद, वैदिक धर्म व ईश्वर में बढ़ती श्रद्धा की भी सूचक है, परन्तु दुःख है कि कहीं भी सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में नहीं मनाई जा रही। अजमेर में जो शताब्दी मनाई जा रही है उसमें भी सार्वदेशिक सभा निबल हो रही है। समिति का अध्यक्ष सार्वदेशिक सभा का प्रधान ही होना चाहिए था।

डॉ. प्रशान्तकुमार

मैं अनुभव करता हूँ कि आर्यसमाज के रचनात्मक आन्दोलन जो देश व विश्व के हित के लिए अनिवार्य हैं, बन्द हो गये हैं। निर्वाण-शताब्दी में हमें अपने प्रमाद को समाप्त करने की प्रेरणा मिली है।

प्रह्लाद दत्त वैद्य

निर्वाण-शताब्दी को सार्थक बनाने में गत १०० वर्ष के इतिहास पर गहरी दृष्टि से उन सिद्धान्तों, उपदेशों और आदेशों को, जिनकी ऋषि दयानन्द जी महाराज ने स्वरचित ग्रन्थों अथवा उपदेशों द्वारा जनता के मानसिक पटल पर छाप डाली थी, उन को पुनः सक्रिय रूप से कार्यक्रम में लाने की आवश्यकता है। कितना रचनात्मक कार्य किया और आर्यसमाज के दस नियम पालन में उनकी पूर्त्यर्थ हम कितना कर सके हैं और जो शेष हैं, उसके लिए क्या योजना विचारणीय है। मैं समझता हूँ कि इस प्रसंग में हम बहुत थोड़ा चले हैं।

पं. बिहारीलाल शास्त्री

शताब्दी उपलक्ष्य में मेरी सम्मति—हम लोग हिन्दू और मुसलमानों का उपहास किया करते थे। उनके मेले, स्वांग, तमाशे तथा उत्सवों के कारण आज हम भी ठोस कामों को भूलकर, दिखावट की दुनिया में जा बैठे हैं।

भगवान चैतन्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की निर्वाण-शताब्दी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मनाई जा रही है। मेरे हृदय में व्यक्तिगत रूप से अपार उत्साह है। सपत्नीक अधिक से अधिक लोगों को वहां पहुंचने के लिए प्रेरित कर रहा हूँ (विशेषकर युवकों को), क्योंकि यह लोगों को आर्यसमाज के विशाल संगठन, ज्ञान-गरिमा एवं महर्षि जी के अगणित उपकारों से परिचित करवाने का एक स्वर्णिम अवसर है। मैं स्वयं भी अपने हृदय में एक नवीन स्फूर्ति एवं प्रेरणा अनुभव कर रहा हूँ तथा भविष्य के लिए आर्य-

समाज के कार्य को और अधिक गति देने के लिए स्वयं को भीतर ही भीतर तैयार कर रहा हूँ।

डॉ. भवानीलाल भारतीय

निर्वाण-शताब्दी के आयोजन औपचारिकता के निर्वाह के रूप में ही हो रहे हैं। आर्यसमाज न तो अपनी वर्तमान स्थिति पर सोचने के लिए ही तत्पर है और न भविष्य के कार्यक्रमों की रूपरेखा बनाने के लिए ही उत्सुक है। जुलूस, सम्मेलन तथा लोगों के जमघट तक ही ये आयोजन सीमित हैं।

मदनगोपाल खोसला

अत्यन्त हर्ष का विषय है, ऐसे समारोह होने चाहिए।

डॉ. मण्डन मिश्र

यह निर्वाण-शताब्दी वर्ष हम सबके लिए प्रेरणादायक है। ऐसा मैं अनुभव कर रहा हूँ।

डॉ. (श्रीमती) महाश्वेता चतुर्वेदी

आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती की निर्वाण-शताब्दी पर हम सभी प्रसन्नता का अनुभव कर रहे हैं। तत्सम्वन्धित क्रियात्मक विचारों से ही मानव-कल्याण सम्भव है। कोरे आदर्श मिथ्या हैं।

मुल्कराज भल्ला

यह बहुत अच्छा हो रहा है। इससे आर्यसमाज का मान और प्रभाव बढ़ेगा।

यशपाल वैद

आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी देश-विदेश में मनाये जाने पर सुख की अनुभूति हो रही है। यह एक सुखद पर्व है जिसमें मानव-हित की कल्पना को सार्थक रूप में देखने की लालसा पूरी हो सकती है।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार

महर्षि दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी मनाने के लिए समस्त आर्य जनता में उत्साह एवं हर्ष व्याप्त है। सब जगह जोरों से तैयारियां चल रही हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि अजमेर में ३-६ नवम्बर तक कुम्भ का मेला लगेगा। यह शक्ति-प्रदर्शन का युग है। अत: ऐसे सम्मेलन, शताब्दियां भी आवश्यक हैं। मैं इस अवसर पर अतीव हर्ष एवं उत्साह का अनुभव कर रहा हूँ।

राजकुमार कोहली

आर्यसजाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी देश-विदेश में मनाई जा रही है, यह जानकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है, क्योंकि यह इस बात

का संकेत है कि स्वामी दयानन्द की विचारधारा देश-विदेश में फैल चुकी है।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

महर्षि दयानन्द जी की निर्वाण-शताब्दी के मनाये जाने की खबर से हार्दिक प्रसन्नता होती है। लगता है कि आज जबकि सारे काम स्वार्थपरता के कारण हो रहे हैं और केवल स्वार्थ सिद्ध करने वालों की पूजा हो रही है। महर्षि दयानन्द का याद किया जाना देश के अच्छे स्वास्थ्य का परिचायक है!

वैद्यनाथ शास्त्री

महर्षि की निर्वाण-शताब्दी देश-देशान्तर में मनाई जा रही है यह तो ठीक ही है। महर्षि के प्रति जितनी श्रद्धा व्यक्त की जाय थोड़ी ही होगी। उनकी निर्वाण-शताब्दी का जितना महत्व है, उत्साह का उतना वातावरण नहीं है और पूर्व से ही यह बनाया भी नहीं गया है।

सत्यकेतु विद्यालंकार

महर्षि दयानन्द सरस्वती की निर्वाण-शताब्दी के महोत्सव के अवसर पर जो अनुभूति मुझे हो रही है, उसे तीन शब्दों में प्रकट किया जा सकता है—उमंग, उल्लास और स्फूर्ति।

सत्यदेव विद्यालंकार

आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द की निर्वाण-शताब्दी पर स्वभावतः एक उमंग और उल्लास अनुभव कर रहा हूँ।

विद्यानंद सरस्वती

महर्षि दयानन्द ने 'सत्यार्थप्रकाश' में लिखा था—"उत्सवादि को मेले का रूप देना हमें अच्छा नहीं मालूम देता। इससे मनुष्य की बुद्धि बहिर्मुखी हो जाती है और धन भी अधिक व्यय होता है।" शताब्दी के नाम पर देश-विदेश में मेले लग रहे हैं। परिणाम वही होगा जिसकी ओर महर्षि पहले संकेत ही नहीं, स्पष्ट निर्देश कर गये हैं। प्रत्येक शताब्दी-समारोह आर्य-समाज को २० वर्ष पीछे धकेल देता है। निर्वाण शताब्दी समारोह से आर्य-समाज के संगठन को बहुत बड़ी हानि पहुंचेगी, प्रचार कार्य में भी बाधा पड़ेगी।

कु. विद्यावती आनन्द

मैं इस अवसर पर महर्षि दयानन्द के उपकारों को याद करके प्रेरित और उत्साहित अनुभव कर रही हूं। आर्य-समाजी होने के नाते मुझे कुछ, करना चाहिए। नये जीवन का आरम्भ करना चाहिए—अपने लिए आर्य-समाज के लिए और देश के लिए।

डॉ. सहदेव वर्मा

स्वभावतः हार्दिक उल्लास का अनुभव हो रहा है। एक युग-प्रवर्तक महापुरुष की निर्वाण-शताब्दी पर जिसने मात्र समय का पक्ष-पोषण करते हुए जीवन-दीप को ईश्वरीय धारा में प्रवाहित कर दिया, हर्ष होना ही चाहिए।

सुदर्शन देव

हर आर्यसमाजी की तरह मैं भी एक महान् तथा सर्वोत्तम धार्मिक संगठन का सदस्य होने पर गर्व अनुभव करता हूँ। मुझे इस संगठन के प्रवर्तक के विश्व के महापुरुषों में सर्वाधिक ज्ञानी, योग्य एवं निर्लिप्त होने पर गर्व की अनुभूति होती है। उसी की निर्वाण-शताब्दी मुझ को महत्ता प्रदान करती है।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्त

यह आर्यसमाज के लिए आत्म-चिन्तन और आगे बढ़ने की योजनाएं बनाने और क्रियान्वित करने का सुअवसर है, परन्तु प्रतीत होता है कि ये शताब्दी समारोह अन्य विशाल मेलों के समान परिपाटी मात्र रहेंगे तथा धन एकत्रित करने और कुछ व्यक्तियों आदि के विज्ञापन, निर्जीव भवन आदि के निर्माण तक सीमित रह जाएंगे। विशेष ठोस कार्य करने की ओर तद्विषयक चिन्तन की हमारी प्रवृत्ति लुप्तप्राय है।

हरिकिशन मलिक

हर्ष, शोक, आशा, निराशा के मिश्रित भाव हैं। हर्ष तथा गर्व इसलिए कि परतन्त्रता की विकट परिस्थितियों में आर्यसमाज की पिछली पीढ़ियों ने जो महान कार्य कर दिखाया वह अनुपम है। शोक इसलिए कि स्वतन्त्रता-प्राप्ति से लेकर अब तक आर्यसमाज की साख निरन्तर गिरती जा रही है। किसी समय ब्रिटिश शासकों की नींद हराम करा देने वाले आर्यसमाज में आज इतनी शक्ति नहीं कि अपनी स्वदेशी सरकार से देश-हित की अनेक मांगें पूरी करवा सके। आशा इसलिए है कि महर्षि के ग्रन्थों और आर्यसमाज के सिद्धान्तों में वह जादू है जो पाठक को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। निराशा इसलिए है कि आज के अनेक आर्य नेताओं ने ही इन ग्रन्थों का स्वाध्याय करना छोड़ दिया है और वे आर्यसमाज के सिद्धान्तों के अनुसार आचरण नहीं करते। फिर भी निराशा से आशा बलीयसी है। परिस्थितियां ऐसी बनती जा रही हैं कि देश के नेताओं को झख मारकर महर्षि की शिक्षाओं का पुनरावलोकन करना पड़ेगा।

२

आर्यसमाज के स्मारक तथा सुधार की सम्भावनाएं

प्रश्न

महर्षि दयानन्द सरस्वती का जन्म टंकारा में हुआ, शिक्षा-दीक्षा मथुरा में एवं निर्वाण अजमेर में। इन तीनों स्थानों पर महर्षि के स्मारकों का निर्माण हुआ है। क्या आप इन स्मारकों की वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट हैं अथवा चाहते हैं कि इन स्थलों पर कुछ ऐसी गतिविधियां भी प्रारम्भ की जायें जिनसे आगामी पीढ़ियां प्रेरणा ले सकें और आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में सहायता मिल सके ? इस सम्बन्ध में आपके क्या सुझाव हैं ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

स्वामी जी से सम्बन्धित स्थानों पर इस प्रकार की गतिविधियां प्रारम्भ हों तो अच्छा है, जिनसे स्वामीजी के प्रगतिशील विचारों से सर्वसाधारण प्रेरणा ले सकें।

अमरकान्त

इन तीनों स्थानों पर विशाल भव्य आदर्श शिक्षा-स्थान (गुरुकुल) होने चाहिएं तथा उसमें प्रत्येक स्थल पर स्तूप व पत्थर पर वेद मन्त्र; नीचे ऋषि द्वारा शब्दार्थ, भावार्थ, टीका आदि अंकित होने चाहिए, जिससे दर्शनार्थी का मन लुभावे और अपनी सन्तान को शिक्षार्थ तुरन्त भेज देवे।

प्रो० कैलाश नाथ सिंह

तीनों स्मारकों का पृथक् अस्तित्व है। वर्तमान स्थिति राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटकों, अनुसंधानकर्ताओं एवं विचारशील जनों को आकृष्ट करने में अक्षम है। उच्चस्तरीय विद्वानों का आयोग गठित करके इन स्मारकों की विकास-दशा पर सुझाव लिये जायें और इन्हें राष्ट्र के प्रमुख राष्ट्रीय स्मारकों (National Monum-

ents) के स्तर पर लाया जाये। महर्षि दयानन्द की दीक्षा-स्थली गुरु विरजानन्द कुटी (गुरुधाम) मथुरा में आर्य प्रतिनिधिसभा उत्तरप्रदेश ने भव्य पंचमंजिला भवन निर्मित कराया है जो दर्शनीय है। यहां वैदिक शोध-संस्थान खोलने पर विचार किया जा रहा है।

प्रो. कृष्णलाल

मैं इन तीनों ही स्थानों की वर्तमान स्थिति से अनभिज्ञ हूं, परन्तु निश्चित ही इन स्थलों पर वैदिक पुस्तकालय, वैदिक अध्ययन-केन्द्र और आयुर्वेद तथा होम्योपैथिक चिकित्सा-केन्द्र तथा प्रशिक्षण-केन्द्र स्थापित किये जाने चाहिएं।

जगतराम आर्य

महर्षि के स्मारक के रूप में टंकारा में एक विद्यालय चल रहा है, जिस पर लाखों रुपया खर्च होता है। वहां से शिक्षा-दीक्षा पाकर जो बाहर निकलते हैं वे आर्यसमाजों में पुरोहित बनकर पेट-पूजा करते हैं। उनमें योग्यता नहीं और न ही वे ऋषिभक्त होते हैं। आर्यसमाज के प्रति भी श्रद्धा-आस्था नहीं रखते, यह मेरा निजी अनुभव है।

अजमेर में परोपकारिणी सभा का काम भी सन्तोषजनक नहीं है। चारों वेद तथा ऋषिकृत अन्य ग्रन्थ सुन्दर रूप में प्रकाशित करके सस्ते में देने चाहिए। ऐसा नहीं है। व्यवस्था भी सन्तोषजनक नहीं है। ऋषि के ग्रन्थों का प्रचार और प्रसार नहीं हो रहा है।

मथुरा में गुरुकुल वृन्दावन है। उसने कितने स्नातक दिये हैं जो वैदिक मिशनरी के रूप में काम कर रहे हों? महात्मा ईश्वरीप्रसाद में जितनी शक्ति है, मथुरा में आर्य समाज का प्रचार कर रहे हैं।

तीनों स्थानों में स्मारक के रूप में आर्यसमाज का रचनात्मक कार्य होना चाहिए। इसके अतिरिक्त ऐसे विद्यालय हों कि वहां से शिक्षा-दीक्षा पाकर आर्यसमाज के शास्त्रार्थ-महारथी बनकर निकलें और पं० लेखराम आर्य मुसाफिर के स्वप्नों को साकार करें।

डॉ. दुखनराम

टंकारा, मथुरा और अजमेर इन तीनों स्थानों में विशाल एवं भव्य स्मारक होने चाहिएं जिससे विदेशियों एवं देशवासियों को पीढ़ी दर पीढ़ी प्रेरणा मिल सके तथा आर्य समाज के लेखन-कार्य पुनः पूर्ववत् बलशाली हो जाएं।

देवेन्द्र आर्य

महर्षि के जन्म-स्थान टंकारा, दीक्षा-स्थान मथुरा और निर्वाण-स्थान अजमेर में भव्य भवन बनाये जायें। उनमें वैदिक पुस्तकालयों की स्थापना की जाय, जिससे सम्पूर्ण वैदिक साहित्य (वेद, उपवेद, उपनिषद्, ब्राह्मण ग्रंथ, आरण्यक, गृह्यसूत्र, स्मृ-

तियां, निरुक्त, उपांग आदि) व उनके भाष्य जो भी उपलब्ध हों व अन्य मतावलम्बियों की मानवीय पुस्तकें आदि ग्रंथ हों, रखे जायें। और इनके अनुसन्धानार्थ वैदिक विद्वानों को नियुक्त किया जाय। संन्यासी जो इस कार्य के लिए योग्य हों तो अत्युत्तम है।

धर्मेन्द्र गुप्त

टंकारा, मथुरा, अजमेर या दूसरी जगह के स्मारकों की वर्तमान स्थिति से मेरा असन्तुष्ट होना स्वाभाविक है, क्योंकि स्वामीजी ने जिस विद्रोह और कठिन मार्ग को अपनाया था उससे विपरीत आज आर्यसमाज के कर्णधार सुविधा की स्थिति में अपने को स्थापित किए हुए हैं। इस समय आर्यसमाज प्रतिपक्ष की भूमिका नहीं निभा रहा है, न ही आर्यसमाज से ऐसी कोई प्रेरणा मिल रही है जिससे आज का नवयुवक समाज को बदल बेने का साहस करे। आर्यसमाज के आस-पास की स्थिति जड़ हो गई है, अतः स्मारक केवल ईंट-गारे के ढांचे मात्र रह गये हैं।

प्रताप सहगल

मैं महर्षि के स्मारकों से परिचित नहीं हूं, उन्हें मैंने देखा भी नहीं है। तब उनकी स्थिति से सन्तुष्ट या असन्तुष्ट होने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। हां, ऐसी गतिविधियां जरूर प्रारम्भ की जानी चाहिए, जिससे सामाजिक दृष्टि से कोई सार्थक कार्य हो सके। जैसे जातिवाद के खतरों से नवयुवकों को परिचित कराना, उन्हें अपनी सांस्कृतिक विरासत के प्रति सचेत करना, बिना दहेज के विवाह के लिए सभी वर्गों को प्रेरित करना या ऐसी ही और कई गतिविधियां, चर्चाएं, सेमिनार या शपथ-समारोह आयोजित किए जा सकते हैं। केवल इन्हीं स्थलों पर ही क्यों, यह काम आर्यसमाज चाहे तो कहीं भी कर सकता है।

प्रो. प्रभुशूर आर्य

महर्षि दयानन्द के जन्म-स्थान टंकारा, शिक्षा-दीक्षास्थली मथुरा तथा निर्वाणस्थली अजमेर में स्मारकों का निर्माण हो चुका है, परन्तु धीरे-धीरे ये स्थान ऐतिहासिक महत्त्व के न होकर मात्र श्रद्धा के द्योतक बन गये हैं। ऐसे स्थलों पर टंकारा की भांति उपदेशक विद्यालय आदि कोई ठोस कार्य करनेवाला संस्थान खुलना चाहिए, जिस से आर्यसमाज की विचारधारा के प्रचार-प्रसार में सहायता मिले। युवा वर्ग ठोस कार्य से ही आकृष्ट हो सकता है और जो समाज युवा शक्ति का सदुपयोग कर सकता है, वही जीवित है और प्रगति कर सकता है। आर्यसमाज को आज फिर पं० लेखराम, महात्मा हंसराज, स्वामी श्रद्धानन्द जैसे समर्पित युवकों की आवश्यकता है।

प्रेमनाथ

अधिक स्मारक बनाने व्यर्थ हैं जबकि पूर्व से बने हुए बड़े-बड़े स्मारकों (यथा गुरुकुल कांगड़ी, डी० ए० वी० कॉलेज आदि) की व्यवस्था बहुत बिगड़ चुकी है। उनको तो हमें पहले सुधारना चाहिए।

डॉ. प्रशान्त कुमार

महर्षि दयानन्द का सम्बन्ध क्योंकि टंकारा, मथुरा और अजमेर से रहा है, अतः वहां स्मारक स्थापित किये जायें। यह विचार बेतुका है एवं महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों के विरुद्ध है। महर्षि दयानन्द समाज, राष्ट्र व विश्व में किसी क्रान्ति की अपेक्षा करते हैं। भौतिक स्मारकों का उनकी दृष्टि में कुछ भी महत्त्व नहीं।···पर यदि उनके अनुयायियों ने वहां कुछ काम आरम्भ किया है तो उनको सहयोग देकर उनके उद्देश्य को पूरा करने में हमें भी प्रयत्नशील होना चाहिए।

प्रह्लाददत्त वैद्य

कुछ बातें तो उपरोक्त प्रश्न के उत्तर से सम्बन्ध रखती हैं, परन्तु इन स्मारकों पर जितना ध्यान देने की आवश्यकता थी, उतना हम नहीं दे सके। शिक्षा-केन्द्र स्थापित हों, अर्थात् उनमें ऋषि दयानन्द जी द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों पर आचरण हो। कला-कौशल, यन्त्र आदि स्थापित हों अथवा छोटे-छोटे घरेलू धंधे जितने भी जहां सम्भव हों, उनका निर्माण हो। जैसे गौशाला, जिनमें दुधारू गायों का प्रबन्ध हो, इससे शुद्ध दूध-घी की पैदावार हो सके। तीनों स्थानों पर आर्यसमाज के नियमों का पालन सर्वात्मना हो। इन स्मारकों में उच्चकोटि के शिक्षाविद् सज्जनों द्वारा आयुर्वेदिक औषधियों का अनुसन्धान और निर्माण हो। यह सब महर्षि के स्मारक स्थानों पर हो। इन कामों से जनसम्पर्क बढ़ेगा, आर्यसमाज का प्रचार होगा, व किसी हद तक बेरोजगारी दूर होना सम्भव है।

पं. बिहारीलाल शास्त्री

महापुरुषों के जन्म-स्थानादि का कोई मूल्य नहीं। परशुराम कहां जन्मे, याज्ञवल्क्य का जन्म कहां हुआ? गौतम, कपिल, कणादादि के जन्म-स्थानों का पता हो या नहीं, उनके स्मारक तो उनके विचारग्रन्थ हैं। हमारा लक्ष्य ऋषि दयानन्द की विचार-धारा है। उनके द्वारा की गई देश और समाज के लिए सेवा है। आगामी पीढ़ियां प्रेरणा लें, इसके लिए उच्चकोटि के विचारपूर्ण ग्रन्थ और आदर्श जन-सेवा चाहिए।

भगवान चैतन्य

टंकारा, मथुरा तथा अजमेर तीनों स्थानों पर जो स्मारक बने हैं वे किसी भी रूप में सन्तोषप्रद नहीं हैं। ये तीनों ही स्थान देश-विदेश के लोगों के लिए एक विशेष आकर्षण का केन्द्र एवं महर्षि दयानन्द जी तथा प्रभुवाणी वेद का प्रचार-प्रसार करने वाले होने चाहिए। इसके लिए (१) टंकारा में तो आर्ष विद्वानों के संरक्षण में ऐसे उपदेशक एवं प्रचारक तैयार किए जायें जो अपना समूचा जीवन वैदिक विचारधारा को जन-जन तक पहुंचाने के लिए समर्पित करें। आज ऐसे संस्थानों का अति अभाव है। यदि कहीं ऐसे संस्थान कार्यरत हैं भी तो वे केवल पुरोहित ही तैयार कर पा रहे हैं, उच्चकोटि के विद्वान् नहीं! अंग्रेज़ी तथा हिन्दी एवं संस्कृत बल्कि अन्य भाषाओं में भी ऐसे विद्वान् तैयार किए जायें जो अपना समूचा जीवन देकर देश-देशान्तर में वैदिक

धर्म का शंखनाद कर सकें। त्यागी और तपस्वी एवं ज्ञान-गरिमा से मण्डित ऋषि के भिक्षु विधिवत् तैयार किए जायें तथा विधिवत् ही उन्हें उनकी विद्वत्ता आदि के आधार पर देश या विदेश में भेजा जाय। मथुरा में वेद एवं अन्य आर्ष ग्रन्थों के शोध कार्य के लिए एक विशाल संस्थान खोलने की आवश्यकता है, ताकि आज के सन्दर्भ में भी वेदों की गरिमा को आंका जा सके तथा उन्हें अधिक व्यावहारिक स्तर पर भी प्रस्तुत किया जा सके। इसी स्थान पर (इसके लिए वैसे दिल्ली भी चुनी जा सकती है) आर्य-समाज का एक बहुत बड़ा प्रकाशन संस्थान होना चाहिए, जो एक विशेष समिति के अन्तर्गत कार्य करे तथा वे ही पुस्तकें प्रकाशित की जा सकें, जिन्हें समिति अपनी स्वीकृति प्रदान करे। अंग्रेज़ी, हिन्दी, संस्कृत एवं अन्य भारतीय भाषाओं में सर्व साहित्य सुलभ हो। (३) अजमेर में योगसंस्थान खोलने की अति आवश्यकता है, जहां पर योग साधना आदि सिखाने की व्यवस्था हो। इस ओर आर्यसमाज ने बहुत कम ध्यान दिया है, जबकि आज लोगों को सही योग जीवनपद्धति की आवश्यकता अनुभव हो रही है। वर्तमान वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में अनेक अनुसंधान आदि किए जा सकते हैं। शारी-रिक एवं आत्मिक उन्नति के लिए ऐसे संस्थान की परम आवश्यकता है।

डॉ. भवानीलाल भारतीय

स्वामी जी के जीवन से सम्बन्धित तीनों स्थानों पर जो स्मारक रूप में कार्य चल रहा है, वह असन्तोषजनक है। समन्वित रूप से कोई योजना बनाकर टंकारा, मथुरा तथा अजमेर में सुनिश्चित कार्यक्रमों को पूरा किया जाना चाहिए।

मदनमोहन खोसला

स्थिति तीनों जगह निराशाजनक है। इन तीनों स्थानों पर भवनों का निर्माण होना चाहिए। वेदों के विशाल लेख होने चाहिए। स्वामी जी के जीवन पर्यन्त के प्रभाव-शाली चित्रों का संग्रह होना चाहिए। अजमेर में जो चित्र हैं वे प्रभावशाली नहीं हैं। सुन्दर यज्ञशाला हो जिससे लोग आकर्षित हों, जिसमें दोनों समय हवन, सन्ध्या आदि हों। वहां पर विद्वान् पण्डितों की नियुक्ति होनी चाहिए जो लोगों को वेद पढ़ायें। जो व्यक्ति बाहर के शहरों से भी आकर पढ़ना चाहें उनके ठहरने की व्यवस्था होनी चाहिए। छोटे बच्चों के लिए वैदिक-धर्म की शिक्षा के स्कूल होने चाहिए, जिसमें उनको संस्कृति का ज्ञान हो और बड़े होने पर वैदिक-धर्म का प्रचार कर सकें। यह कार्य भवन-निर्माण या उसके साथ ही साथ होने चाहिए।

डॉ. मण्डन मिश्र

टंकारा, मथुरा एवं अजमेर में महर्षि दयानन्द जी की स्मृति में तीन वैदिक विश्वविद्यालयों की स्थापना की जानी चाहिए, जिनमें प्राचीन परम्परा से अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था हो और विशेषकर वैदिक वाङ्मय पर शोध का प्रबन्ध हो।

मुलकराज भल्ला

टंकारा मैं गया नहीं, मथुरा में किसी स्मारक का मुझे पता नहीं, अजमेर में स्मारक नाममात्र को है। मेरे विचार में तीनों स्थानों पर बहुत बड़े स्मारक होने

चाहिए। टंकारा के विद्यालय का स्तर ऊंचा करना उचित है। उच्चकोटि के पुरोहित तैयार करने चाहिए। वहां पर हर साल उपदेशकों का रिफ्रेशर कोर्स हो तो अच्छे पुरोहित निकलेंगे। अजमेर में शताब्दी के बाद भिनाय कोठी स्मारक स्थापित किया जाय। वह ऐसा सुन्दर हो कि हर अजमेर जाने वाला उसे देखे, जैसा कि दिल्ली आया हुआ हर मनुष्य बिरला मन्दिर देखता है। मथुरा में हो सके तो अच्छा एजूकेशनल इंस्टीट्यूट बनाया जाए।

यशपाल वैद

महर्षि दयानन्द सरस्वती के जन्म, शिक्षा-दीक्षा और निर्वाण के स्थानों में स्मारकों की दशा से असंतुष्टि ही होती है, क्योंकि स्मारक-स्थल जहां होने चाहिएं (वहां स्थान विशेष) वहां न होकर कुछ आस-पास हैं। अवश्य ही इन स्थानों के स्मारकों पर ऐसे उद्बुद्ध करने वाले (समय-समय पर) उत्सव मनाये जायें तो जन-मानस में सद्भावना का ही संचार होगा।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार

टंकारा, मथुरा तथा अजमेर इन स्थानों पर महर्षि के स्मारकों का रूप अधिक सुदृढ़ तथा व्यापक होना चाहिए। तीनों स्थानों पर महर्षि की प्रस्तर-प्रतिमा (जैसी दिल्ली में स्वामी श्रद्धानन्द जी की है) तथा दयानन्द स्तूपों की स्थापना होनी चाहिए। स्तूपों पर महर्षि के जीवन की मुख्य घटनाएं एवं शिक्षाएं अंकित हों। मथुरा को प्रचार एवं प्रचारकों का ऐसा सशक्त गढ़ बनाया जाना चाहिए, जैसा कि मुसलमानों का केन्द्र देववन्द है। इसके लिए मथुरा में किसी उपदेशक विद्यालय की स्थापना भी की जा सकती है, किन्तु वह विद्यालय दूसरे उपदेशक विद्यालयों से अलग ढंग का होना चाहिए। वहां नौकरी, उपाधि, गृहस्थ से अलग रहने वाले आर्यसमाज के प्रचारार्थ दीक्षा-प्राप्त युवकों को ही प्रवेश दिया जाय, जैसा कि रामकृष्ण मिशन में पढ़े-लिखे बी०ए०-एम०ए० पास युवकों को दीक्षित कर बैवूर मठ में कई वर्षों तक मिशन के प्रचार की ट्रेनिंग दी जाती है। वहां से निकल कर वे आयुपर्यन्त संन्यासी प्रचारक के रूप में कार्य करते हैं। दूसरे उपदेशक विद्यालय आज उक्त कारणों के अभाव में अपने उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सके। अजमेर में स्वामीजी का समस्त साहित्यिक उत्तराधिकार एवं उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा है। समस्त साहित्य के प्रचार-प्रसार का कार्य परोपकारिणी को करना चाहिए। सार्वदेशिक को तो देश-विदेश में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार की विशाल योजना बनानी चाहिए। जबकि महर्षि के साहित्यिक प्रचार में भी इसे शक्ति लगानी पड़ती है। महर्षि के प्रकाशित तथा अप्रकाशित सभी साहित्य पर कार्य अपेक्षित है। हरिद्वार में एक बृहत् स्तूप का निर्माण हो। इसी प्रकार काशी, टंकारा, मथुरा तथा अजमेर में भी भव्य स्तूपों का निर्माण हो।

राजकुमार कोहली

टंकारा, मथुरा तथा अजमेर में ऐसे भव्य स्मारक बनने चाहिए जो आर्यसमाज को न मानने वालों को भी आकृष्ट कर सकें। इससे आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार-

प्रसार में अवश्य सहायता मिलेगी।

प्रो० रामगोपाल

कुछ वर्ष पूर्व मुझे मथुरा के विरजानन्द आश्रम में भाषण देने के लिए आमन्त्रित किया गया था। वहां की व्यवस्था देखकर मुझे बड़ा खेद हुआ। मथुरा में स्वामी दयानन्द सरस्वती के शिक्षा-स्थान पर अच्छे स्मारक के निर्माण की अत्यन्त आवश्यकता है और वहां पर वेदों के अध्ययन-अध्यापन की भी सन्तोषजनक व्यवस्था होनी चाहिए, जिससे आगामी पीढ़ियों को प्रेरणा मिल सके।

कु. विद्यावती आनन्द

इन स्मारकों की वर्तमान स्थिति से मैं संतुष्ट नहीं हूं। विदेशियों को तो क्या, अधिकतर देशवासियों को भी पता नहीं कि इन स्थानों पर महर्षि के स्मारक हैं। इन स्थलों पर ऐसी गतिविधियां आरम्भ की जानी चाहिए, जिनसे आज का जनमानस और आगामी पीढ़िया प्रेरणा ले सकें। इन स्मारकों में जीवन की चहल-पहल होनी चाहिए। विभिन्न भाषाओं में वेदों का सरल अनुवाद मिलना चाहिए। स्वामी दयानन्द द्वारा लिखित पुस्तकें व भाष्य उपलब्ध होने चाहिए। यज्ञ की महिमा का प्रचार होना चाहिए। स्वामी दयानन्द के जीवन के विभिन्न पहलुओं पर चित्र प्रदर्शनी होनी चाहिए। समय-समय पर यज्ञ का प्रवन्ध और आर्य साधु-संन्यासियों के समागम और प्रवचन होने चाहिए। आर्य साधु-संन्यासियों के निवास एवं भोजन का प्रवन्ध होना चाहिए। तात्पर्य यह है कि यह स्थल आर्य जनता के लिए तीर्थ-स्थल बन जायें। जो भी वहां जाये कुछ पाकर, प्रेरित होकर हृदय में श्रद्धा का सागर लेकर वापस लौटे।

विद्यानन्द सरस्वती

स्मारकों के नाम पर ईंट-पत्थरों के जो भवन खड़े हुए हैं वे सब निर्जीव हैं। मथुरा में स्थित स्मारक को व्याकरण की शिक्षा का ऐसा केन्द्र बनाया जाये कि विश्वभर में ऐसी ख्याति हो जाए कि संस्कृत व्याकरण का सूर्य मथुरा में निकलता है और उसी से विश्वभर को व्याकरण का प्रकाश मिलता है। टंकारा में अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक विद्यालय में देशान्तरों से आने वाले उच्च शिक्षा प्राप्त युवकों को शिक्षित किया जाय अथवा अपने देश के विद्वानों को संसार की भिन्न-भिन्न भाषाओं में पारंगत करके प्रचारार्थ आजीवन भिन्न-भिन्न देशों में भेजा जाय। जब तक ऐसा सम्भव न हो तब तक उसे 'ग्रामीण पुरोहित प्रशिक्षण विद्यालय' का नाम देकर चालू रखा जाय। अजमेर में केवल अनुसन्धान और उच्चकोटि के साहित्य (संसार की मुख्य भाषाओं में) के प्रकाशन की व्यवस्था हो।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

मैंने केवल अजमेर का स्मारक लगभग २५ वर्ष पहले देखा था। वहां जाकर श्रद्धा से विभोर हो जाना तो स्वाभाविक ही था, लेकिन ऐसा मुझे कुछ याद नहीं पड़ता कि जो उल्लेखनीय रूप से बहुत अच्छा लगा हो। शायद उसे फिर देखूं तो कुछ कह

सकूं। फिर भी अगर यह कहूं तो गलत नहीं होगा कि महर्षि के तीनों स्मारक ऐसे होने चाहिये कि वे देश में वैचारिक क्रांति के स्रोत वन सकें। तीनों स्मारकों में उपदेशक महाविद्यालय चलाए जा सकते हैं, आधुनिक गुरुकुल खोले जा सकते हैं, धर्मशास्त्रों, दर्शनशास्त्रों और समाजशास्त्रों पर शोध और अनुसन्धान केन्द्र भी बनाये जा सकते हैं। तीनों स्थानों से अलग-अलग प्रकार के सस्ते साहित्य के प्रकाशन-केन्द्र भी प्रारम्भ किये जा सकते हैं।

वैद्यनाथ शास्त्री

महर्षि के जितने स्मारक बनाये गये हैं, उनका वह कार्य तनिक भी संतोषजनक नहीं है। कोई गतिविधि कहीं पर भी अनुरूप व विधिवत् नहीं है। इनमें ऐसी गतिविधियां चालू की जानी चाहिए जिससे देश-देशान्तर के लोग प्रेरणा ले सकें और आर्यसमाज के सिद्धान्तों का प्रचार और प्रसार हो सके। हमारी आगे आने वाली पीढ़ी हमारी अकर्मण्यता और अव्यवस्था के लिए हमें कोसे नहीं। इन ट्रस्टों को सार्वदेशिक स्तर पर करना चाहिए, स्थानिक स्तर पर नहीं। एक ऐसी कमेटी सार्वदेशिक सभा के अन्तर्गत हो जिसमें देश-देशान्तर की प्रतिनिधि सभाओं के प्रधान व मन्त्री हों और कुछ विशेष व्यक्ति और विद्वान् सभा से मनोनीत हों। उस समिति के अधीन अन्य निर्देशन एवं व्यवस्था इनकी स्थानीय समिति कार्य करे। सबका संचालन एक ही जगह से हो। इनमें उपदेशक विद्यालय, वेद और संस्कृत विद्यालय, वैदिक साहित्य, जिनका महर्षि ने वर्णन किया है, उसके अध्ययन संस्थान, वैदिक शोध-संस्थान सार्वदशिक स्तर पर, महर्षि के सिद्धांतों के संरक्षण, प्रचारण और प्रसारण की व्यवस्था इन तीनों स्मारकों में की जाय। सब स्मारकों की व्यवस्था एक ही जगह नहीं, बल्कि तीनों स्थानों में बांट दी जाए।

सत्यदेव विद्यालंकार

मथुरा के स्मारक के बारे में मैं चाहता हूं कि वहां अधिक ध्यान दिया जाय और कोई निश्चित गतिविधियां वहां प्रोत्साहित की जायें। टंकारा ट्रस्ट जो कुछ टंकारा में कर रहा है वह प्रशंसनीय है। इस ट्रस्ट द्वारा जितना भी कार्य हो सके, उसे प्रोत्साहित करना चाहिए। अजमेर में स्वामी जी का प्रेस और परोपकारिणी सभा है। इन्हें अत्यधिक सजीव बनाने से ही कुछ साहित्य-सेवा हो सकेगी। शताब्दी समारोह के परिणामस्वरूप इन दोनों संस्थानों में प्रेरणात्मक भावनाएं पैदा करने का यत्न आवश्यक है।

डॉ. सहदेव वर्मा

सच तो यह है कि केवल स्तम्भ, कमरा या भव्य भवन-निर्माण से स्मारक बनाने की भावना की पूर्ति नहीं हो सकती। प्रथम दो स्थानों पर तो स्मारकों का होना न होना समान-सा ही है, अतः संतुष्ट होने का प्रश्न ही नहीं। अजमेर में कुछ गतिविधि अवश्य दृष्टिगोचर होती है, किन्तु स्तरीय कार्य वहां भी नहीं।

होना यह चाहिए कि तीनों ही स्थानों पर उच्चस्तरीय शोध-संस्थान स्थापित किए जाएं, जिनमें प्राचीन वाङ्मय, वैदिक साहित्य, ब्राह्मण ग्रन्थ, वेदांग, उपनिषद् आदि से लेकर रामायण-महाभारत तक खोज पूर्ण कार्य करके देश-विदेश में प्रामाणिक ढंग से उनका प्रचार-प्रसार किया जाय। मथुरा को इसका केन्द्र बनाया जा सकता है, जबकि यह स्थान सर्वथा उपेक्षित है। प्राच्य विद्या का नवीनता से सामंजस्य किया जाय।

सुदर्शन देव

स्मारक तो इन तीनों स्थानों पर बनने ही चाहिए। जो बन गये हैं वे उपयुक्त रूप में प्राणवान नहीं हैं। जब तक महर्षि दयानन्द के गौरव के अनुरूप नियन्त्रणकारी हलचलों, गतिविधियों का संचालन वहां से नहीं होता, तब तक ऋषि सम्बन्ध वाले इन तथा जोधपुर एवं अजमेर के स्मृति न्यासों की तरह उनकी हालत भी खस्ता रहेगी। वे स्थान स्मृति पूरक मात्र होंगे। जब आरम्भ में ही कोई संस्थान अड़ियल बच्चे की तरह रहता है तो आगे उससे किसी विशिष्ट उपलब्धि की आशा नहीं करनी चाहिए। इन स्थानों का ऋषि से सम्बन्धों के अनुरूप विकास होना चाहिए, तभी वे वास्तविक ऋषि स्मारक होंगे। जैसे टंकारा में बालकों, युवकों के उत्थान एवं संस्कार सम्बन्धी विभिन्न योजनाओं वाला विश्वविद्यालय हो, क्रीड़ा केन्द्र हो तथा उत्पादन एवं शिल्प सम्बन्धी चरित्र आधारित शिक्षण-प्रशिक्षण केन्द्र हों। समाज के कृषक, व्यापारी एवं श्रमिक वर्ग में व्याप्त अनैतिकता, अस्वास्थ्य एवम् आशंकापूर्ण भविष्य के विपरीत वह आदर्श प्रवाहक स्रोत सिद्ध हों। मथुरा में साहित्यिक, सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में क्रान्तिकारी मानदण्ड स्थापित करने वाले निर्माण एवं प्रचार केन्द्र हों। अजमेर में वानप्रस्थ, संन्यासी, उपदेशक वर्ग का केन्द्रीय संस्थान हो, जो आत्मकल्याण, अध्यातम, धर्म, मोक्ष आदि का मंथन-चिन्तन करे, साहित्य-निर्माण करे एवं धर्मान्तरण आदि रोकने तथा सच्चे वैदिक-धर्म के मर्म का प्रसार करे।

डॉ. सुधीरकुमार गुप्त

अब तक बने स्मारक निर्जीव ही हैं। उनका मुख्य योग कुछ मेले आदि करने तक सीमित है। वहां विशाल समृद्ध पुस्तकालय, शोध-संस्थान, उच्चस्तरीय वेदाध्ययनाध्यापन केन्द्र, जनाभिरुचि और काल पर विजय पाने वाले साहित्य का निर्माण, बालकों और युवकों में ईसाइयों आदि के समान निःशुल्क पाठ-वितरण आदि कार्य किए जा सकते हैं। आर्यसमाज को वैदिक साहित्य को अपने विचारों के अनुकूल प्रस्तुत करना है, पर इसके लिए जो उदार दृष्टि और योग्यता आदि अपेक्षित हैं, उनका अब हम में अभाव-सा व्याप्त हो गया है।

हरकिशन मालिक

मेरी दृष्टि में महर्षि के स्मारकों की स्थिति सन्तोषजनक नहीं है। इनमें पौराणिक श्रद्धा का पुट अधिक है, वैदिक श्रद्धा का कम। मत्था टेकने की भावना अभी अनेक आर्यों के हृदयों से गई नहीं। महर्षि का वास्तविक स्मारक तो वही कहला

सकता है जिसमें अन्य महर्षियों का निर्माण करने की क्षमता हो और वह कोई आर्य गुरुकुल ही हो सकता है। मथुरा, अजमेर और टंकारा के स्मारक केवल इसलिए बनाए गये थे कि उन स्थानों का महर्षि के जीवन से सम्बन्ध है। वहां आर्य जनता इस भावना से जाती है कि किसी प्रकार सम्भव हो तो दयानन्द के दर्शन कर लें, चर्म चक्षुओं से न सही, मानसिक चक्षुओं से ही सही। इसलिए इन स्मारकों का विकास भी इस ढंग से होना चाहिए कि वहां जाने वाला प्रत्येक व्यक्ति दयानन्द के मानसिक दर्शन की लालसा को पूरा कर सके और दयानन्द की शिक्षा का कुछ लाभ उठाकर घर लौटे। महर्षि को तीन कार्य अत्यन्त प्रिय थे—योग की शिक्षा, संस्कृत की उन्नति और वैदिक धर्म का मौखिक उपदेश। इन तीनों स्मारकों में तीन कार्य निरन्तर चलते रहने चाहिए—(१) आर्ष पद्धति से योग की शिक्षा, (२) पण्डित ब्रह्मदत्त जिज्ञासु की रीति से प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए संस्कृत शिक्षा, और (३) महर्षिकृत ग्रन्थों की व्याख्या रूपी उपदेश। इन स्मारकों पर वर्ष भर में एक-दो दिन का मेला रख देने के बदले वर्ष भर देश के कोने-कोने से यथाक्रम आर्य गृहिणियों की टोलियां भेजी जायें। प्रत्येक टोली महीना डेढ़ महीना ठहर कर योग सीखे, संस्कृत पढ़े और मौखिक उपदेश सुने। इस कार्यक्रम को अपनाने से भारत के घर-घर में वैदिक ज्ञान का प्रकाश हो सकेगा और इस प्रक्रिया से उपदेशक स्वयमेव तैयार होते चलेंगे। मथुरा के स्मारक में पूरी अष्टाध्यायी तथा सम्पूर्ण महाभाष्य पढ़ाने का भी विशेष प्रबन्ध रहना चाहिए जिससे कि प्रौढ़ जिज्ञासु अपनी संस्कृत विद्या को प्राप्त करने की भूख मिटा सकें। इस प्रकार से यह स्मारक केवल दर्शनीय स्थान न रहकर वैदिक सिद्धान्तों के प्रसार का प्रबल माध्यम बन सकते हैं। अजमेर में परोपकारिणी सभा का कार्यालय है। उस सभा का कार्य अपना अलग है। मेरे उपरोक्त कथन से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

३

महर्षि दयानन्द के जीवन की घटनाएं तथा उनके उद्देश्यों की सफलता

प्रश्न

महर्षि दयानन्द के जीवन की दो प्रमुख घटनाएं हैं—शिवलिंग के ऊपर चूहे का चढ़ना, तथा चाचा व भगिनी की मृत्यु। इन घटनाओं के फलस्वरूप उनके जीवन का लक्ष्य ही बदल गया था। उन्होंने उसी दिन से मृत्यु को जानने और मृत्युञ्जय बनने की बात को मन में ठान लिया था। क्या महर्षि दयानन्द अपने उद्देश्य में सफल हो सके और अपनी विचारधारा फैलाकर जगत का कल्याण कर सके ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

महर्षि अपनी विचारधारा फैलाने में अत्यन्त सफल हुए।

अमरनाथ कांत

विश्व वन्दनीय महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती महाराज ने मृत्युञ्जय ही नहीं वरन् पूर्ण मृत्युञ्जय बनकर परम पिता परमात्मा की वेद रूपी वाणी का प्रचार-प्रसार किया है।

प्रो० कैलाशनाथ सिंह

महर्षि अपने उद्देश्य में सफल रहे। मोक्ष प्राप्त किया। अपने जिन अनुयायियों पर दायित्व सौंपा वह सफलता की ओर अग्रसर हैं। इन दोनों घटनाओं से महर्षि ने तर्क और सत्य की स्थापना की।

प्रो० कृष्णलाल

हां, वे अपने उद्देश्य में सफल हुए और अपनी विचारधारा फैलाकर बहुत कुछ जगत का कल्याण कर सके। विशेष रूप से भारत में महात्मा गांधी सदृश अनेक महापुरुषों ने प्रच्छन्न रूप से (उनका नाम लिए बिना) उनके मार्ग का अनुसरण किया

और भारतीय संविधान में अछूतोद्धार, स्त्री शिक्षा, राष्ट्रभाषा हिन्दी आदि अनेक बातें उनके विचारों से प्रेरित हैं, परन्तु बहुत अधिक किया जाना शेष है।

जगतराम आर्य

शिवलिंग के ऊपर चूहे का चढ़ना तथा चाचा और भगिनी की मृत्यु को देखकर ही ऋषि के जीवन ने नया मोड़ लिया। सच्चे शिव की तलाश और मृत्यु पर विजय पाने के लिए ही जीवन लगा दिया। अन्ततोगत्वा महर्षि अनेक कष्ट सहन करके अपने उद्देश्य में सफल हुए और उनकी विचारधारा ने एक विशेष आन्दोलन का १९४७ तक रूप धारण किये रखा। १९४७ के बाद जो उथल-पुथल हुई उसके फलस्वरूप और आपस की फूट कुछ कुर्सी की लोलुपता के कारण हम ऋषि के मिशन को आगे नहीं ले जा सके।

डॉ० दुखनराम

जड़ पूजा एवं मृत्यु की घटना दोनों से दो प्रकार के भाव ऋषि दयानन्द के हृदय में उत्पन्न हुए। सत्यकर्मों से सामाजिक उन्नति, नश्वरता से निराभिमानता का होना। इन दोनों कार्यों के प्रचार में देव दयानन्द ने पूर्ण सफलता प्राप्त की, जिससे सारे विश्व का कल्याण अब तक होता आ रहा है।

देवेन्द्र आर्य

मृत्युञ्जय तो हो ही गये थे, परन्तु हमारे दुर्भाग्य से वह न रहे। महर्षि के मन में जो जगत के कल्याण की कामना थी पूर्ण न हो सकी, उनकी कामना यजुः के प्रथम अध्याय के छटे मंत्र के भाष्य से स्पष्ट होती है, मनुष्य द्वाभ्यां, प्रयोजनाभ्यां, प्रवर्तितव्यम्। प्रथम अत्यन्त पुरुषार्थ शरीरारोगाभ्यां चक्रवर्ती राजश्री प्राप्ति करणं, द्वितीयं सर्व विद्या पठित्वा तासां सर्वत्र प्रचारी करणं। महर्षि की दृष्टि राष्ट्र पर प्रथम थी बाद में प्रचार कार्य। क्या आर्य समाज ने इस ओर ध्यान दिया? अब उपयुक्त समय है, लाभ उठाना चाहिए।

धर्मेन्द्र गुप्त

स्वामी दयानन्द जी का मैं मानव समाज, विशेष रूप से हिन्दुओं पर बहुत ऋण मानता हूं। वह ऐसी शक्ति थे जिन्होंने हिन्दुओं को जागृति दी, एक किया, और समता में मनुष्य को जीने की प्रेरणा दी। नारी मुक्ति की बात उन्होंने साकार कर दी तथा मनुष्य को ज्ञान के प्रकाश में जीना सिखाया, और भी अनेक विशेषताएं इस सम्बन्ध में बताई जा सकती हैं।

प्रताप सहगल

स्वामी दयानन्द ने अपने जीवन की धारा तो बदली, लेकिन उससे जगत का कल्याण हुआ, यह मानना गलत है। देखा जाय तो उन्होंने एक तरह की पोंगापन्थी का विरोध किया, पर उनके अनुयायियों ने दूसरी तरह की पोंगापन्थी को स्थापित

किया। कर्मकाण्ड पर अधिक बल दिया, जिसके कारण आज भी अधिकांश आर्य समाजी मात्र कर्म काण्डी होकर रह गये हैं।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

महर्षि दयानन्द के जीवन की दो प्रमुख घटनाओं – शिवलिंग के ऊपर चूहे का चढ़ना तथा चाचा व भगिनी की मृत्यु ने उन्हें मृत्यु को जानने और मृत्युञ्जय बनने की जो प्रेरणा दी थी, उसमें महर्षि पूर्णतया सफल हुए थे, जिसका स्पष्ट उदाहरण उनके महाप्रस्थान की घटना से मिलता है। महर्षि दयानन्द का रोम-रोम फोड़ों से छलनी हो चुका था और उनसे पीप फूट रही थी। महर्षि ने जब शरीर त्यागने का निश्चय कर लिया (दीपावली १८८३ ई०) तो क्षौर करवा, स्नान किया तथा ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना तथा स्वस्ति के मंत्रों का पाठ किया, सबको पीछे खड़े होने तथा सभी खिड़कियां खोल देने का आदेश दिया, और उस मृत्यु का आलिंगन करते हुए उनके मुखमण्डल पर इतना अधिक आह्लाद और प्रसन्नता थी, जैसे कोई वर्षों से बिछुड़े मित्र (अन्तरंग मित्र) से मिल रहा हो। फिर अन्त समय के शब्द "प्रभु तेरी यही इच्छा थी, तैंने अच्छी लीला की, ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो" और दृश्य जो पं० गुरुदत्त के जीवन में क्रान्ति ला गया इस तथ्य को निर्विवाद रूप से सिद्ध करता है कि उन्होंने मृत्यु पर विजय पाली थी। वह अपनी विचारधारा की छाप जनमानस पर स्थायीरूप से छोड़ने में निश्चित रूप से सफल हुए हैं, हालांकि अगर वह अकाल काल के ग्रास न बनते तो और अधिक क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकते थे। उनकी विचारधारा का ही यह प्रभाव था कि अंग्रेज के शासन-काल में आर्य समाजी शब्द विद्रोह का पर्यायवाची माना जाने लगा था। एक मुसलमान की मां की बीमारी की सूचना आई तो उसने अपने अंग्रेज अधिकारी से अवकाश मांगा। अधिकारी द्वारा अनुनय-विनय पर भी जब अवकाश न देने का निर्णय सुना तो उसने स्पष्ट कह दिया कि मैं जा रहा हूँ आप चाहें तो अवकाश दे दें अथवा न देवें। अंग्रेज अधिकारी ऐसे उत्तर की अपेक्षा केवल आर्य-समाजी से ही कर सकता था, अतः बोला 'टुम आर्य समाजी लगटा है।' उसने कहा 'मैं तो मुसलमान हूं'। यह उत्तर सुनकर अंग्रेज़ अधिकारी बोला, वैल, टुम, मुसलमान आर्यसमाजी हो'। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में हंसते-हंसते जिन वीरों ने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया अथवा घोर यातनाएं सही उनमें अस्सी प्रतिशत से भी अधिक आर्य-समाजी तथा उनके घनिष्ठ मित्र थे, जिनमें पं० रामप्रसाद विस्मिल, सरदार भगत सिंह, राजेन्द्र सिंह लाहड़ी, अशफाक उल्ला, भाई बालमुकन्द, भाई परमानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय, बाल गंगाधर तिलक, सरदार बल्लभ भाई पटेल आदि प्रमुख हैं जिनके बलिदान और तप से ही भारत स्वतन्त्र हुआ है। स्वतन्त्र भारत के संविधान के निर्माता चाहे आर्य-समाजी न थे, परन्तु आर्य-समाज की विचारधारा तथा कार्य-शैली से इतने अधिक प्रभावित थे कि उन्होंने आर्य-समाज की सभी सुधारवादी नीतियों का समावेश संविधान में कर लिया। उदाहरणार्थ—नारी शिक्षा तथा नारी व शूद्रों को समाज में समानाधिकार देने, छुआ-छूत को वैधानिक अपराध मानना, लिंग अथवा

जन्म के आधार पर किसी से भेद-भाव न करना, हिन्दी को सम्पर्क-भाषा, राष्ट्र-भाषा घोषित करना, आदि। अभिवादन के लिए नमस्ते का प्रयोग आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हो रहा है और नारी-शिक्षा के कट्टर विरोधी आज नारी-शिक्षा के क्षेत्र में आगे-आगे हैं। अतः हम विश्वासपूर्वक यह घोषणा कर सकते हैं कि महर्षि की विचारधारा जगत का कल्याण करने में सफल रही है।

प्रेमनाथ

ऋषि दयानन्द अपने उद्देश्य में बहुत सफल हुए। आर्य-समाज समाप्त भी हो जाय तो ऋषि का नाम इसके पश्चात् भी पतंजलि आदि ऋषियों की तरह अधिक ही चमकेगा। दुःख है कि आर्य-समाज में अब बहुत अवनति आ गई है। पदों की लालसा व निर्वाचनों आदि के झगड़े बहुत बढ़ गये हैं और वास्तविक वेद-प्रचार का कार्य नाम मात्र रह गया है। अधिकारियों में ही स्वाध्याय नहीं रहा तो वेद प्रचार कैसे हो और जब कि उपदेशक भी अपनी दक्षिणा के लालची अधिक हो गये हैं।

डॉ० प्रशान्त कुमार

मृत्युञ्जय की कलपना महर्षि दयानन्द की नहीं थी। वे तो जीवन के यथार्थ को जानते पहचानते व सच्चे शिव के दर्शन करने घर से निकले थे। उन्होंने समाज में व्याप्त अविधा, अन्धविश्वास, भूख को देखा और मनुष्य योग की सेवा वेद से करने का संकल्प लिया। उनके प्रयत्न व उनकी विचारधारा से उस समय समाज व राष्ट्र में क्रान्ति उत्पन्न हुई। आज भी उससे क्रान्ति उत्पन्न की जा सकती है।

प्रह्लाद दत्त वैद्य

चूहे वाली घटना से जड़ मूर्ति-पूजा का भूत कुछ अंश में कम अवश्य हुआ था। परन्तु देश विभाजन के पश्चात् नैतिक शिक्षा में दोगलापन आया और वैदिक सिद्धान्तों पर शंका समाधान और शास्त्रार्थ आदि बन्द हो गया। इसीलिए रोग पुनः उभरआया है। इसमें राजनीतिक पार्टियों का दोष अधिक है। मृत्युञ्जय बनने की बात स्वयं महर्षि के जीवन में घटती है, क्योंकि मृत्यु के समय प्राणान्त होने से पूर्व ऋषि ने परमेश्वर को सम्बोधन करते हुए समर्पण किया और कहा कि हे जगदीश्वर! तेरी इच्छा पूर्ण हो। तूने एक लीला दिखाई। ये मृत्यु पर विजय ही तो है। ऋषि को कई बार विष दिया गया, परन्तु अपने ब्रह्मचर्य बल एवं योगबल से इस संकट से निडरता के साथ पार हो गये। उनको बहुत अल्प समय मिला। इस अल्प समय में इतना महान कार्य कैसे पूरा हो सकता था। हां, अपने व्यक्तिगत जीवन को अत्यन्त उज्ज्वल निर्भीक बनाये रखा। जो व्यक्ति भी जिज्ञासा लेकर ऋषि के संपर्क में आया, उनमें बहुतों का कल्याण हुआ तथा जीवन धारा ही बदल गई एवं अपने का ऋषि से मिलकर सौभाग्यशाली समझा। ऋषि की विचारधारा तो लगभग सारे जगत में फैल चुकी है, किन्तु आचरण इतना नहीं हो रहा। जितनी ऋषि की विचारधारा फैलती जा रही है। और अधिक फैलने की आशा है। जब भिन्न-भिन्न भाषाओं में साहित्य का निर्माण एवं प्रकाशन करते रहेंगे। मैं महर्षि को उनके अपने उद्देश्यों में

सफल मानता हूँ। उन्होंने अत्यधिक सूत्र रूप में अपनी रचनाओं, व्याख्यानों, उपदेशों और आदेशों द्वारा जनता के सम्मुख प्रत्येक समस्या से विचार करना और आचरण करना हम सब का कर्त्तव्य है।

पं० बिहारीलाल शास्त्री

महर्षि दयानन्द, देशोत्थान और जाति के संरक्षण में जितने सफल हुए, उतना उस काल का कोई व्यक्ति सफल नहीं हुआ। श्री राजाराममोहन राय, रामकृष्ण परमहंसादि, देश और जाति के लिए तड़पे। किन्तु वह दृष्टिकोण और विचारधारा एक ने भी प्रकट नहीं की, जिसकी उस समय आवश्यकता थी। देश की स्वतंत्रता का पहला विचार स्वामी जी ने दिया। सन् ५८ में जब विक्टोरिया की विज्ञप्ति निकली थी कि जिस ईस्ट इण्डिया कम्पनी के विरुद्ध आप लोगों ने गदर किया था, उसे हमने तोड़ दिया है, और सब शासन अपने हाथ में ले लिया है। अब शासन माता-पिता के समान हितकारी, न्याय और दया से युक्त, पक्षपात शून्य होगा। इस विज्ञप्ति को पढ़कर, हिन्दी और मुसलमान, दोनों खुशी से उछल पड़े, किन्तु ऋषि दयानन्द, उस समय नर्मदा के किनारे-किनारे घूमते थे, इस विज्ञप्ति पर सन्तुष्ट नहीं हुए और कहा—"ऐसा विदेशी शासन लाभदायक नहीं हो सकता। केवल स्वदेशी शासन सफल रहता है।" उनकी ये पंक्तियां आज भी 'सत्यार्थ प्रकाश' में प्रकाशित हैं।

भगवान चैतन्य

महर्षि के जीवन में वास्तव में ही शिवलिंग पर चूहे को देखना तथा चाचा और बहिन की मृत्यु; इन दोनों घटनाओं का अत्यधिक महत्व है। प्रथम घटना ने उन्हें सच्चे शिव को पाने के लिए तथा दूसरी घटना ने मृत्युन्जय बनने को प्रेरित किया। उनकी जीवन लीला के अन्तिम शब्द ("प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो") इस बात के साक्षी हैं कि दोनों ही लक्ष्य उन्हें प्राप्त हो चुके थे। इस एक वाक्य में प्रभु-प्राप्ति एवं मृत्युन्जय बनने का संकेत है। महर्षि दयानन्द जी को जितना कम समय कार्य करने के लिए मिला उसमें वे जितना कुछ भी कर पाय उससे आश्चर्य भी होता है।

डॉ. भवानीलाल भारतीय

निश्चय ही स्वामी जी अपने उद्देश्य में सफल हुए।

मदन गोपाल खोसला

अपने उद्देश्य में अपनी छोटी-सी आयु के अनुसार बहुत सफल हुए। जगत का कल्याण स्वामी जी से बढ़कर किसी ने नहीं किया।

डॉ० मण्डन मिश्र

महर्षि दयानन्द जी के उद्देश्य की सफलता मैं तो कोई सन्देह नहीं हैं। उनके द्वारा जगत का कल्याण ही हुआ। वर्तमान परिस्थिति में मनुष्य इतना स्वार्थमय हो गया है कि उसका स्वार्थ के अलावा कुछ भी ध्यान में नहीं है। यदि महर्षि दयानन्द जी के सन्देश को व्यवहार में लाया जाये तो शायद मनुष्य कुछ ऊँचा उठ सके।

मुल्कराज भल्ला

महर्षि दयानन्द ने भारत का कल्याण तो किया—जगत पर कोई खास प्रभाव नहीं हुआ। विदेश में आर्य-समाज भारतवासियों में ही नाम मात्र है।

यशपाल वैद्य

शिवलिंग के ऊपर चूहे का चढ़ना तथा चाचा व भगिनी की मृत्यु से स्वामी जी का जीवन के प्रति दृष्टिकोण ही बदल गया। महर्षि दयानन्द ने जीवन में सत्य और कल्याण के मार्ग पर चलने का संकल्प किया और उन्हें अपने उद्देश्य में सफलता मिली। आयुपर्यन्त वह पाखण्ड और आडम्बरों से दूर रहने, दूर करने में तत्पर रहे।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार

महर्षि अपने उद्देश्य में बहुत कुछ सफल हुए। उन्होंने मृत्यु को जानने एवं मृत्युञ्जय बनने का भी यत्न किया। इसके लिए उन्होंने योग की उत्कृष्ट कोटि को प्राप्त किया। इस ओर से तृप्त होकर मानो ईश्वरीय आदेश, प्रेरणा से ही वे संसार के उपकार में लग गये। उन्होंने जगत का कल्याण नाना रूपों में किया—धार्मिक क्षेत्र में क्रान्ति करके, भारत में विलुप्त हुए वेदों का पुनः प्रकाशन एवं भाष्य करके, कर्म-काण्ड एवं धर्म आदि के सच्चे स्वरूप को प्रकट करने के लिए संस्कार-विधि एवं सत्यार्थ प्रकाश आदि रचकर, शास्त्रार्थ करके। इस प्रकार विविध क्षेत्र के उनके कार्य को थोड़े से ही समय में इन सभी कार्यों को एक साथ करते हुए उन्होंने बहुत सफलता प्राप्त की, किन्तु ये कार्य पूर्ण न हो सके। महर्षि दयानन्द का जीवन भगवान कृष्ण के जीवन जैसा रहा जो योगिराज बनने के साथ जीवन भर संकटों से जूझते रहे, कुश्ती करते रहे और गीता के निष्काम-कर्म योग को उन्होंने जीवन में चरितार्थ किया।

राजकुमार कोहली

स्वामी दयानन्द ने मृत्यु को जीत लिया था और मुक्ति के अधिकारी वह निश्चित रूप से बन चुके थे। आज उनकी विचारधारा चारों ओर सुगन्धि फैला रही है। इससे निश्चित है कि स्वामी जी अपनी विचारधारा फैलाकर जगत का कल्याण करने में सफल रहे थे।

कु० विद्यावती आनन्द

महर्षि दयानन्द अपने उद्देश्य में अवश्य सफल हुए। स्वामी जी ने अपने ओजस्वी विचारों द्वारा सोये हुए भारतीयों को जगाया, भारतीयों के मुर्दा शरीरों में जीवन फूंका। जगत को कल्याण का मार्ग दिखलाया। जगत के कल्याणार्थ वह बहुत कुछ कर सकते थे, करना चाहते थे, परन्तु करने का समय नहीं मिला। उनके विरो-धियों ने विष देकर उनकी जीवन-लीला बीच में ही समाप्त कर दी। स्वामी जी के अनुयायी स्वामी जी की शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार करके इस ओर महत्वपूर्ण कार्य कर

सकते थे, परन्तु वह शीघ्र ही शिथिल हो गये अकर्मण्य हो गये। अब ऋषि निर्वाण शताब्दी पर आर्य-समाजियों को संकल्प लेना चाहिए कि वह जगत के कल्याण के लिए स्वामी जी की शिक्षाओं का, उनकी विचारधारा का प्रचार और प्रसार करेंगे।

विद्यानन्द सरस्वती

महर्षि दयानन्द तो अपने उद्देश्यों में सफल रहे, किन्तु उनकी विचारधारा को फैला कर जगत का तो क्या स्वयं अपना कल्याण करने में भी आर्य-समाज सफल न हो सका—घुसपैठियों व स्वार्थियों के अधिक संख्या में होने के कारण।

डॉ० वेदप्रताप वैदिक

महर्षि दयानन्द अपने उद्देश्य में कितने सफल हुए. इसका निर्णय करना आसान नहीं है। किसी भी महापुरुष की सफलता को और कम से कम महर्षि दयानन्द जैसे महापुरुष की सफलता को १०० वर्ष के छोटे से पैमाने पर नापना अनुचित ही होगा। महर्षि दयानन्द ने जो विचार प्रदान किये हैं, हो सकता है कि उनके शिष्यों की क्षमता और योग्यता के कारण वह केवल उत्तर भारत में सिमटकर रह गये और जो बाती जलती रही है वह काफी मद्धिम पड़ गई है, लेकिन विचार का बीज एक ऐसा बीज होता है जो कभी-कभी हजारों साल बाद भी फूटकर वटवृक्ष बन जाता है। कभी-कभी वह अपनी जमीन से उड़कर दूर प्रदेशों में गिरता है और वहाँ भी छा जाता है, जैसे बौद्ध-धर्म और फिलिस्तीन में जन्मा ईसाई धर्म। फिर भी मैं इतना कह सकता हूं कि यदि दयानन्द न होते तो भारत जो आज है, वह नहीं होता। १९वीं और २०वीं सदी के महापुरुषों में दयानन्द का स्थान अन्यतम है।

वैद्यनाथ शास्त्री

जहाँ तक महर्षि का अपना सम्बन्ध है वे सच्चे शिष्य के ज्ञान और मृत्युंजता में सफल रहे। उनके उद्देश्य भी सफल हैं। उनकी ज्योति चातुर्दि विस्तृतक हुई है और देश-देशान्तर में फैली है—वे सफल हैं ज्योति सफल है—अब भी प्रज्ज्वलित होती जा रही है—इसमें संदेह नहीं। हां, यह प्रश्न हमें उनके अनुयायियों से पूछना चाहिए कि हम उस उद्देश्य में सफल हैं या नहीं। टंकारा से निकली महा-ज्योति ने भारत ही नहीं मानवता के भाग्य को बदल दिया है और वह बुझने वाली नहीं है। भारत में राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक साफल्य किसकी गरिमा को बताती है—क्या वह दयानन्द नहीं हैं ?

सत्यदेव विालंकार

इस प्रश्न का उत्तर कुछ भी नहीं बनेगा। सब कुछ सापेक्ष है।

डॉ० सहदेव वर्मा

इन महत्वपूर्ण घटनाओं से महर्षि के जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हुआ। उन्हें मृत्युंजय मानने में कोई आपत्ति नहीं। तत्कालीन पाण्डित्य समूह में जो वैचारिक

उथल-पुथल हुई वह सर्वविदित है, परन्तु जागते हुए भी जो सोने का नाटक करें उसे क्या कहा जाये ?

सुदर्शन देव

शिवलिंग की घटना एवं चाचा भगिनि की मृत्यु ने महर्षि दयानन्द के माध्यम से जड़-पूजा तथा मिथ्या पर आधारित प्रबल लोकमत को जबर्दस्त ठोकर लगाई। साथ ही मृत्यु का एवं विनाश का स्वरूप ऋषि के समक्ष स्पष्ट हुआ, इसलिए वे जीवन की महत्ता को अधिक अच्छी तरह समझ और समझा सके। विषय प्रवर्तन तथा उसकी सिद्धि बड़ी शक्तिमत्ता के साथ उन्होंने अकेले ही ब्रिटिश देशों तथा सामाजिक एवं मानसिक प्रतिरोधात्मक विषम स्थितियों में कर दिया तथा उसे यौवन-सीमा तक पहुँचा दिया। अब उनके अनुयायी आर्य-समाज पर निर्भर हैं कि वह युगानुरूप अपनी क्षमताओं को बढ़ाकर उसे चिरजीवी बना सके।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्ता

स्वामी जी और उससे पूर्व के लगभग सभी धर्म सुधारकों बुद्ध, महावीर आदि की भी यही स्थिति रही है। उन्होंने मृत्यु पर कितनी विजय पाई, यह उनका ही अनुभव रहा, परन्तु घटना चक्र बताता है कि लोक को कल्याण का मार्ग बताना और उस पर स्वयं ही मृत्युंजय होना है। आत्म और सर्व-हितों का साधक समन्वित रूप ही कल्याण का मार्ग है। यह ऋषि ने भली-भाति प्रदर्शित कर दिया। इससे अधिक सफलता न किसी को मिली है, न मिलेगी, क्योंकि अपना कल्याण प्राणी अपने आप ही कर सकता है, अन्य कोई नहीं। स्वामी जी की विचारधारा का व्यापक और सतत् प्रचार-प्रसार अपेक्षित है। यह सदैव बहती नदी के समान चलती रहती है तो ऋषि का लक्ष्य पूरा होता हुआ माना जायेगा।

हरिकिशन मलिक

मृत्यु को जानने और मृत्युंज्जय बनने के संकल्प को पूरा करने में महर्षि को निःसन्देह पूर्ण सफलता मिली। प्रश्न में लिखित घटनाओं को देखकर अपनी विचारधारा को फैलाने का कोई संकल्प महर्षि ने नहीं लिया था। वह संकल्प लिया उस समय जब गुरुदेव किजानन्द जी से विदा ली। उस संकल्प में भी महर्षि पूर्ण-रूपेण सफल रहे, क्योंकि महर्षि को जितना समय प्रभु की ओर से मिला उतने समय में अन्य कोई भी व्यक्ति अपनी विचारधारा का इतना विस्तृत प्रसार नहीं कर सकता था जितना महर्षि ने किया।

४

महर्षि की रुग्णता और चिकित्सा की स्थिति

प्रश्न

महर्षि दयानन्द १८८३ में दीपावली के दिन निर्माण से पूर्व पर्याप्त समय तक रुग्ण रहे थे। क्या आप समझते हैं कि उनको उचित औषध और पथ्य न मिल सके, इसके पीछे कोई षड्यन्त्र था? क्या महर्षि के अनुयायियों ने अपने कर्त्तव्य पालन में कोई ढील बरती थी? आप के इस सम्बन्ध में क्या विचार है?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

स्वामी जी की अन्तिम समय हुई चिकित्सा आदि के सम्बन्ध में मुझे अधिक ज्ञान नहीं है।

अमरनाथ कांत

इसमें पूर्णतया ही विधर्मी विदेशी सत्ता का पूर्ण हाथ था। महाराजाओं ने अपनी विलासिताओं के वशीभूत होकर अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं किया। यदि डॉ० लक्ष्मण-दास जी से चिकित्सा होती तो अवश्यमेव ही लाभ होता, या डॉ० सूर्यमल जी का ही इलाज चलता रहता तो भी ठीक था। जोधपुर से जो अलीमर्दान खां इलाज के लिए आया था वह मुसलमान था और दवाई अंग्रेज़ी थी। वेश्या मुसलमान, इसलिए इलाज तो उलटा घातक होना था, ऐसा कुछ लोगों का शक है।

प्रो० कैलाशनाथ सिंह

महर्षि पूर्ण योगी थे। आनन्द एवं शोक से विमुक्त थे। निश्चित समय पर मोक्ष प्राप्त किया। सेवकों और अनुयायियों पर षड्यन्त्र का सन्देह व्यर्थ है।

प्रो० कृष्णलाल

मुझे इसके पीछे कोई षड्यन्त्र प्रतीत होता है।

जगत्तराम आर्य

स्वार्थी लोगों ने येन-केन प्रकारेण महर्षि को समाप्त करने के लिए कई प्रकार का कई बार विषपान कराया, अपने योग-बल से महर्षि उसका मुकाबला करते रहे, आखिर विष तो विष ही है, अन्दर ही अन्दर हानि पहुंचाता रहा। महर्षि अपने योगबल, आत्म-बल, आत्म-संयम से चलते रहे, काम करते रहे, आखिर कब तक ? महर्षि के अनुयायियों ने अपने कर्त्तव्य का पूरा पालन किया, कोई कमी बाकी न रखी, इसके पीछे कोई षड्यन्त्र नहीं था।

डॉ० दुखनराम

महर्षि के विष देने में षड्यन्त्र अन्तर्राष्ट्रीय प्रकार का रहा, जिसका अब तक यथातथ्य निर्णय नहीं हो सका है कि आर्यों का कर्त्तव्य उनके प्रति उचित था या अनुचित।

देवेन्द्र आर्य

इस सम्बन्ध में विभिन्न जीवन चरित्रों तथा खोजियों का अलग-अलग मत है। सभा को इस सम्बन्ध में निर्णयात्मक जानकारी प्राप्त करने की दिशा में उचित खोज-बीन करनी चाहिए।

धर्मेन्द्र गुप्त

स्वामी जी सच्चे योगी और संन्यासी थे। उनमें आत्मबल था, इसीलिए उन्होंने मृत्युभय को जीत लिया था। वह दो बार जहर को पचा गये, किन्तु सत्ता का षड्यन्त्र उनके शरीर को नष्ट कर गया। कलकत्ता जाते हुए अंग्रेज़ गवर्नर जनरल से उनकी भेंट हुई थी, जिसमें गवर्नर जनरल के यह कहने पर कि अंग्रेजी शासन में विचार फैलाने की सुविधा है तथा सर्वत्र सुख शान्ति है। अतः अंग्रेजी राज्य को अच्छा कहना चाहिए। स्वामी जी ने उत्तर दिया था कि गुलामी में हलुआ खाने से अच्छा है कि सूखी रोटी खाकर गुलामी की बेड़ियां तोड़ दी जायें। मैं विदेशी-शासन का विरोधी हूं।" गवर्नर जरनल ने आज्ञा दी थी कि "स्वामी जी पर नजर रखी जाये, यह शासन के लिए खतरनाक है।" मेरा निश्चित मत है कि इसके बाद अंग्रेजी सरकार उन्हें नष्ट करने पर तुल गई और जब जोधपुर से उन्हें अजमेर अस्पताल में इलाज के लिए लाया गया तो अंग्रेज डॉक्टर ने उन्हें ऐसा जहर दिया कि वह उठ न सके। राज-नीतिक कारणोंसे होने वाली मौतों से इतिहास भरा पड़ा है। स्वामी दयानन्द जी तो अंग्रेजी शासन के लिए एक चुनौती थे। अतः शासन द्वारा उन्हें समाप्त करना बहुत स्वाभाविक है।

प्रताप सहगल

इस विषय में मैं कुछ भी निश्चित तौर पर नहीं कह सकता।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती को २९ सितम्बर, १८८३ को रात्रि को दूध में बारीक पिसा कांच दिया गया था, और ३० अक्तूबर १८८३ को उनका देहावसान हो गया था।

अर्थात् महर्षि मात्र ३१ दिन रुग्ण रहे और रोम-रोम फोड़े बनकर फूट पड़ा था। आरम्भ में डॉ० अलीमद्दीन खां तथा पीछे डॉ० अलीमर्दान खां ने अंग्रेज़ के षड्यन्त्र में भागीदार बनकर उल्टा ही उपचार किया जिसमें कई लेखकों ने संखियायुक्त औषधि देने का वर्णन भी किया है। इस षड्यन्त्र में जोधपुर के महाराजा के भाई सरप्रताप सिंह (जिनके निमन्त्रण पर महर्षि जोधपुर गये थे), महाराजा की चेहेती वेश्या नन्नी बाई उर्फ नन्हीं भगतन, गुरु गणेश पुरी और जोधपुर के पोलिटीकल एजेण्ट सहित कुछ अंग्रेज अधिकारी सम्मिलित थे। जगन्नाथ पाचक लोभ के वशीभूत हो ब्रह्म-हत्या का दोषी बन गया। उसे महर्षि ने रुपए देकर नेपाल भाग जाने को कहा था और शिकायत की थी तो मात्र वेदभाष्य का कार्य अधूरा रहने की। जगन्नाथ उस देवपुरुष के व्यवहार से इतना प्रभावित हुआ था कि पश्चात्ताप की अग्नि में जलता हुआ पागल होकर मरा था। महर्षि के अनुयायियों में आबू में वैद्य लक्ष्मणदास प्रमुख थे और उनके उपचार से लाभ भी होने लगा, परन्तु षड्यन्त्रकारी उनका स्थानान्तरण कराने में सफल हो गये थे। वैद्य जी ने त्याग-पत्र देने की बात की तो महर्षि ने ऐसा करने से रोक दिया। लाहौर से पं० गुरुदत्त विद्यार्थी को महर्षि की सेवा के लिए अजमेर भेजा गया था, जबकि महर्षि आबू से अजमेर आ गये थे। मेरे विचार में महर्षि के अनुयायियों ने अपने कर्त्तव्य पालन में किसी प्रकार की कोई ढील नहीं बरती थी।

डॉ० प्रशान्तकुमार

यह निश्चित है कि महर्षि को वह मन्त्र (सम्भवतः किसी ईसाई के) से विष दिया गया था। उनकी चिकित्सा में मुसलमान चिकित्सकों का प्रमाद भी दिखलाई देता है। उनके अनुयायी यथासम्भव प्रयत्न करते रहे उनको बचाने का।

प्रह्लाददत्त वैद्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी सन् १८८३ में निर्वाण से पूर्व काफी समय से रुग्ण थे। यह बात ठीक है, किन्तु उनको उचित औषधि और उचित पथ्य नहीं मिला और रोग का निदान जाने बिना मनमाने ढंग से उपचार होता रहा। यदि यह बात मान ली जाये कि उनके रसोइये ने किसी लालचवश कांच को पीसकर दूध में मिलाकर पिला देने से वमन में दस्त लग गए और आंतें कट-कटकर शौच में आने लगीं। कांच घुलनशील पदार्थ नहीं है जो दूध में समरस हो जाये। संखिया और दारचिकना आदि दोनों उग्र विष हैं। इसके प्रयोग से उल्टी दस्त लगकर भयंकर पीड़ा करते हैं तथा ये मारक भी है। घुलनशील पदार्थ ये भी नहीं है। इनको उबालकर काम में लाने से भयंकर असह्यपीड़ा होती है। ऐसा प्रतीत होता है। डॉक्टर समुदाय ठीक निदान नहीं कर सका। अर्थात् किस कारण ऐसा हुआ? यदि विष का पता लग जाता तो उसका उपाय भी हो सकता, अर्थात् गाय का घी बार-बार पिलाने से और उसी का एनीमा देने से रोग शनैः-शनैः नष्ट हो सकता था। अतः सही निदान और सही उपचार के अभाव में ऋषि का अमूल्य जीवन नष्ट हो गया और हम रुदन करते रह गये। चिकित्सकों का ही पूर्ण उत्तरदायित्व दोषी था, चाहे लोभवश हो या दवाब के कारण हो। षड्यन्त्र का सन्देह अनुचित नहीं है।

प्रेमनाथ

बड़े व्यक्तियों की मृत्यु देश, जाति व समाज के लिए बलिदान रूप में ही होती है। षड्यन्त्र तो जब से वह समाज सेवा के लिए कार्य क्षेत्र में आये तब से अन्त तक चलते रहे।

पं० बिहारीलाल शास्त्री

स्वामी जी के रोग और चिकित्सा के विषय में अनेक बातें हैं। चिकित्सा उचित नहीं हुई। षड्यन्त्र भी सामान्य नहीं, बहुत गहरा था।

सत्यदेव विद्यालंकार

यह शुद्ध ऐतिहासिक गवेषणा का विषय है। सामान्य आर्यजन के भाव वे ही हैं जो पं० लेखराम जी ने स्वामी जी के जीवन चरित्र में प्रकट किये हैं। एक उच्चकोटि के इतिहासज्ञो को समिति द्वारा यह गवेषणा होनी चाहिए।

डॉ० भवानीलाल भारतीय

जिस षड्यन्त्र के वशवर्ती होकर स्वामी दयानन्द की मृत्यु हुई, उसकी ऐतिहासिक गवेषणा मैंने अपनी सद्यः प्रकाशित स्वामी जी की जीवनी नवजागरण के पुरोधा : दयानन्द सरस्वती के विष प्रकरण अध्याय में की है।

मदनगोपाल खोसला

स्वामी जी के इलाज में षड्यन्त्र अवश्य था। स्वामी जी की जितनी सेवा होनी चाहिए थी उतनी नहीं हो सकी।

डॉ० मण्डन मिश्र

मैं नहीं मानता कि उनकी सेवासुश्रुषा में कोई कमी रही हो। उनका निर्वाण तो अब कोई पश्चात्ताप का विषय नहीं है लेकिन उनके सिद्धान्तों का जो प्रचार नहीं हो रहा है, वह अवश्य पश्चात्ताप का विषय है और इस दिशा में हम कर्त्तव्यपालन में शिथिल हैं, यह मानना चाहिए।

यशपाल वैद

निस्सन्देह स्वामी जी की मृत्यु के पीछे षड्यन्त्र था। विषैले पदार्थों का सेवन उन्हें मिलता रहा। उनके अनुयायी ऐसी विवशता में थे जो अधिक कुछ न कर सके।

डॉ० रघुवीरवेदालंकार

महर्षि की मृत्यु के समय उनके अनुयायियों ने तो ढील नहीं बरती, हां अन्य लोगों के षड्यन्त्र का आभास अवश्य मिलता है। वह षड्यन्त्र चाहे अंग्रेजों का रहा हो या नन्हीं जान वेश्या का या किसी भारतीय राजा का। षड्यन्त्र स्वरूप ही उनको विष दिया गया। उनका चिकित्सक भी मुसलमान रहा, औषधियों का विपरीत प्रभाव होने पर भी वही चिकित्सा चलती रही। रोग के दिनों उनको स्थान परिवर्तन में भी बाधा

रही, इत्यादि कारणों को देखते हुए यह आशंका निर्मूल नहीं कही जा सकती कि उनकी मृत्यु के पीछे षड्यन्त्र था।

राजकुमार कोहली

महर्षि दयानन्द को उचित औषध और पथ्य न मिल सकने के पीछे एक षड्यन्त्र कार्य कर रहा था, क्योंकि अंग्रेज़ सरकार भी उनके विचारों से भड़क उठी थी। स्वामी जी के अनुयायियों ने अपने कर्त्तव्य पालन में कोई ढील नहीं बरती थी।

विद्यानन्द सरस्वती

२९ सितम्बर, १८८३ की रात्रि में जगन्नाथ द्वारा दूध में कांच घोलकर दिये जाने से स्वामी जी की मृत्यु हुई। यह सर्वथा मिथ्या है। स्वामी जी बीमार हुए। बीमारी के दौरान डॉ० अलीमर्दान खां ने जानबूझकर इलाज में गड़बड़ी की। यही उनकी मृत्यु का कारण बनी। मैं ऐसा मानता हूँ। अपने इस मत की पुष्टि में मैंने जो लेख लिखे, बार-बार अनुरोध करने पर भी और लगभग सात वर्ष बीत जाने पर भी आज तक कोई उनका खण्डन आंशिक रूप में भी नहीं कर पाया।

डॉ० वेदप्रताप वैदिक

महर्षि दयानन्द के निधन के समय की कठिनाइयों के बारे में मुझे वे ही जानकारियाँ हैं जो एक आर्य-समाजी परिवार के सदस्यों को होती है। इस सम्बन्ध में मैंने कोई अनुसन्धान नहीं किया, फिर भी यदि अनुसन्धान की गुंजाइश हो तो अवश्य किया जाना चाहिए।

वैद्यनाथ शास्त्री

यह प्रश्न बहुत सीमा तक काल्पनिक है। हां, यह इतिहासज्ञों के लिए शोध के मार्ग को खोलता है। किसी घटना और ऐसी महत्व की घटना के अन्तःपट में क्या कारण कार्य कर रहे हैं, समय से पूर्व कुछ नहीं कहा जा सकता है। जो सत्यतः आर्य सामाजिक थे, उन्होंने कोई असावधानी नहीं बरती।

डॉ० सहदेव वर्मा

वस्तुत: यह एक खोज का विषय है जिसके लिए आर्य-समाज और विशेष रूप से उनकी उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा सबसे अधिक उत्तरदायी है। हां, गहराई से विचार करने पर षड्यन्त्र का सन्देह तो होता ही है।

सुदर्शन देव

हमारा यह मानना सही है कि मेधा-धनी बनकर हम अपने जीवन को दीर्घतर बना सकते हैं तथा मृत्यु को सुदूर दिवस के लिए स्थगित कर सकते हैं। उचित औषध तथा पथ्य न मिल सके, इसके पीछे नन्हीं भगतन, फाजुल्ला, गणेशपुरी, गिर्दीकोट का पुजारी तथा अंग्रेज सत्ता (रेजिडेण्ट) का हाथ था। अन्यथा डॉ० सूरजमल का त्याग-पत्र तक

स्वीकार न करना, महर्षि जैसे अत्यन्त प्रख्यात तथा प्रतिष्ठित युगपुरुष की महत्ता से परिचित होते हुए भी अंग्रेज़ सत्ता का उपचार यत्न न करना, डॉ० अलीमर्दान का प्रबल रोचक औषधि देना आदि उस षड्यन्त्र के अंग थे। जोधपुर महाराजा तथा उनके दोनों भाइयों का ऋषि पर अनुरक्त होने पर भी बम्बई, विदेश आदि न ले जाना उन की लापरवाही, भक्ति में कमी तथा कंजूसी के द्योतक हैं। ऋषि के सामान्य अनुयायी गण को सूचना देरी से मिली। वे जोधपुर राजकुल की भक्ति तथा साधन सम्पन्नता से परिचित थे। साथ ही जब पानी सिर पर से गुजर चुका तब उन्हें राजस्थान के औषध उपचार में अग्रणी स्थान अजमेर में लाया गया था। तब कुछ भी उपचार करना अकार्यकर हो चुका था।

डॉ० सुधीरकुमार गुप्त

विषय बहुत जटिल है। स्वामी जी को विष दिये जाने की सम्भावना पूरी-पूरी प्रतीत होती है, परन्तु इस विषय में तत्कालीन सामग्री के अध्ययन-विश्लेषण से उचित धारा में पूरी शोध नहीं की गई है और भावना तथा अल्पसाक्षियों पर किन्हीं व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक कारणों से पक्ष और विपक्ष में दो दल खड़े हो गये हैं।

इस विषय में स्वामी जी के अनुयायियों द्वारा उस काल में बरती गई ढील का मुझे कोई प्रामाणिक ज्ञान नहीं है। मृत्यु मानव की अन्तिम अनिवार्य नियति है। इसके कुछ न कुछ निमित्त तो बनते ही हैं।

हरिकिशन मलिक

अवश्य षड्यन्त्र था, डॉक्टर न्यूटन की परीक्षा के अनुसार महर्षि को हलाहल विष दिया गया था। विष दिया जगन्नाथ ने, क्योंकि वही भागा अथवा भगाया गया। जगन्नाथ का महर्षि से निजी कोई द्वेष नहीं था। इसलिए विष दिलवाने वाले षड्-यन्त्रकारी कोई अन्य ही थे। विष के लक्षण ऐसे नहीं थे जो धोखा खा जाते, परन्तु आश्चर्य की बात है कि इतने विख्यात हकीम की औषधियां एक बाल ब्रह्मचारी तपःपूत योगी को आरोग्य प्रदान करने के स्थान पर मृत्यु के मुख में धकेलने लगीं। महर्षि की काया के जर्जरित हो जाने पर भी भक्त लछमनदास की औषधि द्वारा चमत्कारिक लाभ होने से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि महर्षि की जीवट शक्ति कितनी प्रबल थी। ऐसे वज्र शरीर पर हकीम जी की औषधियों के कुप्रभाव का कारण केवल एक ही हो सकता है और वह यह कि हकीम जी औषधि के बहाने से महर्षि को प्राणघातक वस्तुएं खिलाते रहे। षड्यन्त्रकारियों के हाथ कितने लम्बे थे, इसका अनुमान सहज से लगाया जा सकता है। भक्त लक्ष्मनदास ने महर्षि की सेवा में उपस्थित रहने के लिए त्याग-पत्र तक भेज दिया, परन्तु उन्हें जबरदस्ती बुला भेजा गया। साधारण अधिकारियों की क्या शक्ति थी जो महर्षि को भक्त लक्ष्मनदास की सेवा से वंचित कर देते। स्पष्ट है कि महर्षि की जीवनलीला को समाप्त कर देने के लिए डोर कहीं दूर से ही हिलाई जा रही थी।

५

आर्य समाज की शताब्दी और उसकी उपयोगिता

प्रश्न

स्वामी दयानन्द के निर्वाण को सौ वर्ष पूरे हो रहे हैं। इन सौ वर्षों में दुनिया बहुत बदल गयी है। मन में यह सवाल उठता है कि सौ वर्ष पहले की परिस्थितियों में जो आर्य-समाज सार्थक और उपयोगी था, वह आज की परिस्थितियों एवं वैज्ञानिक उत्थान के काल में किस प्रकार उतना ही सार्थक एवं उपयोगी हो सकता है ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

आर्य-समाज एक आन्दोलन है जो देशकाल की परिस्थितियों के साथ निरन्तर प्रवाहमान रह सकता है।

अमरनाथ कांत

विश्व वैज्ञानिक पंगु हो जायेंगे, यदि आर्य-समाज अपना प्रचार कार्य बन्द कर दे तो, आज भी उतना ही आवश्यक है और उपयोगी भी जितना पहले था। केवल स्वार्थी, पदलोलुप असिद्धान्तवादी, राजनीतिज्ञों पर विशेषतया दृष्टि रखनी होगी। कि वह हमारे यहां समाज में पदाधिकारी न बन सकें।

प्रो० कैलाशनाथ सिंह

हमारा आधार वेद ज्ञान है। ईषत् विचार से बदली परिस्थिति में हमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण मिल जायेगा। आज आर्य-समाज की सौ वर्ष के पूर्व की अपेक्षा अधिक आवश्यकता है। वैदिक सिद्धान्त तर्क और विज्ञान की कसौटी पर आज भी पूर्ण खरे उतरते हैं।

प्रो० कृष्णलाल

आर्य-समाज की विचारधारा में कुछ भी अवैज्ञानिक दिखाई नहीं देता। उसकी सार्थकता आज भी उतनी है जितनी आज से सौ वर्ष पूर्व थी। बस, एक बात

आवश्यक है कि आज खण्डन की अपेक्षा स्वपक्ष-स्थापन की अधिक आवश्यकता प्रतीत होती है।

जगतराम आर्य

सौ वर्ष पहले आर्य-समाज सार्थक और उपयोगी इसलिए था। उस समय स्त्री जाति को पढ़ना-पढ़ाना घोर पाप समझते थे, छूआ-छूत बहुत थी, बाल विवाह होते थे, विधवा विवाह पाप समझते थे इत्यादि। अब कांग्रेस सरकार ने यह सब बातें जो आर्य-समाज चाहता था, मान ली हैं और कानून भी बना दिये है। उस समय यह नई चीज थी ओर अनुकरणीय थी। पढ़े-लिखे लोगों ने आर्य-समाज की इन बातों का स्वागत किया था। अब आर्य-समाज को कुछ रचनात्मक कार्यक्रम करने चाहिए, जिससे जनता में लोकप्रियता बढ़े।

डॉ० दुखनराम

आर्य-समाज का उपयोग इस समय सभी प्रकार के लोग कर रहे हैं, कुछ गुप्त रूप से, कुछ प्रकट रूप से। जो लोग छिपकर आर्य-समाज का एवं उसके सिद्धान्तों का उपयोग कर रहे हैं वे ही चिल्लाते हैं कि अब आर्य-समाज की आवश्यकता नहीं है। आर्य-समाज की आवश्यकता सौ वर्ष पूर्व जितनी थी, उससे कहीं अधिक आज है।

देवेन्द्र आर्य

यह निर्विवाद है। कि इन सौ वर्षों में परिस्थितियां वदली हैं, परन्तु वर्तमान परिस्थिति में तो आर्य-समाज की विशेष आवश्यकता है और प्रतिकूल नहीं है। केवल साहस धैर्य और विश्वास के साथ कार्य किया जाये तो सफलता की सम्भावना प्रबल है, क्योंकि जनता में रूढ़ियों पर से विश्वास कम होता जा रहा है। उसे मार्गदर्शन की आवश्यकता है जिसके लिए आर्य-समाज समर्थ है।

धर्मेन्द्र गुप्त

आज के युग में आर्य-समाज सार्थक और उपयोगी तभी हो सकता है जब वह आज के मनुष्य की आवश्यकता और उसके जीवन संघर्ष से अपने को जोड़े। आवश्यकता इस बात की है कि आर्य-समाज अपने को व्यावहारिक बनाये, केवल उपदेश देने तक ही सीमित न रखे।

प्रताप सहगल

सौ वर्ष पूर्व आर्य-समाज सामाजिक सुधारों का, धार्मिक अन्धविश्यासों को खण्डित करने का एक आन्दोलन था। आज यह संस्था कोई भी क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने में अक्षम हो चुकी है। किसी के पास भी नयी दृष्टि नहीं है। जो लकीर स्वामी दयानन्द ने लगाई थी, आज-आर्य समाजी उसी को पीटे चले जा रहे हैं। सौ वर्षों में वैज्ञानिक आविष्कारों, तकनीकी प्रगति, आणविक ऊर्जा के इस्तेमाल से विश्व में आशातीत परिवर्तन हुए हैं। आर्य-समाज इन सबके

प्रति उदासीन होकर मात्र हवन करने, करवाने में ही सार्थकता सतझता है। आर्य-समाज तभी सार्थक भूमिका अदा कर सकता है, जब वह नये चिन्तन के साथ सीधा-सीधा सामना करे। उसकी उपयोगिता को भी अंगीकार करे।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती की वैदिक विचारधारा पूर्ण वैज्ञानिक एवं तर्क-संगत है। महर्षि दयानन्द ने स्पष्ट कहा था कि जो बात बुद्धि और तर्क से सिद्ध न हो उसे न स्वीकार करें। सौ वर्ष पूर्व की परिस्थितियां निश्चित रूप से बदल चुकी हैं परन्तु आर्य-समाज, महर्षि के शब्दों में एक जीवित आन्दोलन है। यह कोई मत या सम्प्रदाय नहीं है। अतः समाज में फैली कुरीतियों से युद्ध करने की आवश्यकता हर काल में रहती है और रहेगी भी। आर्य-समाज की उपयोगिता आज भी न्यून नहीं हुई है; हालांकि कार्य-क्षेत्र अवश्य बदल गया है। अगर हम पुराने कार्य ही करते रहें तो आन्दोलन की परिभाषा लुप्त हो जायेगी। आज आर्य-समाज को समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार से लड़ना, दहेज के विकराल दानव को मिटाना, राजनीति में नैतिकता का समावेश करवाना है तथा राष्ट्र-द्रोही, मिलावटकर्त्ता, रिश्वत खोरों से लड़ना है। महर्षि ने आर्य-समाज के दस नियमों में से पाँच नियमों में सत्य का गुणगान किया है, परन्तु आज हम सत्य से विमुख होते जा रहे हैं। एक समय था हमारा शत्रु अंग्रेज़ भी सत्य के प्रति हमारी निष्ठा से प्रभावित था। यहाँ तक अकेले आर्य-समाजी की साक्षी पर मुकदमों के निर्णय सुना दिये जाते थे। हमें पुनः सत्यनिष्ठ होना पड़ेगा।

डॉ० प्रशान्त कुमार

महर्षि दयानन्द के सिद्धान्त वेद पर आधारित थे, अर्थात् शाश्वत नियम जो कालातीत हैं। महर्षि का स्पष्ट मत था कि विज्ञान सम्मत प्रत्येक सत्य को स्वीकार कर लिया जाय। मुझे आज के इस वैज्ञानिक युग में उनकी कही बात अव्यावहारिक प्रतीत नहीं होती। उनकी आधुनिक युगानुभव व्याख्या की आवश्यकता अवश्य है।

प्रह्लाददत्त वैद्य

आर्य-समाज कोई सम्प्रदाय नहीं है, किन्तु एक सुदृढ़ आन्दोलन है तथा सुधारक है। सौ वर्ष बीत जाने पर भी रुढ़िवाद, जातिवाद, पाखण्डवाद न जाने कितने वाद देश में, यहाँ तक आर्यों व आर्य-समाज में घुसे बैठे हैं जो इस पवित्र आन्दोलन को दुर्बल बना रहे हैं। आरम्भिक काल में सच्चे त्याग-भाव से काम करने वाले व्यक्तियों का एक दृढ़ संगठन था। सिद्धान्तों के प्रति एक पूर्ण आस्था थी, किन्तु अब निःस्वार्थ भाव से कार्यकर्त्ताओं की टांगें पकड़कर घसीटा जाता है और सहयोग की भावना दुर्बल पड़ती जा रही है। आर्य-समाज की उपयोगिता, आवश्यकता कभी कम होने वाली नहीं है। ये तो एक आन्दोलन हैं। ये कोई रुई की गांठ, व सोना-चाँदी आदि पदार्थों का सौदा नहीं, जो परिस्थितियों पर आधारित हो। यह तो मनुष्यमात्र की

जीवनधारा है, अत्यन्त वैज्ञानिक है और त्रिकाल अवधिक है। सर्वात्मना आचरण करने वालों की धरोहर है।

प्रेमनाथ

वेदोक्त धर्म शाश्वत है। वह आज-कल के समय में भी नहीं बदला और नहीं आगे बदल सकता है। हां विज्ञान ने तब से अधिक उन्नति अवश्य की है, परन्तु उसका आर्य-समाज के कार्य से कोई सम्बन्ध नहीं।

पं० बिहारीलाल शास्त्री

परिस्थिति चाहे जैसी हो, किन्तु आर्य विचारधारा सनातन है जिसकी आवश्यकता आज भी है। ६० करोड़ हिन्दुओं में आर्य-समाज की विचारधारा जैसे प्राणदायिनी है, ऐसी किसी संस्था की नहीं। विश्व को जीवित और बलिष्ठ बनाने के लिए आर्य-समाज अमृतधारा प्रवाहित कर रहा है।

भगवान चैतन्य

आर्य-समाज आज भी उतना ही सार्थक है जितना महर्षि जी के समय में था। आज भी वही समस्याएं-व्यक्तिगत, सामाजिक, पारिवारिक, राजनैतिक एवं धार्मिक क्षेत्रों में हैं जो उस समय थीं। आर्य-समाज "वेद" (ज्ञान) का प्रचार-प्रसार करने वाली संस्था है, अतः ऐसा कोई युग नहीं आयेगा जब व्यक्ति को अपने सभी क्षेत्रों में ज्ञान की आवश्यकता न पड़े। बल्कि आज की परिस्थितियों में तो आर्य-समाज की सार्थकता और भी अधिक बढ़ जाती है, क्योंकि चारित्रिक दृष्टि से व्यक्ति का पतन बहुत अधिक हो गया है। आर्य-समाज की शिक्षाएं सार्वकालिक एवं सार्वभौतिक है। अतः उनका "आउट ऑफ डेट" होने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता है।

डॉ० भवानीलाल भारतीय

आज की परिवर्तित परिस्थितियों में भी आर्य-समाज उपयोगी सिद्ध हो सकता है। शर्त इतनी ही है कि युग परिस्थितियों के अनुसार अपने कार्यक्रमों को नवीन दिशा बोध प्रदान करे।

मदन गोपाल खोसला

सौ वर्ष पहले ही जनता को जितनी आर्य-समाज की आवश्यकता थी, उससे कई गुणा अधिक आजकल की जनता को आर्य-समाज की आवश्यकता है। आज कल के संसार का यदि कोई मार्गदर्शन कर सकता है तो वह केवल आर्य-समाज है।

डॉ० मण्डन मिश्र

आर्य-समाज के सिद्धान्तों की सार्थकता और उपयोगिता आज भी उतना ही है जितनी स्थापना के समय थी। केवल आवश्यकता इस बात की है कि महर्षि दयानन्द के अनुयायी निष्ठा के साथ उनके लिए काम करें।

मुल्कराज भल्ला

आर्य-समाज तब भी उपयोगी था--अब भी है। देश में आज चरित्र निर्माण की बहुत आवश्यकता है। आर्य-समाजी नेता अपने आपको सुधार कर जनता के चरित्र की तरफ ध्यान दें।

यशपाल वैद

यदि आधुनिकता बोध की स्पष्ट छाप कहीं देखनी हो तो वह आर्य-समाज है, इसलिए बदलती हुई परिस्थितियों में आर्य-समाज उतना ही सार्थक है जितना सौ वर्ष पूर्व की परिस्थितियों में था, और फिर आज के परिवेश में भी असत्य, भ्रष्टता जैसी बुराइयां अपना घर किये हुए हैं। आर्य-समाज अपने सही रूप में और प्रचार-प्रसार में लाभकारी भूमिका अदा कर सकता है। यदि कथनी और करनी में अभेद हो जाये, तो भी समाज में समुचित सुधार हो जाय।

डॉ० रघुबीर वेदालंकार

अब से १०० वर्ष पूर्व विज्ञान का प्रभाव होने पर भी परिस्थितियां वे ही थीं जो आज हैं। इतना ही नहीं, आज और भी अधिक बदतर परिस्थितियां हैं। विज्ञान के कारण धर्म-हीनता, एवं नास्तिकता बढ़ती जा रही है। नानामत मतान्तर, पुनः सर्वत्र व्याप्त हैं। धर्म परिवर्तन के लिए विदेशों से पर्याप्त धन आ रहा है। धार्मिक रूढ़िवादिता, अन्धविश्वास अभी भी सर्वत्र पैर जमाये हुए हैं। धर्म एवं जाति के नाम पर आज राष्ट्रीय एकता को भी खतरा उत्पन्न हो जाता है। ऐसी स्थिति में आर्य-समाज ही है जो इन सभी क्षेत्रों में कार्य कर सकता है। स्त्री-शिक्षा, नमस्ते आदि के प्रचार से पूर्ण सफलता नहीं मान लेनी चाहिए। आर्य-समाज सदैव सार्थक एवं उपयोगी रहेगा। अभी भी है।

राजकुमार कोहली

आर्य-समाज के सिद्धान्त सत्य और वैज्ञानिक हैं अतः आज की परिस्थितियों में भी आर्य-समाज की सार्थकता और उपयोगिता न्यून नहीं हुई है।

प्रो० रामगोपाल

इसमें सन्देह नहीं कि काल-क्रम के साथ-साथ परिस्थितियां बदलती रहती है और जो संस्था या समाज उन परिस्थितियों के अनुसार अपने आप को समर्थ नहीं बनाता है वह पिछड़ जाता है। यह सिद्धान्त आर्य-समाज पर भी लागू होता है, परन्तु स्वामी दयानन्द ने आज से १०० वर्ष पूर्व जो प्रगतिशील दृष्टिकोण भारतीय समाज के सामने प्रस्तुत किया था उसकी उपयोगिता में आज भी कोई कमी नहीं आयी है। कमी केवल ऐसे व्यक्तियों की है जो उस विशाल दृष्टिकोण के अनुसार अपने विचारों को ढ़ाल सकें।

कु० विद्यावती आनन्द

सौ वर्ष पहले की परिस्थितियों में जो आर्य-समाज सार्थक और उपयोगी था, वह आज की परिस्थितियों एवं वैज्ञानिक उत्थान के काल में उतना ही सार्थक एवं उपयोगी है। आर्य-समाज के सिद्धान्तों में कोई अन्तर नहीं आया न आ सकता है। हां, आज के आर्य-समाजियों का जीवन वह नहीं जो आरम्भ के आर्य-समाजियों का था। आज के आर्य-समाजी टिमटिमाते हुए दीपक के समान हैं। वह अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के जीवन को रोशन नहीं कर पाते। दोष हम में आ गया है, आर्य-समाज में नहीं।

विद्यानन्द सरस्वती

आर्य-समाज के कार्यक्रम का केवल समाज-सुधार सम्बन्धी कार्य ही सिद्धान्त रूप में अपनाया गया है। दार्शनिक मान्यताओं, धार्मिक अन्ध विश्वासों आदि की दृष्टि से संसार आज भी वहीं है, जहां आज से सौ वर्ष पूर्व था। वैज्ञानिक उत्थान का व्यावहारिक जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। इसलिए आर्य-समाज की आज भी पहले जैसी ही नहीं पहले से भी अधिक सार्थकता है, क्योंकि अब स्वयं आर्य-समाज भी महर्षि दयानन्द की मान्यताओं से दूर होते जा रहे हैं।

डॉ. वेद प्रकाश वैदिक

यदि स्वामी दयानन्द ने सिर्फ एकाध मोर्चे पर ही काम किया होता तो वे आज १०० वर्ष बाद अप्रासंगिक हो जाते, जैसा कि उनके वर्तमान तीन शिष्यों ने उन्हें लगभग बना ही दिया है। मेरी राय में महर्षि ने भारत में एक अपूर्व सांस्कृतिक क्रान्ति का सूत्रपात किया था, जो आज भी अधूरी है। दयानन्द के काम को एक हद तक गाँधी, लोहिया और जयप्रकाश ने आगे बढ़ाया। हालांकि इन सज्जनों के उनसे मतभेद भी थे। मैं यह समझता हूं कि दयानन्द और गांधी के विचारों के आधार पर भी भारत में एक ऐसी सांस्कृतिक क्रान्ति हो सकती है, जो भारत ही नहीं सारे विश्व के लिए प्रेरणा का स्रोत हो।

आर्य-समाज आज भी ईमानदारी और निष्ठावान कार्यकर्ताओं का देश में सर्व श्रेष्ठ संगठन है। इतना स्वच्छ और लोकतान्त्रिक संगठन देश में अन्य कोई नहीं है। सारे राजनीतिक दल प्राइवेट कम्पनियों की तरह काम रहे हैं और उनके नेता लोग प्रायः निर्बलचरित्र और दृष्टिहीन हैं। ऐसी स्थिति में आर्य-समाज जैसी गैर राजनीतिक संस्थाएं देश और दुनिया को बदलने में अप्रतिम भूमिका निभा सकती हैं।

वैद्यनाथ शास्त्री

जिस दुनिया को वैज्ञानिक आदि उन्नति के कारण बदली हुई समझा जा रहा है उसके मूल सिद्धान्त के समझने में गलती हो रही है। वैज्ञानिक उन्नति की दुनिया ये गाय की चर्बी को उपयोगी सिद्ध करते हुये भारत के लोगों को डालडे में खिला दिया और उन लोगों को जो 'गो' रक्षक हैं। वैज्ञानिक उन्नति की बनी रही, परन्तु

क्या इस उन्नति व अवनति के बाद महर्षि के बताये गौकृष्यादि रक्षिणी सभा के सिद्धान्त अब उपयोगी नहीं रह गये। यदि चम्मच और कांटे से खाना सीख गये तो क्या हाथ की उपयोगिता समाप्त हो गई। महर्षि के सिद्धान्त समाज की उन्नति के दार्शनिक सिद्धान्तों की स्थापना करते हैं, उनकी सदा उपयोगिता रही और रहेगी। दुनिया से तात्पर्य दुनिया के मानव से है। वह यदि बदला अच्छाई में तो भी उसको कायम रखने में उन सिद्धान्तों की जिनसे दुनिया बदली है आवश्यकता है। यदि बुराई में नहीं है और बदली है तब तो उसके निर्मूल करने की आवश्यकता बनी ही है। मानव समाज कभी भी परिपूर्ण विकास को नहीं प्राप्त होता है—वह सदा उसके बनने के क्रम में रहता है। अत: उसके इस क्रम में उन्नति पूरक परिवर्तन वे दार्शनिक सिद्धान्त सदा उपयोगी होते हैं। आर्य-समाज के समाज निर्माण सम्बन्धी सिद्धान्त और दूसरे सिद्धान्त ऐसे ही हैं। अत: आर्य-समाज की आवश्यकता सदा बनी रहेगी और अब भी और आगे है।

सत्यदेव विद्यालंकार

आधार भूत विचार आज भी उतने ही सत्य है—जितने १०० वर्ष पूर्व थे। पर लोकाचार और व्यवहार की दृष्टि से निर्दोष परिवर्तनों पर आपत्ति नहीं है।

डॉ० सहदेव वर्मा

मेरे विचार से आधुनिक वैज्ञानिक परिस्थितियों में आर्य-समाज ही विश्व के समस्त वैचारिक, बौद्धिक सामाजिक तथा धार्मिक आन्दोलनों में सर्वाधिक सक्षम एवं सशक्त है—बशर्ते कि उसके अनुयायी तन-मन-धन से लगन के साथ इस आन्दोलन में जुट जायें।

सुदर्शन देव

आज आर्य-समाज को इस युग के जीवन के भौतिक विकास को राजनैतिक तथा सामाजिक संस्थाओं, दलों के कार्यक्रम तथा गतिविधियों को समझना होगा। देश-विदेश के घटना-चक्र की अनवरत जानकारी तथा उसका समुचित उपयोग उठाना होगा। इस हेतु सार्वदेशिक सभा विश्व की तथा भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा भारत की पृथक बनानी होगी। दोनों में तथा प्रान्तीय सभाओं में क्रमशः विश्व, भारत एवं प्रान्तीय घटना-चक्र की समुचित जानकारी की उपलब्धि हेतु धार्मिक इतिहास, राजनैतिक इतिहास आदि विभाग खोलने होंगे अधिकारी व्यक्तियों को उसमें स्थायीरूप में नियुक्त करना होगा। सरकारी ढ़ांचे के अनुरूप धार्मिक सिद्धान्त, निष्ठा एवं उदात्त-चरित्र वाले व्यक्तियों को ये विभाग सौंपने होंगे और नई तकनीक एवं मनोविज्ञान का प्रयोग करते हुये अपने अनुयायियों को भरण-पोषण से निश्चित करते हुए प्रचार, शुद्धि, अध्ययन आदि कार्यों में लगाना होगा।

डॉ० सुधीरकुमार गुप्ता

दो ही मार्ग हैं—या तो युग को अपने अनुरूप ढालने का सामर्थ्य अर्जित किया जाय और उसके लिए समस्त आवश्यक चिन्तन और उपायों का अवलम्बन किया

जाय अथवा अपने को युग के अनुरूप ढालकर आगे बढ़ा जाय। दोनों ही कठिन मार्ग हैं। कट्टर सम्प्रदायवाद सरल मार्ग है। जो हम बहुत कुछ अपना चुके हैं और अपनाते रहे हैं।

हरकिशन मालिक

आर्य-समाज के सिद्धान्त आज भी उतने ही सार्थक और उपयोगी है, जितने आज से सौ वर्ष पूर्व थे, परन्तु आर्य-समाजियों से एक भूल हो गई। उन्होंने अगणित बलिदान देकर स्वराज्य तो प्राप्त कर लिया, परन्तु सुराज्य की स्थापना के लिए तनिक भी हाथ पैर नहीं हिलाये। आर्य-समाजियों ने 'सत्यार्थ प्रकाश' के छठे समुल्लास की उपेक्षा की। उसका आज परिणाम भोगना पड़ रहा है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व अंग्रेज के विरुद्ध टक्कर में जनता की सहानुभूति आर्य-समाज के साथ होती थी, इस-लिए आर्य-समाज की साख बनती गई। अब अपनी सरकार कई बातों में अंग्रेज़ी सरकार को मात कर रही है, परन्तु आर्य-समाज कोई टक्कर नहीं ले सकता क्योंकि अपनी सरकार के विरुद्ध जनता की सहानुभूति नहीं मिल सकती। अतः आर्य-समाज कुछ कर नहीं पाता, इसलिए लगता ऐसा है कि आर्य-समाज ही सार्थक और उपयोगी नहीं रहा। इस कथन की ओर अधिक व्याख्या प्रश्न नं० १४, १५ तथा १६ के उत्तर में की जायेगी।

६

महर्षि दयानन्द के ग्रन्थ और उनकी सार्थकता

प्रश्न

महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों का आपके व्यक्तिगत जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा है ? इन ग्रन्थों के माध्यम से देश-विदेश में आर्य-समाज के प्रचार-प्रसार में कितनी सहायता मिली है ? आर्य-समाज के अनुयायी सम्पूर्ण विश्व में फैले हुए हैं ? इन ग्रन्थों को सभी देशों तक पहुँचाने के लिए क्या करना चाहिए ? क्या इन ग्रन्थों में कुछ ऐसे स्थल हैं जिन्हें आप हटाना चाहेंगे ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

महर्षि के ग्रन्थों का भारत एवं संसार की अधिक से अधिक भाषाओं में अनुवाद कराके प्रचार करना चाहिए। सर्वधर्म सम्भाव की दृष्टि से कुछ अंशों को छोड़ दिया जा सकता है।

अमरनाथ कांत

मेरे जीवन पर यह प्रभाव पड़ा कि मैं मांस व शराब आदि के सेवन से बचा। मैं छोटी उम्र से ही जैनियों के यहां कार्य करता था। मैं जैनियों की दुकान पर ग्यारह वर्ष की उम्र से ४० वर्ष तक कार्य करता रहा हूं। इन ग्रन्थों के माध्यम से मेरे जीवन पर यह प्रभाव पड़ा कि मैं जैन धर्म के प्रभाव से भी बच गया। इसलिए मैं अपने धर्म ग्रन्थों के माध्यम से ही अपनी कमियों को सुधारता रहा और आगे बढ़ता रहा और उन्हीं के साहित्य की कमियों को आंका और उनको भी अपने महर्षि द्वारा रचित ग्रंथों का बोध कराता रहा इसलिए उन्होंने मुझे परिसरशिप से अलग कर दिया। आर्य-समाज के अनुयायी सम्पूर्ण विश्व में फैले हुए नहीं हैं इन ग्रन्थों को

सभी देश भाषाओं में प्रकाशित करते हुए विद्वानों-उपदेशकों को प्रत्येक भाषा का विद्वान बनाकर प्रत्येक देश-विदेश में भेजना चाहिए। इन ग्रन्थों में कोई भी ऐसा अध्याय नहीं है जिससे कुछ निकाला जा सके या कोई शब्द डाला जा सके।

प्रो. कैलाश नाथ सिंह

महर्षि के ग्रन्थों ने मेरे अन्तर्मानस में प्रकाश बिखेरा। सत्य-असत्य की परिभाषा में मैं सक्षम हुआ। प्रचार पर्याप्त नहीं है, प्रचार अधिक व्यापक और उच्चस्तरीय होना चाहिए। प्रचार का ही परिणाम है कि देश-विदेश में इस समय ५००० से ऊपर आर्य समाजे हैं। सत्य पर आधारित सभी ग्रन्थ-ग्रहणीय है, कोई अंश निकालने योग्य नहीं है।

प्रो० कृष्ण लाल

इन ग्रंथों से मुझे सत्य को समझने में सहायता मिली है। उनके वेदभाष्य को अधिक तर्क सिद्ध एवं बोधगम्य बनाना होगा। फिर तत्-तद् भाषा में उसे अनूदित करना होगा। यह सदा ध्यान रहे कि उनका मुख्य आधार वेद है। मुझे उनके ग्रन्थों के कोई स्थल हटाने की आवश्यकता नहीं दिखाई देती। केवल समयानुकूल टिप्पणी साथ में दी जा सकती है।

जगतराम आर्य

आज से ६० वर्ष पहले मिड़िल कक्षा में 'सत्यार्थ प्रकाश' की परीक्षा हुई थी, तब से लाहौर में रहते हुए यह समझता और कहता रहा हूं कि जो आर्य-समाजी नहीं, वे इन्सान ही (मनुष्य) नहीं, जो आर्य समाजी नहीं वे पढ़े लिखे नहीं। जो आर्य समाजी नहीं वे देशभक्त नहीं। महर्षि के ग्रन्थों का प्रभाव मुझ पर यह पड़ा मैं फ़सली और नकली आर्य समाजी नहीं हूं। जीवन में पद की लोलुपता के बिना बहुत काम किये हैं, एक पुस्तक लिखी जा सकती है।

इन ग्रन्थों का विदेश में अच्छा प्रभाव पड़ा है। जिस देश की जो भाषा हो उसी भाषा में आर्य-साहित्य सुन्दर रूप में छपना चाहिए। जो आर्य-विद्वान विदेश में आर्य-समाज का प्रचार करने गये कुछेक को छोड़कर अधिकतर धन कमाने के प्रलोभन में फंस गये या उषर्बुद्ध जी की तरह गृहस्थ जाल में फंस कर आर्य-समाज का प्रचार न कर सके। ऋषि कृत ग्रन्थों में कोई भी स्थल हटाने योग्य नहीं है।

डॉ० दुखनराम

हमारे व्यक्तिगत जीवन पर ऋषिकृत ग्रन्थों का प्रभाव सूर्य के समान पड़ा है। रूढ़ियों का विनाश एवं तर्क प्रकाश ने हमारे हृदय को आलोकित कर दिया। देश-विदेश में आर्य-समाज का प्रचार-प्रसार इन ग्रंथों के माध्यम से अत्यधिक हुआ। विश्वभर में वैदिक सिद्धान्त के अनुयायी दिखलाई देने लगे हैं। इस समय विश्व की सभी भाषाओं

में ऋषिकृत ग्रंथों का भाष्य होना चाहिये। ऋषिकृत ग्रंथों का कोई भी अंश हटाना नहीं चाहिए।

देवेन्द्र आर्य

महर्षि के ग्रंथों का प्रभाव मुझ पर क्या पड़ा? आपके सामने है। महर्षि के ग्रन्थों का तत्तद्देशीय भाषाओं में अनुवाद मूल भाषा के साथ नीचे दिया जाय तो श्रेष्ठ रहेगा, हिन्दी का भी प्रचार होगा। अगर कोई स्थल विद्वानों की दृष्टि में वर्तमान भाषा की शैली के अनुकूल नहीं प्रतीत हो तो उसे नीचे नोट में स्पष्ट करें, स्थल न हटाया जाय।

धर्मेंद गुप्त

रचनाकार पहले आता है, ग्रंथ बाद में। मुझे तो स्वामी जी के जीवन से बहुत प्रेरणा मिली है। स्वामी जी के जीवन ने ही लोगों को सही ढंग से जीने की प्रेरणा दी थी। किन्तु आज स्वामी जी के संघर्षपूर्ण जीवन को ही भुलाया जा रहा है। जब आर्य-समाज के नेतागण ही सुविधा का जीवन जी रहे हैं, तब फिर स्वामी जी के ग्रंथ भी मनुष्य से दूर हो गये हैं। मेरी राय में स्वामी जी के विचारों को आधुनिक व्याख्या के साथ सस्ते संस्करण में प्रकाशित करना चाहिये। मैं 'सत्यार्थ प्रकाश' से कुछ भी हटाना स्वीकार नहीं करूंगा।

प्रताप सहगल

अपनी किशोरावस्था में मैंने 'सत्यार्थ प्रकाश' पढ़ा था। मुझे लगा था कि स्वामी दयानन्द एक क्रान्तिकारी व्यक्तित्व थे, जिन्होंने नचिकेता की तरह से पिता का विरोध किया और स्वयं अपने सत्य की तलाश की। आज मैं उस सत्य से सहमत नहीं हूं लेकिन उन्होंने मुझे अपना सत्य स्वयं खोजने की सीख जरूर दी। साथ ही अन्ध-विश्वासों का खण्डन करने और तर्क करने की क्षमता पैदा करने में भी इन ग्रंथों का हाथ रहा है। आज जब भी कभी उलटता हूं इन ग्रन्थों को तो मुझे अनेक स्थल आपत्तिजनक लगते हैं और कहां क्या हटाना चाहिए, यह उत्तर इस संक्षिप्त टिप्पणी में नहीं दिया जा सकता, यह तो एक शोध का कार्य है।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

महर्षि दयानन्द के ग्रंथों, विशेष रूप से 'सत्यार्थ प्रकाश' ने हमारे जीवन में नई क्रान्ति का सूत्रपात्र किया है। आज हमें कोई सम्प्रदायों की चमक-दमक में नहीं उलझा सकता है। वेद भाष्य की शैली पूर्ण वैज्ञानिक और अद्वितीय है, जिसने वेद के प्रति अटूट श्रद्धा उत्पन्न कर दी है। 'सत्यार्थ प्रकाश' की तुलना न कोई ग्रन्थ कर सकता है और न कर सकेगा जिसमें निराकार ईश्वर के नामों, पठन-पाठन, राजधर्म, आश्रम व्यवस्था तथा खण्डन-मण्डन आदि अनेकों विधियों के सागर को गागर में भर दिया है। 'सत्यार्थ प्रकाश' ने संसार भर में धूम मचा दी है। आज मुसलमान और ईसाई

भी अपने धर्म ग्रन्थों की व्याख्या तर्क संगत करने का प्रयास करने लगे हैं। देश-विदेश में इन ग्रन्थों को पहुँचाने के लिये हमें उन देशों की भाषा के जानकार मिशनरी पैदा करने होंगे। देश में विश्वविद्यालय स्तर पर महर्षि के वेद भाष्य तथा सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों का समावेश पाठक्रम में करवाकर उनको जनमानस तक पहुँचाने में सफल हो सकते हैं। 'सत्यार्थ प्रकाश' में महर्षि ने चन्द्रमा आदि ग्रह-उपग्रहों पर जीवन की जो चर्चा की है उसमें थोड़ा परिवर्तन अपेक्षित है, क्योंकि चन्द्रमा पर अभी तक जीवन के कोई लक्षण नहीं मिले हैं। सम्भवत: महर्षि ने पृथ्वी के आधार पर ही अन्य ग्रहों पर जीवन होने की बात लिखी हो।

प्रेमनाथ

आर्यसमाज के अधिकारी व अन्य अपने, आपको ऊँचे कार्यकर्त्ता मानने व कहने वाले भी ऋषि के वेदभाष्य का स्वाध्याय अथवा अन्य शास्त्रों व स्मृतियों को नहीं पढ़ते, अतएव वे अपना सुधार नहीं कर सकते तो वे देश-विदेश में दूसरों का क्या कर सकेंगे। जो व्यक्ति कहता है कि ऋषि के ग्रन्थों में ऐसे स्थल हैं, जिनको उनमें हटाना चाहिये उनका स्वाध्याय अधूरा है विचार पूर्वक नहीं। वे ऋषि को अर्थात् उसके ग्रन्थों द्वारा प्रतिपादित वैदिक सिद्धान्तों को समझ नहीं पाये।

डॉ० प्रशांत कुमार

मेरा जीवन महर्षि के ग्रन्थों के आधार पर गढ़ा गया है। मैं जो कुछ हूं, वह उनके ग्रन्थों के ही आधार पर है। देश-विदेश में जिसने भी भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार किया, वह महर्षि के ही ग्रन्थों के आधार पर किया, क्योंकि उन्हीं की दृष्टि वैज्ञानिक व युगानुकूल है। उन्हीं के प्रचार व प्रसार की आवश्यकता है। संसार की प्रत्येक भाषा में उनका अनुवाद पहुंचना चाहिए। महर्षि के किसी भी ग्रन्थ का कोई भी अंश बदलने की आवश्यकता नहीं है, कुछ की व्याख्या व उनका स्पष्टीकरण अवश्य किया जाये।

प्रहलाद दत्त वैद्य

महर्षि दयानन्द जी के ग्रंथ अध्ययन करने से आत्मिक, शारीरिक और सामाजिक उन्नतियों की पूंजी मिली है। देश-विदेश में इनका प्रभाव सर्वविदित है। ऋषि के ग्रंथों का प्रचार; प्रसार करने के लिए प्रत्येक देश की भाषा (लिपि) के लिए अनुवाद हो और सम्बन्धित देशों के मंत्रालयों में इनकी प्रतिलिपि भेजी जाये। और उनसे-मिलकर आग्रह भी किया जाये। हां, ये ठीक है, ऋषि ग्रंथों में ऐसे स्थल हो सकते हैं जिन पर कुछ विवाद अथवा भ्रम सम्भव है, उनका निराकरण, समाधान एवं स्पष्टीकरण आवश्यक है, किन्तु इन वाक्यों को ग्रन्थ से हटाना उचित नहीं है। ये कार्य स्वाध्यायशील विद्वानों का है।

पं. बिहारी लाल शास्त्री

ऋषि दयानन्द के 'सत्यार्थ-प्रकाश' ने मुझे अपार प्रेरणा दी। मेरा जीवन ही बदल गया। मैं कोई स्थल ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का बदलना नहीं चाहता।

भगवान चैतन्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के ग्रंथों के कारण मेरे जीवन में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ है उनके स्वाध्याय से पतनावस्था से उठकर मैंने बाह्य और आन्तरिक उन्नति प्राप्त की है, शिक्षा प्राप्त की है तथा आत्मिक शान्ति प्राप्त की है। महर्षि के ग्रन्थों से मेरे जीवन में जो मोड़ आया है यदि वह न आता तो मैं आज संभवतः नीचातिनीच अवस्था में पड़ा होता। महर्षि के मुझ पर इतने उपकार हैं कि खून की प्रत्येक बूंद भी उनकी विचारधारा के प्रचार-प्रसार में लगा दूं, तब भी उऋण नहीं हो सकता हूं। ग्रन्थों से कोई भी स्थल हटाने योग्य नहीं है। यह ठीक है कि सामान्य पाठक कई बार कई स्थानों पर बड़ी भ्रान्तियों के शिकार हो जाते हैं मगर इसका उपचार स्थलों को निकाल देना नहीं है, बल्कि शंका निवारण से यह कार्य हो जाता है। मेरे जीवन में ऐसी घटनाएं घटी हैं। ऋषि जी के ग्रन्थ अत्यधिक तर्क संगत, युक्ति संगत एवं वेदानुकूल हैं तथा देश-देशान्तर में अपना प्रभाव जमाने में पूर्ण समर्थ हैं। हां, ग्रन्थों का सरलीकरण किया जा सकता है, मगर मूल सिद्धान्तों पर कोई आंच नहीं आनी चाहिए।

डॉ. भवानी लाल भारतीय

मैंने स्वामी जी के सभी ग्रन्थों को गम्भीरतापूर्वक पढ़ा है। इनका मेरे जीवन पर जो प्रभाव पड़ा उसी के कारण मैं आर्य-समाजी बना। आर्य-समाज के साहित्य की सेवा कर सका तथा आज भी देश के सर्वश्रेष्ठ विश्वविद्यालय में दयानन्द शोधपीठ के अध्यक्ष का कार्य कर रहा हूं। स्वामी जी के ग्रन्थों को सभी देशों में प्रचारित करने के लिये योजनाबद्ध कार्य होना चाहिए। उनके ग्रन्थों में से किसी भी स्थल पर हटाना अनुचित है, क्योंकि उसका दायित्व तो ग्रन्थकार पर ही है।

मदन गोपाल खोसला

हमारे परिवार में पौराणिक विचार थे। स्वामी जी के ग्रन्थ पढ़कर हमें पूर्ण रूप से वैदिक धर्म पर आस्था हो गई है। सन्तोषजनक सहायता मिली है, पर प्रचार कम है। जिन देशों में भेजना चाहते हैं उनकी भाषा में अनुवाद होना चाहिए। प्रचार हेतु यदि कुछ स्थल काटने पड़ें तो कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

डॉ. मण्डन मिश्र

आर्य-समाज के ग्रन्थों ने राष्ट्रीयता, हिन्दी भाषा का प्रचार और विश्व बंधुत्व का सन्देश हम सबको दिया है और उनका हम सबके जीवन पर प्रभाव है। वर्तमान युग के सन्दर्भ में विश्व की विभिन्न भाषाओं में उनका अनुवाद होना चाहिए, जिससे सारा विश्व उनसे लाभ उठा सके।

मुल्कराज भल्ला

'सत्यार्थ प्रकाश' को मेरे जीवन पर बहुत प्रभाव है। मन में हर बुराई से ऊपर उठने की इच्छा रहती है। जीवन यज्ञमय बनाना चाहता हूं। जहां तक हो सके

दूसरे के भले की सोचता हूं। विदेशों में मैंने कोई प्रचार नहीं देखा। जैसे ईसाई लोग अपने ग्रन्थ मुफ्त बांटते हैं हमें भी विदेशों की भाषाओं में ग्रन्थ बांटने चाहिए।

यशपाल वैद

महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों का किसी भी पाठक पर समुचित प्रभाव होना स्वाभाविक ही है और इसी रूप में स्वामी जी के ग्रन्थों का मुझ पर प्रभाव इस रूप में पड़ा कि असत्य को जीवन में न आने देने का भरसक प्रयत्न है। मारिशस एवं दक्षिणी अफ्रीका जैसे देशों में इन ग्रन्थों के माध्यम से आर्य-समाज के प्रचार-प्रसार में सन्तोषजनक कार्य हुआ है। अपने सहयोगी प्राध्यापक जयदेव आर्य दो वर्ष अफ्रीका में नैरोबी-केनिया के आर्य-समाज में रहे और सन्तोषजनक कार्य किया। यह तो सर्वविदित है कि आर्य-समाज के अनुयायी विश्व भर में हैं, उन तक ये ग्रन्थ पहुंच रहे हैं। ऋग्वेदादि भाष्य-भूमिका में चन्द्रमा और सूर्य में प्राणी—जैसे स्थलों को अवश्य बदला या हटा जा सकता है। 'सहशिक्षा'—जैसे स्थल को भी अब फिर से देखना-विचारना होगा।

डॉ. रघुबीर वेदालंकार

महर्षि के ग्रन्थों से ही मेरे व्यक्तिगत जीवन का निर्माण हुआ है। उन्होंने मुझे दिशा दी है, चेतना दी है, जीवन दिया है, मेरा वर्तमान एवं भविष्य दिया है। मैट्रिक में पढ़ते समय कहीं से सत्यार्थ प्रकाश मेरे हाथ में आ गया। फिर क्या था जीवन की धारा बदल गयी। गुरुकुल जाना, संस्कृत पढ़ना यह सब उनका ही परिणाम है। इन ग्रन्थों के विशेषकर 'सत्यार्थ प्रकाश' के आधार पर ही देश-विदेश में इतना प्रचार हुआ और गैर आर्य समाजियों के पास में ग्रन्थ देखे जाते हैं। मुझे 'सत्यार्थ प्रकाश' मेरे एक सनातनी मित्र ने दिया था। एक चिलम पीने वाला कनकटा साधु 'सत्यार्थ प्रकाश' का प्रचार करता देखा गया। इन ग्रन्थों को सभी देशों तक पहुंचाने के लिए उन देशों की भाषाओं में इनका अनुवाद पूर्णतः तथा अंशतः करना चाहिए। वहां के क्षेत्रीय व्यक्ति अथवा बाहरी व्यक्ति वहां की भाषा सीखकर इनका प्रचार वहां कर सकते हैं। मैं महर्षि के ग्रन्थों में कोई स्थल ऐसा नहीं समझता जिसमें परिवर्तन अथवा उनको पूर्णतः हटाने की आवश्यकता हो। हां टिप्पणों से अथवा व्याख्या आदि के माध्यम से स्पष्टीकरण किया जा सकता है।

राजकुमार कोहली

'सत्यार्थ प्रकाश' ने देश-विदेश में आर्य-समाज के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाही है। इस कार्य को बढ़ाने के लिए महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों की उपयोगिता आज भी कम नहीं हुई है। इन ग्रन्थों को अन्य भाषाओं में छाप कर इसे लोगों तक पहुंचाया जा सकता है। महर्षि के ग्रन्थों में मेरे विचार में कोई हटाने जैसी बात नहीं है।

कु० विद्यावती आनन्द

ऋषि दयानन्द के जिन ग्रन्थों को मैंने पढ़ा है उनका मेरे व्यक्तिगत जीवन पर प्रबल प्रभाव पड़ा है। इन ग्रन्थों के माध्यम से देश-विदेश में आर्य-समाज के प्रचार-

प्रसार में कहां तक सहायता मिली है, इस विषय में मुझे पूरा ज्ञान न होने के कारण मैं कुछ भी कहने में असमर्थ हूं। इन ग्रन्थों के कुछ स्थलों को हटाया जाना चाहिये या नहीं, इस विषय पर आर्य-संन्यासियों और आर्य-विद्वानों को मिल कर विचार करना चाहिये।

विद्यानन्द सरस्वती

मेरे व्यक्तिगत जीवन पर महर्षि के ग्रन्थों का पूरा प्रभाव है। संसार की प्रमुख भाषाओं में बुद्धिजीवियों के लिये उच्च कोटि का और सामान्य जनों के लिये सामान्य स्तर का साहित्य तैयार करके भेजना सार्वदेशिक सभा तथा आर्य-समाजों को करना चाहिए। महर्षिकृत ग्रन्थों में प्रतिपादित सिद्धान्तों के आधार पर स्वतन्त्र ग्रन्थों का प्रणयन आवश्यक है। महर्षि के ग्रन्थों में कुछ स्थल ऐसे हैं, जिन पर विद्वानों को मिल कर विचार करना चाहिए।

डॉ० वेदप्रकाश वैदिक

महर्षि के ग्रन्थों का मेरे जीवन पर काफी प्रभाव पड़ा है। न केवल मेरे व्यक्तिगत जीवन को ढ़ालने में उनके ग्रंथों ने असर डाला है, अपितु मेरी चिन्तन प्रणाली और मेरी शुरू-शुरू की लेखन-शैली पर भी स्वामी जी का असर पड़ा। स्वामी जी के ग्रन्थों को पढ़कर मेरे मन पर सबसे बढ़ी छाप यह पड़ी है कि सच्चाई को खोजने में और लिखने में किसी भी प्रकार का लिहाज नहीं करना चाहिए और यह भी कि इस सत्य की यात्रा में किसी पर व्यर्थ आक्रमण करने की नीयत भी नहीं होनी चाहिए। हालांकि अब मुझे ऐसा लगता है कि स्वामी जी की चाहे नीयत न हो, लेकिन उनकी रचनाओं से कई लोग बहुत आहत हो जाते हैं। फिर भी मैं कहूंगा कि स्वामी जी के मूल ग्रंथों से एक शब्द भी नहीं हटाया जाना चाहिए। हां, प्रसार के लिए नये साहित्य का निर्माण किया जा सकता है जिससे लोग असहमत तो हों लेकिन आहत न हों। इस तरह के साहित्य का अनुवाद भारत और दुनियां की प्रमुख भाषाओं में होना चाहिए।

वैद्यनाथ शास्त्री

महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों का मेरे व्यक्तिगत जीवन पर जो प्रभाव पड़ा है वह मेरे द्वारा लिखी गई ६० के लगभग ग्रन्थों से आकूतित किया जा सकता है। इन ग्रन्थों का ही प्रभाव है कि देश-देशान्तर में आर्य-समाज फैला है और आगे भी फैलेगा। देश-देशान्तर की भाषा में इन ग्रन्थों को सुलभ बनाया जाना चाहिए और इनके ज्ञाता प्रचारक विद्वान ही देशान्तर आदि में प्रचार करने को भेजे जाने चाहिए, ऋषि के ग्रन्थों के नाम लेकर ऊल-जलूल प्रचार करने वाले नहीं। ऋषि के ग्रन्थों में कोई ऐसी बात नहीं है जिसे हटाया जाये। इसके हटाने का हक भी किसी को प्राप्त नहीं है।

सत्यदेव विद्यालंकार

स्वामी जी के ग्रन्थ अनमोल हैं। ऋषियों की कृति में परिवर्तन करना उनके प्रति द्रोह होगा। अकेले 'सत्यार्थ प्रकाश' ने अद्भुत क्रांति की नींव डाली है। सौ

वर्ष बाद भी स्वामी जी की स्थापनाएं, विश्लेषण, राष्ट्र-निर्माण के विचार, मंडन और खण्डन, पूर्णतः सत्य हैं। ऋषि के लेखन और विचार-विज्ञान की कसौटी पर खरे उतरते हैं। उनकी सम्पूर्ण विचारधारा—यहां तक कि वेद भाष्य भी विज्ञान को ही प्रमुखता देते हैं। वैदिक ज्ञान और विज्ञान में कहीं मतभेद नहीं। समाज के विद्वानों ने इस दिशा में, सामंजस्य दिखाने में अभी तक प्रयत्न ही नहीं किया था, पं. गुरुदत्त जी को छोड़कर। अब करना चाहिए।

डॉ. सहदेव वर्मा

महर्षि के ग्रन्थों का अध्ययन करके कोई भी व्यक्ति अप्रभावित रह ही नहीं सकता। सच्चाई, सेवा, त्याग राष्ट्रीयता एवं सांस्कृतिक गौरव को जानने का ऐसा अदभुत कार्य गत अनेक शताब्दियों से नहीं हुआ। जिसने भी एक बार ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका को पढ़ाया, जिसने सत्यार्थ प्रकाश का मनोयोग पूर्वक अध्ययन किया, वह ऋषि की अबाध विद्वता, उदात्तता, से स्वाभिमान, स्वदेशाभिमान तथा गौरवपूर्ण वैदिक संस्कृति का प्रशंसक हुए बिना रह ही नहीं सकता।

सुदर्शन देव

ऋषि के ग्रन्थों के अध्ययन ने मुझे निश्चित प्रामाणिक, सत्यप्रिय, प्रखर बुद्धि नीर-क्षीर विवेकवान बनाया है। साथ ही मानवता एवं प्राणी मात्र के ईश्वर सन्तान होने का बोध तथा ईश्वर की सत्ता पर पूर्ण विश्वास कराया है। 'सत्यार्थ प्रकाश', संस्कार विधि, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका तथा छोटे-छोटे ग्रन्थ यथा व्यवहारभानु गोकरूणानिधि आदि ने आर्य-समाज तथा ऋषि का संदेश फैलाया है। सम्पूर्ण विश्व में फैले ऋषि अनुयायियों के लाभ के लिए हिन्दी के अतिरिक्त अन्य देशीय भाषाओं में इन ग्रन्थों, इनकी आस्थाओं का प्रचार होना चाहिए। रेडियो टेलीविजन आदि पर सीलोन रेडियो, मास्को, चीन, पाकिस्तानी रेडियो की तरह प्रसारण होना चाहिए एवं उनके कथानक आदि पर नाटक, सिनेमा फिल्में आदि बनानी चाहिए। कोई स्थल हटाने योग्य नहीं है। वेद पर आधारित ऋषि ग्रन्थ शाश्वत सत्य का उपदेश देते हैं। कुछ ऐतिहासिक वस्तु सामग्री यदि आज गलत सिद्ध हो गई, जैसे जैन-बौद्ध आदि एक ही धर्म होने सम्बन्धी बात है यद्यपि दोनों का पृथक होना पूर्णतः प्रमाणित नहीं है, फिर भी संक्षिप्त पाद टिप्पणी में राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द को तिमिर नाशक पुस्तक का सन्दर्भ देकर नवीन खोज का उल्लेख भी किया जा सकता है। ऋषि ग्रन्थों को उनके अधिकर्ता विद्वानों द्वारा व्याख्या एवं भाष्य उनको जटिलता या प्रतिभासित अनौचित्य मान सत्य का स्पष्टीकरण दे देंगे। कुछ बातें ऐतिहासिक स्थिति द्योतक होने से भी 'सत्यार्थ प्रकाश' से नहीं हटाई जा सकती। ऋषि के शब्द यथावत् रहने चाहिए, केवल व्याख्या ही बदल सकती है।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्ता

ऋषि के ग्रन्थों के अपने ऊपर प्रभाव का मूल्यांकन मुझे स्वयं करना उचित नहीं जान पढ़ता। इतना ही कहना पर्याप्त है कि मैंने अपना सारा जीवन ऋषि-ग्रन्थों

विशेषत:वेदभाष्यों के अध्ययन और उनकी शैली की वैज्ञानिकता, प्रामाणिकता और श्रेष्ठता सिद्ध करने में लगाया है तथा बी. ए., एम. ए. के अनेक पाठ्यग्रन्थों की टीकाओं में स्वामी जी की विचारधारा और शैली को इस प्रकार ओत-प्रोत किया है कि अध्यापक और छात्र दोनों ही अनजाने में उससे प्रभावित होकर उसे अपना अंग बना लेते हैं। मैंने मूक कार्य करना ही अच्छा समझा है। समाज का प्रचार-प्रसार सर्वत्र स्वामी जी के ग्रन्थों के मुख्य विचारों के आधार पर हुआ है। उनकी व्याख्या देशकालानुरूप होती ही है। 'सत्यार्थ प्रकाश' का विशेष योगदान प्रतीत होता है। वेद भाष्यों का अध्ययन विरल है।

स्वामी जी के ग्रन्थों को विश्व के कोने-कोने में प्रचारित और उपलब्ध कराने के लिए विश्व की अधिकतम भाषाओं में अनुवाद, संक्षिप्त संस्करण आदि प्रकाशित किए जायें और अनुदानित मूल्य पर वितरित किए जायें। ईसाइयों के समान कर्मठ अर्जुन (मिशनरी) तैयार किए जाएं। यह सब व्यय और परिश्रम साध्य है।

स्वामी जी की कुछ मान्यताएं और व्याख्याएं ऐसी अवश्य प्रतीत होती हैं जो आज के युग के अनुरूप नहीं हैं, अथवा जो तर्क पर पूरी नहीं उतरती यथा मंत्रों के साथ लिखे ऋषिनामो से सम्बन्धित और शूद्र विषयक लेख। परन्तु मैं उन्हें ग्रन्थों से निकालने के पक्ष में नहीं हूं। आज के संदर्भ में ऐसे विषयों पर सार्वदेशिक धर्म-सभा सोच-विचार कर समाज का दृष्टिकोण व्याख्या के रूप में या स्वतन्त्र रूप में प्रस्तुत करती रहे, क्योंकि मान्यताओं की बदलते युग के अनुरूप आगे भी व्याख्या अपेक्षित रहेगी।

हरिकिशन मलिक

मैं जो कुछ भी बन पाया हूं महर्षि के ग्रन्थों कारण ही बन पाया हूं। मौरीशस, केन्या आदि विदेशों में भी आर्य-समाज का प्रचार इन्हीं ग्रन्थों के कारण हो पाया है। महर्षि के ग्रन्थों में कोई भी शब्द ऐसा नहीं जो अनुपयोगी रहा हो अथवा आज अनुपयोगी हो गया हो। इसलिए महर्षि के ग्रन्थों का कोई स्थल भी हटाने योग्य नहीं। महर्षि के ग्रन्थों को सभी देशों तक पहुँचाने के लिए वही साधन अपनाने चाहिए जिनको अपनाकर ईसाई लोग बाईबल जैसी पुस्तक को घर-घर पहुंचा रहे हैं।

७

आर्य समाज के सिद्धान्त और उनकी उपयोगिता

प्रश्न

आप एक पक्के आर्य-समाजी हैं ? हम जानना चाहते हैं कि आप अपने जीवन एवं व्यवहार में आर्य-समाज के सिद्धान्तों को कितना अपना सके हैं ? अपने जीवन के सन्दर्भ में बतायें कि आर्य-समाज के सिद्धान्त आज कितने व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं।

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

आर्य-समाज के सिद्धान्तों का मुझ पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। देशभक्ति, राष्ट्रप्रेम तथा भारतीय संस्कृति में मेरी आस्था बढ़ी है।

अमरनाथ कांत

मैं पक्का आर्य-समाजी नहीं हूं, कारण कि मेरे अन्दर ईर्ष्या द्वेष की अग्नि, प्रलोभन तथा शरीर में आलस्य और क्रोध भी रहता है। जब से मैं विकलांग हुआ हूं तब से मन मस्तिष्क अस्थिर-सा रहता है। स्वाध्याय में भी कमी आ गई है। आर्थिक परिस्थितियां बिगड़ जाने से सबका-सब नियम बिगड-सा रहा है। आर्य-समाज के सिद्धान्तों से ही उत्थान हो सकता है। आज के युग की कुरीतियां हैं, भावुकता है, दुश्चरित्रता है, उससे बचा जा सकता है। जब मानव-समाज का चरित्र सुधर जायेगा तो समाज की सम्पूर्ण कुरीतियां दूर हो जायेंगी। आर्य-समाज के साप्ताहिक पारिवारिक सत्संगों से अवश्य लाभ होगा।

प्रो० कृष्णलाल

मैं नहीं कह सकता कि मैं आर्य-समाज के सिद्धान्तों को कितना अपना सका हूं, परन्तु आर्य बनने का प्रयत्न करता हूं। नियमित उपासना तो नहीं हो पाती, परन्तु साप्ताहिक सत्संग में अवश्य जाता हूं। आर्य-समाज के सिद्धान्तों की व्याव-

हारिकता और उपयोगिता उसी प्रकार है, जैसे ईश्वर में विश्वास और सत्य पर आचरण की। निश्चित ही यह मार्ग कठिन और कण्टकाकीर्ण है। कई बार जीवन कठिन लगने लगता है, परन्तु अन्ततोगत्वा अपने और सबके कल्याण का कोई दूसरा मार्ग भी नहीं है।

जगतराम आर्य

आर्य-समाज के सिद्धान्तों को अधिक से अधिक मैंने अपने जीवन में घटाने का प्रयास किया है। आर्य व्यवहार के कारण ही मैं अपने क्षेत्र में लाखों लोगों में लोकप्रिय हूं, आर्य-समाज को ही इसका श्रेय है। आर्य-समाज के सिद्धान्त आज भी बहुत अच्छे व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं, परन्तु आर्य-समाज के सिद्धान्तों पर चलना तलवार की धार के ऊपर चलने के बराबर है, कोई बच्चों का खेल नहीं।

डॉ० दुखनराम

हम केवल आर्य-समाजी हैं, पक्के-कच्चे का कोई प्रश्न नहीं है। हम पूर्ण रूप से आर्य-सिद्धान्तों का पालन करते हैं। आर्य-समाज के सिद्धान्त जितने व्यावहारिक पहले थे उतने ही आज भी हैं।

धर्मेन्द्र गुप्त

'पक्का आर्य-समाजी' तो एक नारा है, और इस नारे को लोग खूब भुना रहे हैं, सुख-सुविधायें बटोर रहे हैं, विशेष रूप से दिल्ली में। मैं किसी नारे से अपने को बांधना नहीं चाहता, किन्तु इतना अवश्य कहना चाहता हूं कि मुझे जन्म से ही आर्य-समाज के संस्कार मिले हैं। मुझे इस बात का गर्व है कि मेरे दादा जी श्री जवाहरलाल गुप्त को फतेहतुर, उत्तरप्रदेश में स्वामी जी को देखने, उनके विचार सुनने और उनके हाथ से प्रसाद पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इससे उनके जीवन की धारा ही बदल गई। मैंने अब तक जीवन में जो संघर्ष किया है, और दिल्ली में रहकर भी गलत स्थितियों से, भौतिकवादी मान्यताओं से समझौता नहीं किया तथा गलत को गलत कहकर ही नहीं, लिखकर भी व्यक्त किया है, वह शायद स्वामी जी के संघर्ष पूर्ण जीवन की ही प्रेरणा है। और आज भी जो अन्धविश्वासों, गलत सामाजिक मान्यताओं, भ्रष्ट राजनीति तथा शोषण के विरुद्ध सामान्य जन के हक के लिए अपने अन्दर संघर्ष करने की शक्ति पाता हूं या बेचैनी अनुभव करता हूं, वह आर्य-समाजी संस्कारों का ही सुफल है। इस सबके बाद भी मैं अपने को मात्र एक मनुष्य और मनुष्यता में विश्वास रखने वाला ही कहना चाहता हूँ, क्योंकि 'पक्के आर्य-समाजी' लोगों की भीड़ में मुझे अपने खो जाने का भय है, और साथ ही 'पक्के आर्य-समाजी' आज जिस जड़ स्थिति में जी रहे हैं, उससे भी मुझे गतिहीन हो जाने का डर है।

प्रताप सहगल

मैं पक्का आर्य-समाजी था कभी। आज नहीं हूं, आज मुझे आर्य-समाज एक मृत संस्था जैसी लगती है। कभी मुझे आर्य-समाज के सिद्धान्त बहुत महत्वपूर्ण लगते थे,

आज नहीं, अब और भी बहुत कुछ जड़ हो गया है।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

हमें पक्के आर्य-समाजी होने का गर्व है और आर्य-समाज के सिद्धान्तों को हम आज भी व्यावहारिक तथा उपयोगी मानते हैं। सत्य का सिद्धान्त महर्षि को सबसे अधिक प्रिय था और हम भी सत्य के समर्पित अनुयायी हैं और इसी सत्य निष्ठा के आधार पर आज हमें आर्य-समाज तथा जीवन में अत्यधिक सम्मान प्राप्त है। मेरे पिताजी श्रीकृष्ण चन्द्र आर्य तथा धर्म पिता श्री रणजीत आर्य एम०ए०, एल०एल०बी, सिद्धान्तवाचस्पति तो सत्य तथा वैदिक-धर्म के साक्षात अवतार कहे जा सकते हैं। यहां तक कि आपने व्यक्तिगत लाभ के लिए भी अपने सिद्धान्तों का परित्याग नहीं किया है। हमारे परिवारों में शाकाहारी भोजन ही बनता है और सिद्धान्त दोनों परिवारों को इतने प्रिय थे कि जन्म व प्रदेश की सीमायें लांघकर उन्होंने हम दोनों को एक दूसरे के जीवन साथी के रूप में चुना। मेरी जन्म भूमि जम्मू काश्मीर का ग्राम कांगडी है तो मेरी धर्म पत्नी की गुलाबी नगरी जयपुर। मैंने विज्ञान में स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण कर कॉलेज प्रवक्ता के रूप में १६ वर्ष पूर्व राजकीय राजपत्रित कर्मचारी के रूप में सेवा आरम्भ की थी, लेकिन हमने पांचवी श्रेणी तक पहुंचते-पहुंचते ही सम्पूर्ण हवन, मन्त्र तथा संध्या के मन्त्र कण्ठस्थ कर लिए थे। परिवार में दोनों समय यज्ञ होता है। मेरे पिताजी को एक बार छाती में भयंकर फोड़ा हो गया था और डॉक्टरों ने कच्चे अण्डों का लेप करने को कहा, परन्तु पिताजी ने मृत्यु के भय में भी सिद्धान्तों से हटना स्वीकार न किया। प्रभु-कृपा और दृढ़ आत्मिक बल से आप उस रोग से भी मुक्त हो गये थे। ईश्वर के प्रति उनका विश्वास विकटतम स्थितियों में भी नहीं डगमगाया है। मेरी जीवनसंगिनी डॉ० यशोदा आर्या, गुरुकुल, नरेला की प्रथम स्नातिकाओं में से एक हैं। उन्होंने वेद विभूषिता, व्याकरणाचार्य, शास्त्री, एम०एम० पी०एच०डी० के साथ 'सत्यार्थ प्रकाश' की सत्यार्थ-शास्त्री परीक्षा भी उत्तीर्ण की है। उनके पितृगृह में भी दैनिक यज्ञ आदि सभी सिद्धान्तों का पालन होता है और सेवा निवृत्ति के पश्चात् वानप्रस्त में प्रवेश कर ज्वालापुर चले गये हैं। यह आर्य-समाज के प्रति निष्ठा का ही कारण है कि डॉ० यशोदा आर्या राजकीय सेवा न कर आर्य प्रतिनिधि सभा, जम्मू-काश्मीर द्वारा संचालित वैदिक औरियण्टल कॉलेज, जम्मू के प्राचार्य पद पर अवैतनिक कार्य दो वर्षों से कर रही है। दोनों परिवारों में पुत्र, पुत्रियों के विवाह अति सादे ढंग से, परन्तु पूर्ण वैदिक रीतिअनुसार हुए हैं। इस प्रकार अपने जीवन के सन्दर्भ से मैं कह सकता हूं कि आर्य-समाज के सैद्धान्त आज भी व्यावहारिक और उपयोगी हैं। हमारे विरोधी (सिद्धान्तिक मतभेदी) भी हमारी सत्यानिष्ठा व न्यायप्रियता पर उंगली नहीं उठा सकते हैं।

प्रेमनाथ

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है आर्य-समाज के अधिकारी व अन्य सदस्य व उपदेशकादि पहले जैसे आचार, लगन, श्रद्धा व स्वाध्याय वाले नहीं रहे। अब

देश-विदेश में पाप-लीला आगे से भी अधिक बढ़ गई है। आर्य-समाज के सिद्धान्त तो सब वैदिक सिद्धान्त हैं। वेद सब कालों में उपयोगी है, क्योंकि वेद ईश्वरीय ज्ञान है और एक रस अखण्डित है। आर्य-समाज तो अब कोई वास्तविक ठोस वेद प्रचार का कार्य नहीं कर रहा।

डॉ. प्रशान्त कुमार

आर्य-समाज किसी चिड़िया का नाम नहीं है। किसी व्यक्ति का भी नाम नहीं है। आर्य-समाज एक सिद्धान्त है। उसे मैं मानता हूं। जहाँ तक पक्का आर्य-समाजी होने का प्रश्न है—इसका अर्थ स्पष्ट है। यदि आर्य-समाजी आर्य-समाज की किसी ग्रन्थि से ग्रस्त है तो मैं वैसा आर्य-समाजी नहीं हुं। कोई भी व्यक्ति ऐसा दावा नहीं कर सकता कि उसने व्यावहारिक रूप से आर्य-समाज के सभी सिद्धान्तों को अपना लिया है। वह यही कह सकता है कि वह उसके सिद्धान्तों से सहमत है। यह ऊपर कह चुका हूं कि आर्य-समाज के सिद्धान्त पूर्णतः व्यावहारिक हैं।

पं० बिहारीलाल शास्त्री

आपने बड़ी फुर्सत में प्रश्न तैयार किये हैं। मेरे पास समय नहीं, जो उनके उत्तर क्रम में लिखूं। नारियों के सम्बन्ध में आर्य-समाज की विचारधारा समाज के लिए बहुत हितकारक है, किन्तु उनमें इस विचारधारा का प्रचार कुछ नहीं। पुराने अन्ध-विश्वास नये रूपों में नारियों में फैल रहे हैं। आर्य-समाज का प्रचार अब धीमा है। न वह तड़प है और न उत्साह, जो पचास वर्ष पहले था। नेता बनने का चाव सैकड़ों जनों में है, किन्तु बलिदान की भावनायें न्यून हो रही है। एक घटना बलिदान की लिखकर हम अपनी लेखिनी को विराम देते हैं। सन् १९१४, २८ नवम्बर, रविवार को आर्य-समाज सराय तरीन का साप्ताहिक अधिवेशन था कि मुसलमानों ने आक्रमण कर दिया। हम लोग अन्दर हाल में चले गये। किवाड़ें अन्दर से बन्द कर दीं। मुसलमानों ने किवाड़ तोड़कर जो पहली लाठी मारी तो प्रधान जी के सिर से रक्त का फव्वारा फूटा। प्रधान थे वहां के प्रथम श्रेणी के रईस साहू शिव चन्द। उन्होंने पुकारकर कहा, सब कहो "वैदिक धर्म की जय।" याद रखो कि बलिदानों से जातियां जीवित हुआ करती हैं, मरती नहीं। प्रधान जी के इन शब्दों ने सब में अपार उत्साह भर दिया। सबने हंसते-हंसते प्रसन्नता से चोटें खाईं। मैं भी एक चोट खाने वालों में था। साहू शिव-चन्द्र रईस थे। वार्ष्णेय वैश्य थे, किन्तु उनमें धार्मिक जोश क्षत्रियों जैसा था। अपने धर्म को वे प्रेम बलिदानी ब्राह्मणों की भांति करते थे। मैं एक स्वतन्त्र लेख भेजने को था, किन्तु अब इन प्रश्नों ने सब समय ले लिया।

भगवान चैतन्य

मैं स्वयं को पक्का आर्य-समाजी समझता हूं। मैं महर्षि जी के सिद्धान्तों के विरुद्ध कोई भी काम करने की कल्पना तक भी नहीं कर सकता हूं। आर्य-समाज के सिद्धान्त आज भी अत्यधिक उपयोगी हैं। कठिनाई केवल यही है कि आज का व्यक्ति धार्मिक दीखना तो चाहता है मगर बनाना नहीं चाहता। ऐसे व्यक्ति के लिये ये

सिद्धान्त अव्यावहारिक लग सकते हैं। दूसरे उन लोगों के लिये भी ये अव्यावहारिक लग सकते हैं जो केवल भावना के स्तर पर ही धार्मिक हैं, क्योंकि आर्य-समाज के सिद्धान्त व्यक्ति को भावात्मकता से हटाकर क्रियात्मकता की ओर ले जाने का आह्वान करते हैं। ये स्वर्णिम सिद्धान्त पूर्णरूप से व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं तथा वास्तव में ही विश्व शान्ति के मूलधार हैं।

डॉ० भवानीलाल भारतीय

आर्य-समाज के सिद्धान्त अत्यन्त व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं। उन्हें अधिकांश मैंने अपनाया भी है।

मदनगोपाल खोसला

हम केवल पचास प्रतिशतअपना सके हैं। अत्यन्त उपयोगी हैं, सिद्धान्तों में कट्टरता नहीं होनी चाहिये।

डॉ० मण्डन मिश्र

मैं पक्का आर्य-समाजी नहीं हूं। एक सनातनी ब्राह्मण हूं। फिर भी आर्य-समाज की जो अच्छाइयां हैं, उनको स्वीकार करता हूं। जो लोग पक्के आर्य-समाजी हैं—उनसे मैं आग्रह करता हूं कि वे हठी न होकर आर्य-समाज के सिद्धान्तों को व्यवहार में लाने का प्रयत्न करें।

मुल्कराज भल्ला

आर्य-समाज के सिद्धान्त जीवन में बहुत उपयोगी हैं—ऐसा मैंने ५० साल की आयु के वाद अनुभव किया—इनका मेरे पर जो प्रभाव हुआ वह प्रश्न ६ में लिख दिया है।

यशपाल वैद

आर्य-समाज के सिद्धान्त किसी भी व्यक्ति द्वारा अपनाये जायें तो उसका इसमें हित ही है, इसलिए मेरी दृष्टि में किसी भी व्यक्ति को पक्का या कच्चा आर्य-समाजी का लेविल लगाना अनिवार्य नहीं—जो व्यावहारिक दृष्टि से सत्य मार्ग पर चलता है—वह आर्य-समाजी है। मैं भी इस गुण को काफी हद तक अपने जीवन में अपना चुका हूं। आर्य-समाज के सिद्धान्त व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं।

डॉ० रघुवीर वेदालंकार

मैं आर्य-समाज के सिद्धान्तों को जीवन एवं व्यवहार में पूर्णतः अपनाने का यत्न करता हूं। उदाहरणार्थ वेद का पढ़ना, पढ़ाना, अर्थ शुचिता, सत्य के ग्रहण एवं असत्य त्याग में तत्परता, सबसे धर्मानुसार आचरण करना, संध्या, यज्ञ, शिखा, सूत्र, मद्य, मांस आदि से दूर रहना, ऐसे नियम हैं जो मेरे दैनिक जीवन एवं व्यवहार का अंग है। आर्य-समाज के सिद्धान्त आज भी पूर्णतः व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं।

राजकुमार कोहली

मैं पक्का आर्य-समाजी हूं और मेरे पिताजी भी कट्टर आर्य-समाजियों में से एक थे। आर्य-समाज के सिद्धान्त मुझे बहुत प्रिय हैं और मेरे परिवार में पूर्ण शाकाहारी भोजन ही पकता है और खाया-खिलाया जाता है। हम निराकार ईश्वर को ही मानते हैं।

कु० विद्यावती आनंद

में पक्की आर्य-समाजी हूं। अपने जीवन के संदर्भ में मैं कह सकती हूं कि आर्य-समाज के सिद्धान्त आज भी उतने ही व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं जितने पहले थे।

विद्यानंद सरस्वती

मैंने अपने जीवन तथा व्यवहार में आर्य-समाज के सिद्धान्तों को प्रायः पूरी तरह अपनाया है। आज भी वे सिद्धान्त व्यावहारिक भी हैं और उपयोगी भी। दूषित वातावरण के कारण कष्ट साध्य अवश्य हैं।

डॉ० वेदप्रताप वैदिक

मैं पक्का आर्य-समाजी हूं या नहीं, यह मैं खुद कैसे कहूं, इसकी जांच तो दूसरे लोगों को करनी चाहिए। इतना जरूर जानता हूं कि बचपन में आर्य-समाज के सानिध्य में जो संकल्प बने थे ईश्वर की कृपा से आज तक उनसे डिगने का दुर्भाग्य नहीं हुआ है। आर्य-समाज के सिद्धान्तों का आज के जमाने में उपयोग ही उपयोग है और उनका व्यवहार ही व्यवहार होना चाहिए।

वैद्यनाथ शास्त्री

आर्य-समाज के सिद्धान्त सर्वथा व्यावहारिक और उपयोगी है। अनुपयोगिता हमारी और आपकी कमजोरियां हैं कि हमने उन्हें ठीक तरह से अपनाया नहीं और यह हमारी बर्बरता है कि हम अपनी कमजोरियों के आधार पर आर्य-समाज के सिद्धान्तों की व्यावहारिकता को तौलना चाहते हैं। यदि हम वर्णव्यवस्था और आश्रम व्यवस्था को नहीं कायम कर सके तो हमारी कमजोरी है। इसके आधार पर आर्य-समाज के इन सिद्धान्तों को क्या अव्यावहारिक कहा जा सकता है। हमने अपने जीवन में पालन किया और ठीक ही उतरे हैं।

सत्यदेव विद्यालंकार

आर्य-समाज के सिद्धान्तों को जीवन में लाने का यत्न चल रहा है। पूर्णता कैसे प्राप्त होगी। जैसे 'भरत और सत्य' है वैसे ही समाज के सिद्धान्त मिसाल सत्य हैं।

डॉ० सहदेव वर्मा

मैं ऋषि का अनुयायी तो हूं किन्तु चाहने पर भी अनुयायी नहीं बन पा रहा हूं। कहां हिमगिरि का उत्तुंग शिखर और कहां बौना इन्सान ?

सुदर्शन देव

आर्य-समाजी तो पक्का कहलाना पसन्द करता हूं, किन्तु आत्मालोचन से अपनी दुर्बलताओं पर उतना ही लज्जित अनुभव करता हूं जैसा कि महाराजा जसवंत सिंह ने वेशयागामी होने के जघन्य अपराध पर फटकार सुनकर ऋषि के सम्मुख लज्जा अनुभव की थी। केवल कुछ सीमा तक खानपान तथा अभिजात्य की बुझती हुई परम्परा के अतिरिक्त मुझमें आर्य-समाजीपन पक्का है। आर्य-समाज के सिद्धान्त आज ही नहीं युग-युगों तक व्यावहारिक एवं उपयोगी हैं। केवल सही व्याख्याकार हर युग में उनका लोक-हितार्थ परिस्थितिगत विश्लेषण करते हुए व्याख्या कर लोगों का मार्ग दर्शन करें, इतनी ही बात है।

डॉ० सुधीरकुमार गुप्त

मैं मानता हूं कि पर्याप्त पक्का विचारशील युक्त्युनुरूप व्यवहार करने वाला आर्य-समाजी हूं। मेरे व्यवहार में कोई ऐसा आचरण मेरी दृष्टि में नहीं है जो आर्य-समाजी न हो। मेरे में न्यूनताएं और दोष मानव स्वभाववश अवश्य हैं।

यदि सिद्धान्तों से अभिप्राय दस नियमों से है, तो वे मेरे जीवन काअभिन्न अंग हैं। वे पूर्ण व्यावहारिक और उपयोगी हैं। मुझे उनके अनुसार जीवन बिताने में कोई घोर आपत्ति नहीं आई। स्मरण रहे मै कट्टरपन्थी नहीं हूं, बुद्धि वादी हूं।

हरिकिशन मलिक

अपने विषय में कुछ कहने में संकोच हुआ करता है। फिर भी इतना बताये देता हूं कि मैंने अपने जीवन में आर्य-समाज के सिद्धान्तों के अनुसार चलने का भरसक यत्न किया है और मैंने कहीं मार नहीं खाई। मेरे अनुभव में यही आया है कि आर्य-समाज के सिद्धान्तों से अधिक व्यावहारिक और उपयोगी और कोई सिद्धान्त नहीं है।

८

आर्यसमाज के सिद्धान्त और उनकी व्यावहारिकता

प्रश्न

कृपया बतायें कि आपके परिवार में आपके बाद आने वाली नयी पीढ़ी आर्य-समाज के सिद्धान्तों में कितनी आस्था रखती है तथा वह उन्हें अपने जीवन में किस प्रकार उतारना चाहती है ? कृपया अपने पुत्र/पुत्री के उल्लेख के साथ अपनी बात स्पष्ट करें।

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

नई पीढ़ी में अब तक कोई दिलचस्पी नहीं है।

अमरनाथ कांत

मेरे परिवार के सभी सदस्य आर्य-समाज को भली प्रकार से जानते हैं और सिद्धान्तों को भी मानते हैं, परन्तु क्रियात्मक रूप में अभी अल्प-आयु होने के कारण से नहीं आये हैं । मेरे पुत्र-पुत्री धर्म-पत्नी आर्य-समाज के सतसंगों में जाते हैं। छोटे पुत्र ने आर्य वीर दल की शाखा में जाने की कई बार इच्छा प्रकट की, परन्तु खेद है कि शाहदरा क्षेत्र में किसी समाज में आर्य वीर दल की कहीं कोई भी शाखा नहीं लगती है, ना ही किसी समाज में आर्यकुमार सभा है। इतना होते भी वह अपने आपको आर्य-समाजी कहते हैं।

प्रो० कैलाशनाथ सिंह

यदि हम निष्ठावान हैं तो सन्तान पर उचित प्रभाव पड़ेगा। हमारी सत्यता उनका मार्ग निर्देशन करेगी।

प्रो० कृष्णलाल

मेरे पुत्र और पुत्री आर्य-समाज के सिद्धान्तों से कुछ परिचित हुए हैं। वे उनसे सहमत भी हैं, परन्तु उनकी मां का पौराणिक और अन्ध-विश्वास से युक्त प्रभाव

भी पड़ता है। यद्यपि वे आर्य-समाज के सत्संगों में जाने में रुचि लेती है। साथ ही आस-पास की चोरी, झूठ, बेइमानी को वे देखते हैं। समझने पर उन्हें आर्य-समाज की बात समझ में आती है। अंग्रेजियत एक बहुत बड़ी चुनौती है जिसकी ओर सरकार का तो ध्यान है ही नहीं, अनेक आर्य-समाजी भी उसी धारा में बह रहे हैं।

जगतराम आर्य

मेरे परिवार में मेरी पत्नी, तीन सुपुत्र, दो सुपुत्रियां आर्य-समाज के सिद्धान्तों पर आस्था और श्रद्धा तो रखते हैं, अवैदिक रीति-रिवाज में नहीं पड़ते, परन्तु कमी यह है कि जैसे मैं चाहता हूं कि बाहर निकलकर तन-मन-धन से आर्य-समाज का ही काम करें, आर्य-समाज के काम के अलावा दूसरा लक्ष्य ही नहीं होना चाहिए वह बात नहीं है, जितना मैं चाहता हूं आर्य-समाज के काम में उतनी रुचि नहीं लेते। भावना तो है, परन्तु भावना से कर्त्तव्य ऊंचा है। मैं चाहता हूं, जैसे मेरे सिर पर आर्य-समाज का भूत सवार है ऐसे ही पूरे परिवार के सिर पर आर्य-समाज का भूत सवार हो। सब परिवार आर्य-समाज का दीवाना हो। ऐसा न होने से मुझे बहुत खेद है।

डॉ० दुखनराम

हमारी अगली पीढ़ी हमसे भी अधिक आर्य-सिद्धान्तों का पालन करने में सक्षम है। अपने जीवन में उन्हें उतारने की आस्था हार्दिक रूप से रखती है।

देवेन्द्र आर्य

ठीक है, मैं आर्य-समाज का सदस्य होने के नाते आर्य-समाजी हूं मैंने अपने जीवन में वैदिक सिद्धान्तों को अपनाने का यथा साध्य प्रयत्न किया है और आने वाली सन्तति में भी आस्था बनाये रखने को प्रयत्नशील हूं।

धर्मेन्द्र गुप्त

मेरा परिवार या कि मेरे बच्चे आर्य-समाज में आस्था कैसे रख सकते हैं जब चारों ओर घोर भौतिकवादी और पश्चिमी सभ्यता छाई हुई है। जबकि सत्ता की ओर से भारतीयता को मिटाया जा रहा है, हिन्दी को समाप्त किया जा रहा है और अंग्रेजी को लादा जा रहा है। साथ ही आज के आर्य-समाजी नेता आंख मूंदकर इस सारी स्थिति को सह रहे हैं, बल्कि कुछ तो सत्ता से जुडकर हां में हां मिलाना अपना धर्म मानते हैं। इसी का यह परिणाम है कि अनेक ढोंगी अवतारों ने जन्म ले लिया है, और स्वामी दयानन्द जी की भूमि पर ढोंग और अन्धविश्वास को खुलेआम बढ़ा रहे हैं। बाल योगेश्वर, रजनीश, महेश योगी, जय गुरुदेव जैसे धर्म के नाम पर पाखण्ड फैलाने वाले, ढोंगी कहीं भी आर्य-समाज से चुनौती नहीं पाते हैं, न हीं कहीं आर्य समाज इनके लिए चुनौती बन सका है। आज आर्य-समाज के नाम पर चलने वाली डी० ए० वी० संस्थाएं पैसा पैदा करने की मशीन बन गई हैं, जहां घोर अवसरवादी आ जुटे हैं और जहां दयानन्द के नाम पर 'भौतिक सुविधाओं को लूटने' की पूरी छूट

मिली हुई है। मेरे बच्चे भी, सारे भारत के बच्चों की तरह ही, इस हीन भावना में जी रहे हैं कि उनका जन्म भारत में क्यों हुआ, पश्चिम में क्यों नहीं हुआ।

प्रताप सहगल

मेरे बच्चे आर्य-समाज के विषय में कुछ खास नहीं जानते, हां कभी-कभी मेरे पिता जी हवन करवाते हैं या कभी जब वे मेरे बच्चों के साथ प्रभात फेरी या शिवरात्रि का वर्णन करते हैं तो उन्हें कुछ पता चलता है। मैं अपने बच्चों पर कुछ भी लाद नहीं रहा। मैं चाहता हूं वे स्वयं धीरे-धीरे चीजों को समझें और वे भी अपना सत्य स्वयं खोजें। जब वे कुछ पूछते हैं तो जवाब जरूर देता हूं, लेकिन लगता है कि आज भी समाज का बड़ा हिस्सा अन्धविश्वासों तथा धर्माडम्बरों की गिरफ्त में है। स्वयं आर्य-समाजी इन आडम्बरों के सबसे बड़े शिकार हैं।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

मेरी एक मात्र पुत्री दस वर्षीय मनीषा आर्या आर्य-समाज के कार्यों में बढ़-चढ़कर भाग लेती है और आर्य-समाज के प्रति उनकी निष्ठा प्रशंसनीय है। आर्य समाज के सिद्धान्तों का उसे अपनी आयु से बढ़कर ज्ञान है और तर्क में आर्य-समाज के पुरोहित उपदेशकों को भी मात कर देती है। वह अपने शिक्षक वर्ग से भी आर्य-समाज के विरुद्ध कुछ नहीं सुन सकती है और अपना पक्ष सिद्ध करके ही रहती है। अतः हम आशा कर सकते हैं कि यह आस्था उत्तरोत्तर बढ़ती ही रहेगी, कम नहीं होगी।

प्रेमनाथ

मेरे परिवार में सब वैदिक सिद्धान्तों में आस्था रखते हैं।

डॉ० प्रशान्त कुमार

मुझे गुरुकुल कांगड़ी में पढ़ने का अवसर मिला था, पर मेरी सन्तान—पुत्र विराट, दिव्य कीर्ति व पुत्री को यह अवसर नहीं मिल सकेगा।

दिव्य कीर्ति ने अपनी प्राथमिक शिक्षा आर्य-समाजी स्कूल विरमानी पब्लिक से उत्तीर्ण की है। दोनों बच्चे घर पर प्रायः प्रतिदिन हवन करते हैं। दोनों ही बच्चों को हम आर्य-समाज द्वारा आयोजित भाषण प्रतियोगिताओं में भेजते हैं। मेरे पुत्र विराट दिव्य कीर्ति का एक लेख—हिंसा हटाओ अहिंसा लाओ—आर्य जगत में प्रकाशित हुआ है। आजकल वह एक आधुनिक गुरुकुल विद्यानिकेतन, पिलानी में सप्तम कक्षा का छात्र है।—महर्षि दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट आश्रम व्यवस्था को मैं पसन्द करता हूं। मेरी पुत्री भी पंचम कक्षा के बाद किसी आश्रम में रहेगी।

भगवान चैतन्य

मैं स्वयं तो कट्टर पौराणिक परिवार में से था, मगर मेरे तीनों पुत्र अभी से महर्षि के दीवाने हैं। हालांकि अभी उनकी आयु छोटी है, मगर जैसा आमतौर पर

होता है कि किसी आर्य का बच्चा भी किसी पौराणिक से अधिक ज्ञान गरिमा रख सकता है। मुझे अपने तीनों पुत्रों पर पूरा विश्वास है। पुत्रों पर विश्वास है कि वे तन-मन-धन से आर्य-समाज के प्रति समर्पित होंगे।

डॉ० भवानीलाल भारतीय

मेरे परिवार के लोग तथा मेरे पुत्र-पुत्री भी आर्य-समाज में पूर्ण आस्था रखते हैं। किन्तु सम्भवतः वे इस संस्था के लिये उतना योगदान नहीं कर सकेंगे, जितना मैं कर सका हूं।

मदन गोपाल खोसला

हमारे परिवार में हमारी सन्तानों को आर्य-समाज के सिद्धान्तों के प्रति हमारे से अधिक आस्था है। हमारा एक पुत्र है। पुत्र और पुत्र वधू नित्य प्रति यज्ञ करते हैं। दो पुत्रियां हैं। उनके घरों में भी नित्य प्रति यज्ञ होता है। पुत्र आर्य-समाज में होने वाले झगड़ों के कारण समाज में नियम पूर्वक नहीं जाता।

डॉ. मण्डन मिश्र

मेरे पुत्र और पुत्री भी महर्षि के 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' इस आदर्श के अनुयायी हैं और इस आदर्श को स्वीकार करते हैं और यह आवश्यकता महसूस करते हैं कि आज विश्व को आर्य बनाने की सबसे अधिक आवश्यकता है।

मुल्कराज भल्ला

मेरा ऐसा जीवन पिछले १०-१५ साल से है। पहले मेरा व्यवहार एक उद्योगपति का था। उस क्षेत्र में भी लोगों में मेरा मान था। लोग समझते थे कि मैं ठीक ही बात करता हूं। मेरे दो पुत्र और पुत्रियां हैं—पुत्रों में बड़ा सज्जन बन सकेगा, कुछ ट्रेनिंग की जरूरत है। बाकी तीनों पक्के आर्य-समाजी तो नहीं, परन्तु जीवन में ज्यादा मात्रा में आर्य-समाजी धारणा के हैं। मेरी दोनों पुत्रियां सचाई की हामी हैं—बुरे कर्म से दूर हैं।

यशपाल वैद

मेरी दोनों पुत्रियां इस बात के लिए उत्साहित हैं कि वे अपने जीवन में सद्मार्ग को ही अपनायेगी, उनको किसी बन्धन में बांधने की चेष्टा मैंने नहीं की, (वैचारिक बन्धन)।

डॉ० रघुबीर वेदालंकार

मेरे परिवार में अभी तक एक पुत्र (६ वर्ष) तथा पुत्री (२ वर्ष) हैं। इसलिए अभी से उनकी पृथक आस्था तो अनभिव्यक्त है। हां, हमारे पारिवारिक जीवन का उनके ऊपर स्पष्ट प्रभाव पड़ रहा है। उदाहरणार्थ मेरा पुत्र मेरे साथ धोती कुर्ता पहनकर आर्य-समाज में जाने की स्वतः जिद्द करता है। मैं उसे अपने स्थानीय आर्य-समाज में ले जाता भी हूं। मेरा यज्ञोपवीत देखकर जबरदस्ती उसने भी

यज्ञोपवीत पहना (यद्यपि आयु कम होने से अभी उसका यज्ञोपवीत संस्कार नहीं किया गया है)। मुझे संध्या करते देखकर ढाई वर्ष की अवस्था में वह समझता था कि मैं बैठा-बैठा सो रहा हूं। जब उसे बतलाया कि ऐसे संध्या करते हैं तो वह भी आसन लेकर थोड़ी देर आंख मींच कर बैठता है। पूछने पर बोला कि मैं मन में कहता हूं 'हे भगवान मुझे बुद्धि दो।' हम पारिवारिक यज्ञ भी करते हैं। वह भी उसमें आहुति डालने एवं आचमन आदि में आनन्द लेता है। इससे मेरी यह धारण दृढ़ हो गयी कि बच्चे माता-पिता के व्यवहार से सीखते हैं। यदि नयी पीढ़ी आर्य-समाज में नहीं आ रही तो कमी बच्चों की नहीं माता-पिता की है।

राजकुमार कोहली

मेरे परिवार में नयी पीढ़ी को आर्य-सिद्धान्तों में दृढ़ आस्था है, परन्तु वह ऐसे कार्यक्रमों की अपेक्षा करते हैं जिनमें युवा वर्ग को अधिक से अधिक भूमिका निभाने को मिले तथा आर्य-समाज, समाज में व्याप्त वर्तमान कुरीतियों को दूर करने का बीड़ा उठाये।

कु० विद्यावती आनन्द

नई पीढ़ी आर्य-समाज के सिद्धान्तों में आस्था नहीं रखती, परन्तु यह बीमारी आर्य परिवारों तक ही सीमित नहीं। यह महामारी तो सारे हिन्दू-समाज में फैलती नजर आती है। नई पीढ़ी धर्म से विमुख होती जा रही है, परन्तु इसका सारा दोष हमारी पीढ़ी पर है। इस पीढ़ी के जीवन में कुछ ऐसी कमियां आ गई हैं, इसके आदर्शों का ऐसा अवमूल्यन हो गया है कि यह नई पीढ़ी को वह दे नहीं पाती जो देना चाहिये था।

विद्यानन्द सरस्वती

मेरी सन्तान की आर्य-समाज के सिद्धान्तों में आस्था है, किन्तु उसकी वर्तमान अवस्था के कारण (जिसे वह मेरे माध्यम से भली प्रकार जानती है) आर्य-समाज नाम के संगठन में अनास्था बढ़ती जाती है। तथापि मेरे परिवार के कुछ सदस्यों का वेद तथा महर्षि दयानन्द की मान्यताओं के प्रचार-प्रसार में सक्रिय योगदान है।

डॉ० वेद प्रताप वैदिक

मेरे पुत्र सुपर्ण और पुत्री अपर्णा भी अपने आप ही हमारी शैली में ढल रहे हैं। हमें कोई खास प्रयत्न नहीं करना पड़ रहा है।

वैद्यनाथ शास्त्री

यह प्रश्न हमारा व्यक्तिगत है। हमारे पुत्र नहीं है—पुत्री मात्र है। पुत्र के विषय में कहना हमारे लिए व्यर्थ होगा। जहां तक पुत्री का सम्बन्ध है, वह हमारे सिद्धान्तों को मानती है। परन्तु आप यह भूल न जायें कि पुत्री का सम्बन्ध समाज के उस व्यक्ति से भी हो जाता है कि जो आर्य-सामाजिक नहीं। इसका कारण यह है कि

अपने को आर्य सामाजिक कहने वाले अभी जातपांत से निकले नहीं और अपना समाज नहीं बना सके। आर्य-समाजी कहता तो है कि आर्य-समाजी है, परन्तु विवाह आदि के समय वह अपने को हिन्दुओं से पृथक आर्य-समाजी नहीं सिद्ध करवाता है। वह आर्य-समाजी लड़की व लड़के को स्वीकार करने को तैयार नहीं होता है।

सत्यदेव विद्यालंकार

समाजों में होने वाले विवादों और ओछे झगड़ों ने मेरे पुत्रों को समाज में सक्रिय नहीं होने दिया। सर्वत्र पुरानी पीढ़ी ने नई पीढ़ी को पनपने से रोका। जहां तक पुत्रियों का सम्बन्ध है—वे मेरे परिवार के आर्य-संस्कारों को अपने-अपने ससुराल में ले गई है।

डॉ० सहदेव वर्मा

नयी पीढ़ी के सम्बन्ध में मैं आश्वस्त हूं। मेरे दोनों पुत्र आर्य-समाज और ऋषि के सिद्धान्तों को समझने का प्रयास तो करते ही है, व्यवहार में उतारने का भी प्रयत्न करते हैं। कम से कम इस प्रश्न के उत्तर में मैं इन दोनों को 'होनहार बिरवान' कहने की धृष्टता कर सकता हूं।

सुदर्शन देव

नई पीढ़ी में मेरी जैसी आस्था तो नहीं है। कारण मैंने भी अपने अनुरूप उन्हें बनाने का यत्न नहीं किया किन्तु अपने पूर्वजों की धरोहर के रूप में मान्यता अवश्य देते हैं। एवं मेरा अनुमान है उन्हें चुनौती मिलने पर उनके प्रति अपनी दृढ़ता को सशक्त शब्दो में व्यक्त एवं कुछ सीमा तक निर्वाह भी कर सकते हैं। पुत्री पराये घर जाने से उस घर की धार्मिक मान्यता के साथ आर्य समाजीपन की मान्यता को निजी अन्तरंग एवं पितृकुल से प्राप्त धन की तरह ही धारण कर सकती है। पुत्र पर इस बिन्दु के प्रारम्भिक शब्द लागू माने जा सकते हैं।

डॉ० सुधीर कुमार गुप्त

मेरे तीन पुत्र और एक पुत्री है। पुत्री श्रीमती सुवेशी रानी गुप्ता यद्यपि एक सनातनी परिवार में गई है और वहां के रीति-रिवाजों में अपने को ढालना पड़ा है तथापि वह वेद की विदुषी है और शतपथ ब्राह्मण के तादात्म्यों पर जो शोध। प्रबंध लिख रही है। उसमें ऋषि की धारा आद्योपान्त देखी जा सकती है। उसका अध्ययन भी इससे प्रभावित रहता है। पुत्रों पर भी पर्याप्त गहरे संस्कार हैं, परन्तु अब मैं अधिक परिचित नहीं हूं। उन्हें आर्य-समाजों की दलबन्दी और झगड़ों मे घृणा अवश्य हो गई है, जो उन्होंने बचपन से वयस्क होकर मेरे साथ रहते हुए देखे हैं।

हरिकिशन मलिक

मेरी कोई और सन्तान नहीं है। भतीजों को गुरुकुल कांगडी में कई वर्ष पढ़ाया था, परन्तु निराशा ही हाथ आई। भतीजों में कोई ऐब तो नहीं, परन्तु जो कुछ मैं उन्हें बनाना चाहता था, वह नहीं बन पाये।

९

वेदों की सार्थकता एवं उनके प्रचार के उपाय

प्रश्न

वेद किसी देश, काल अथवा जाति विशेष के लिए नहीं हैं, जबकि अन्य धर्म-ग्रंथ किसी स्थान विशेष और किसी जाति के लोगों को अधिक महत्त्व देते हैं अथवा उन्हीं के कल्याण की बात करते हैं। आपकी राय में ऐसे कौन से कारण हैं जिनकी वजह से लोग वेदों से विमुख होते जा रहे हैं ? आप बतायें कि किस प्रकार वेदों की वाणी को आज जन-जन तक पहुंचाया जा सकता है ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

वेद वाणी के प्रचार का सर्वोत्तम साधन होगा उसका सरल टीका सहित विभिन्न भाषाओं में प्रकाशन एवं वितरण।

अमरनाथ कांत

आज के मानव में उच्छंखलता अधिक आ गई है, जैसे विषय-वासना, दूषित आहार-व्यवहार, बनावट, श्रृंगार, दिखावा ये सब विदेशी विधर्मी साहित्यकारों की देन हैं, इनसे लोग आर्य-समाज से विमुख हो गये हैं, अन्य मतमतान्तरों की ओरनहीं जा रहे हैं और केवल अपना स्वार्थ सिद्धकर रहे हैं। केवल राजनेताओं की ही मन-मानी कर रहे हैं। इसलिए अब आपको आर्य-समाज मन्दिर क्लब नहीं, सत्संग-भवन धर्म-प्रचार स्थान बनाना है। सत्संग का समय केवल प्रधान मन्त्री जी, मन्त्री जी की सुविधा के लिए नहीं आम जनता के लिए होना चाहिए। इसमें युवकों को, युवतियों को भूलना नहीं चाहिए। मन्त्री परिषद में व अन्तरंग सभा आदि में अवश्यमेव रखना चाहिए।

प्रो० कैलाशनाथ सिंह

उत्साह के साथ उच्चस्तरीय प्रचार तथा प्रसार वेदों के वैज्ञानिक आधार का

देश-विदेश के विश्वविद्यालयों ने भाषण माला द्वारा प्रसार तथा अन्य प्रचार साधनों द्वारा उनके विस्तार का प्रयत्न करना चाहिए।

प्रो. कृष्ण लाल

वेदों की वाणी को सुबोध बनाकर जन-जन तक पहुंचाने का प्रयास ही नहीं हो रहा। दूसरे साहित्य का अल्पमूल्य होना भी आवश्यक है। कुछ पौराणिक कथाओं की वेदानुसार व्याख्या भी आवश्यक है। वैदिक भावनाओं को ललित कलाओं के माध्यम से भी आगे पहुंचाना चाहिए। सबसे बड़ी आवयश्कता यह है कि प्रचारकों का चरित्र अनुकरणीय हो।

जगतराम आर्य

वेद ईश्वरीय ज्ञान है और मानव मात्र के लिये हैं। ईश्वर पक्षपाती नहीं है। दूसरे धर्म ग्रन्थों के रचने वाले पक्षपाती हैं, उन्होंने अपने धर्म के अनुयायियों के लिये चिकनी चुपड़ी बातें लिखकर सस्ती मुक्ति का मार्ग दर्शाया है। कुकर्म करते हुए भी अपने धर्म-आचार्यों के प्रति श्रद्धा-आस्था रखने से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। वेद मार्ग पर चलने के लिये तो बन्धन और त्याग की आवश्यकता है। बिना संस्कृत पढ़े वेद नहीं पढ़े जा सकते, संस्कृत का प्रचार नहीं है, इस कारण मनुष्य स्वाध्यायशील नहीं हैं। संस्कृत पढ़कर ही वेदों का स्वाध्याय हो सकता है।

डॉ० दुखनराम

हमारी राय में वेदों से विमुख होने का कारण अज्ञानता है। इसी के चलते वेद विमुख हो रहे हैं। केवल अधिक प्रचार से दुबारा वेदवाणी जन-जन तक पहुंचायी जा सकती है।

देवेन्द्र आर्य

वर्तमान में जो वेद भाष्य उपलब्ध है, उनमें केवल महर्षि के भाष्य को छोड़ कर अन्य भाष्य (मैक्समूलर, ग्रिफिथ आदि विदेशीय विद्वानों के भाष्य) केवल सायण के भाष्य पर आधारित है। सायण का भाष्य भी उस समय की रूढ़ियों व वातावरण से प्रभावित था। यदि सायण महर्षि के समय में होते तो ऐसा भाष्य न करते। महीधर के भाष्य में तो अश्लीलता व प्राकृतिक नियमों की अवहेलना की पराकाष्ठा है। ऐसे ही भाष्यों में वाम मार्ग, चोली मार्ग आदि गन्देमार्ग का अनुसरण करने लगे। मैक्समूलर का वह पत्र जो उसने अपनी पत्नी को लिखा है उसके मनोभावों का दिग्दर्शन कराता है। मेरी दृष्टि में सायण व मैक्समूलर के भाष्य को अविकल रूप से प्रकाशित किया जाये और उसमें नीचे वैदिक सिद्धान्तानुसार उसका भाष्य प्रकरण व मय प्रमाणों के छापा जाय। टाइटिल जो वर्तमान में है वही होना चाहिए। ऐसा करने से मन्त्रार्थ ठीक से समझ में आ जायेगा।

धर्मेन्द्र गुप्त

आज जिस रूप में वेदों की व्याख्या की जाती है, वह एक 'काल्पनिक लोक' की वस्तु लगती है। आवश्यकता इस बात की है कि वेदों का आज के आदमी की जिन्दगी से जोड़ कर देखा जाये और उसकी व्याख्या इस रूप में की जाय कि आज का आदमी अपनी रोजी—रोटी के संघर्ष की प्रेरणा ग्रहण करे।

प्रताप सहगल

मेरी दृष्टि में वेद सारे ज्ञान का भण्डार नहीं है। यह हमारी अदूरदर्शिता और संकुचित मनोवृत्ति है कि हम उन्हें विश्व से समस्त ज्ञान-विज्ञान का भण्डार मान लेते हैं। इस हठधर्मिता को छोड़ना चाहिए और दूसरे ज्ञान-विज्ञान के विषयों के प्रति उत्सुकता जागृत करनी चाहिए। वेदों का प्रचार करना ही है तो वह संस्कृत के माध्यम से नहीं हो सकता। उनका सभी भारतीय भाषाओं तथा विश्व की दूसरी भाषाओं में अनुवाद होना चाहिए। प्रसिद्ध गायकों द्वारा उनके टेप तैयार किए जाने चाहिए। वेदों को पूजा की नहीं, अध्ययन की वस्तु बनाएं।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

आज हमारी मानसिकता की यह अवस्था है कि हम विदेशियों के वाक्य को तो प्रमाण मानते हैं परन्तु अपने देश के योग्यतम विद्वान की बात भी स्वीकार करने में झिझकते हैं। विदेशियों के भाष्य, जो सायण, महीधर, उब्बट आदि के भाष्यों पर आधारित हैं, को पढ़ने से किसी के मन में भी वेदों के प्रति अश्रद्धा और घृणा पैदा होना स्वाभाविक है। हिन्दुओं के धर्म-गुरु, जिनमें शंकराचार्य (चारों धाम के चार शंकराचार्य) भी सम्मिलित हैं, अगर स्वामी दयानन्द का भाष्य प्रमाणित मान लें तो समस्या का समाधान हो जाये। यही स्वार्थ आड़े आ रहा है। विश्वविद्यालयों में आज भी सायण का अश्लील भाष्य पढ़ाया जाता है। स्वामी दयानन्द का पूर्ण वैज्ञानिक वेद भाष्य आज भी नहीं पढ़ाया जाता है। इसी कारण लोग वेदों के प्रति आकृष्ट नहीं हो पा रहे हैं। जन-जन तक वेदों की वाणी पहुंचाने के लिये हमें वेदों की चुनी हुई सूक्तियां छपवा कर वितरित करनी चाहिएं।

प्रेमनाथ

जैसा कि मैं ऊपर लिख चुका हूं आर्य-समाज के बड़े अधिकारी भी वेदादि शास्त्रों का स्वाध्याय नहीं करते। वे जन-जन में वेदवाणी कैसे फैला सकते हैं? किसी वेद मंत्र का पाठ अर्थ सहित भी कर लेने से वह उसका स्वाध्याय नहीं कहा जा सकता, जब तक कि उस पर इसी प्रकार से मनन व आचरण न किया जाये।

डॉ. प्रशान्त कुमार

वेद मानव जाति के लिए उपयोगी हैं, पर वे केवल हिन्दुओं के धर्म-ग्रन्थ मान लिए गये हैं। हिन्दू इस समय अपने स्वार्थों से ग्रस्त हैं। वह अपनी भौतिक वृत्तियों को पूर्ण करने में लगा है। वह ही वेद निर्दिष्ट मार्ग का अनुसरण नहीं कर पा रहा।

बाकी का संसार क्या करें ?—यों विचारधारा की दृष्टि से वैदिक मार्ग का अनुसरण संसार के दूसरे देश करते हैं। हां वे यह नहीं जानते, न मानते हैं कि वे वेद द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर चल रहे हैं।—हमारे देश की शासन व्यवस्था (संविधान) वेद की हो, इसका हमें प्रयत्न करना होगा। बिना राज्य (संविधान) के हम केवल वेदों का नाम ले सकते हैं। उसके अनुसार समाज व राज्य का कल्याण नहीं कर सकते।—वेदवार्णाश्रम व्यवस्था को मानती है। आर्य-समाज ही उस पर ठीक प्रकार से नहीं चल रहा। यदि आर्य-समाज वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुसार चले तो उसके अनुसार शेष सारा देश भी उसका अनुसरण करेगा तथा सारा संसार उसका अनुगामी होगा।

भगवान चैतन्य

यह सत्य है कि वेद ज्ञान ही सृष्टि का प्राचीनतम ज्ञान है, त्रिकालबाधित एवं सनातन हैं तथा विज्ञान सम्मत हैं। किसी विशेष जाति, देश या काल के लिए यह ज्ञान नहीं है। वेदों के सम्बन्ध में अनर्गल प्रचार भी वेदों से विमुखता का एक कारण है। महीधर आदि ने कर्मकाण्ड परक ऐसे-ऐसे अश्लील अर्थ कर दिये हैं कि लोगों की उनके प्रति अरुचि स्वाभाविक है। दूसरी ओर पाश्चात्य विद्वानों ने तो वेदों को हाथ ही इसलिए लगाया ताकि आर्यों के 'मूल' को ही नष्ट-भ्रष्ट कर दिया जाए। आज भी वेदों के प्रचार-प्रसार का चाहे वह किसी भी क्षेत्र में है महर्षि दयानन्द को ही श्रेय जाता है। योगी अरविन्द के शब्दों में 'वेदों के वास्तविक अर्थों तक पहुंचने की आंखें केवल दयानन्द को ही मिली थी।" वेदों पर शोध हों, वेद संस्थान एवं प्रकाशन संस्थान और योग संस्थान खोलकर वहां पर वेदों के बड़े-बड़े विद्वान पैदा किए जायें आर्य-समाज का कर्तव्य ही यह है कि वह वेद को सरल-सुलभ रूप में प्रस्तुत करे तथा वेद के प्रचार-प्रसार में ही अधिक धन व श्रम व्यय करे। प्रकाण्ड विद्वान हाथों में वेद लेकर देश-देशान्तरों में भेजने की आवश्यकता है। इस दिशा में कार्य जितना होना चाहिए था, बिल्कुल भी नहीं हो पाया है। वेद का प्रकाश फैलाने वाले भिक्षुकों की परम आवश्यकता है।

डॉ. भवानी लाल भारतीय

वेदों की वाणी को जन-जन तक पहुंचाने के लिये आर्य-समाज को सुव्यवस्थित योजना बनाकर कार्य करना चाहिए।

मदन गोपाल खोसला

आर्य लोगों में बहुत संकीर्णता आ चुकी है, जिस कारण से सच्चे आर्य भी आर्य समाजों से विमुख हो रहे हैं। वेद पढ़ाने का कहीं पर भी कोई केन्द्र नहीं हैं, जहां लोग आ कर पढ़ सकें। जन-जन तक पहुंचने के लिए स्थान-स्थान पर वेद पढ़ाने के केन्द्र खुलने चाहिए। बड़े-बड़े अच्छे पोस्टर शहरों में लगने चाहिए जिसमें 'तमसो मा ज्योतिगम्य आदि' लिखा रहना चाहिए। समाज की चार दिवारी के बाहर उपदेश

होने चाहिए। कोई बहुत अच्छे प्रभावशाली उपदेशक हों जो अच्छी तरह से समाज के गुणों की व्याख्या कर सकें, जिससे लोग आकर्षित हों। बाहर के देशों की भाषाओं में अनुवाद होना चाहिए।

डॉ. मण्डन मिश्र

वेदों से विमुखता का कारण केवल दुर्भाग्य है और साथ ही स्वार्थमय प्रवृत्ति। अधिक से अधिक संस्कृत विद्यालयों की स्थापना के द्वारा हम जन-जन तक वेदवाणी पहुंचा सकते हैं।

मुल्कराज भल्ला

संस्कृत की शिक्षा न होने के कारण लोगों को मालूम ही नहीं वेदों में क्या भरा पड़ा है। सरल भाषा में वेदों को लोगों तक पहुंचाया जाये। सस्ता वैदिक साहित्य बहुत लाभकारी होगा। २००रु० या ४००रु० का वेद अनुवाद हर कोई नहीं ले सकता—भावार्थ बहुत ही सरल चाहिए।

यशपाल वैद

वेद सार्वभौम ग्रन्थ हैं किन्तु वेदों के कुछ भाष्य दकियानूसी भी हैं। ऐसे भाष्य सामने आएं जिनसे सामान्य जन का वास्ता हो और ऐसी सीधी-सच्ची बातें अवश्य उनके हृदय पर तुरन्त अनुकूल असर छोड़ेगी। आसान भाषा में भाष्य हों। प्रारम्भ में वैचारिक भिन्नता की बातों को वेशक न लिया जाये।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार

वेदों से विमुख होने से धर्म के नाम पर चलने वाले विविध मत-मतान्तरों, सम्प्रदायों की प्रमुख भूमिका है। वे अपने गुरु तथा अपने ग्रंथ विशेष का नाम चाहते हैं। इसके लिए हम वेदों की शिक्षा का लिखित तथा मौखिक रूप से प्रचार करें एवं संस्कृत पढ़ने में लोगों को प्रवृत्त करें, जिनसे वे स्वयं मूल वेद पढ़ सकें।

राजकुमार कोहली

वेदों का पढ़ना-पढ़ाना आज भी अधिकतर अपढ़ रूढिवादी पंडितों में ही है जो महर्षि के भाष्य को कोई महत्व नहीं देते हैं अतः जन-जन तक वेद पहुंचाने के लिए हमें अधिक क्रियाशील होकर वेद प्रचार करना होगा तथा महर्षि के वेद-भाष्य की श्रेष्ठता सिद्ध करनी होगी।

प्रो. रामगोपाल

मैं इस मत को स्वीकार नहीं करता हूं, कि लोग वेदों से विमुख होते जा रहे हैं। वास्तविक समस्या यह है कि जनसाधारण तक वेदों का मौलिक अभिप्राय नहीं पहुंच रहा है। इस बात की नितान्त आवश्यकता है कि वेदों के उदात्त विचारों को

सरल ढंग से साधारण जनता तक पहुंचाया जा सके। इसके लिए वेदों के सरल अनुवाद और उन पर सरल व्याख्यानों की आवश्यकता है।

कु. विद्यावती आनन्द

लोग वेदों से विमुख होते जा रहे हैं क्योंकि (१) उनको पता ही नहीं कि वेदों में कितना ज्ञान का भण्डार है। बहुतों ने तो वेद कभी देखे भी नही, (२) सब हिन्दू विशेषकर आर्य-समाजी कहते तो हैं कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है परन्तु उनके मन में वेद के प्रति वह श्रद्धा, वह निष्ठा, वह भक्ति भावना नहीं जो दूसरे धर्मावलम्बियों की अपनी धार्मिक पुस्तकों के प्रति है। इसका प्रभाव आम लोगों पर पड़ना स्वाभाविक है। जब तक वेदों को हम अपने मन्दिरों में एवं अपने घरों में श्रद्धा और भक्ति से प्रतिष्ठित नहीं करते, तब तक आम जनता के मन में, नई पीढ़ी के मन में इनके प्रति आदर और सत्कार की भावना पैदा नहीं हो सकती। वेदों के प्रति श्रद्धा, आदर और भक्ति को आर्य समाजी यह कहकर पनपने नहीं देते कि यह मूर्ति पूजा है, परन्तु यह विचार-धारा है सर्वथा गलत। अगर हम मानते हैं कि वेद ईश्वरी ज्ञान है तो इनके प्रति हमारे मन में श्रद्धा और भक्ति की भावना होनी ही चाहिए। जब हमारे मन में यह भावना पैदा हो जायेगी, तब हम वेदों की वाणी को जन-जन तक पहुंचा पाएंगे। वेदों का अन्य भाषाओं में भावार्थ सहित सरल अनुवाद करवाया जाये, विशेष कर वेद की उन ऋचाओं और उन मंत्रों का जो आम जनता की समझ में आ सकते हैं। सम्पूर्ण वेद ज्ञान आम जनता के लिए नहीं है। वेद ज्ञान के जो अंश आम जनता के जीवन को प्रभावित कर सकते हैं, उन अंशों का भावार्थ सहित सरल अनुवाद आम जनता के हाथ में पहुंचाने का प्रयत्न करना चाहिये।

विद्यानन्द सरस्वती

उर्दू का एक शेर है—

खुदा के बन्दों को देख करके, खुदा से मुनकिर हुई है दुनिया।
के ऐसे बन्दे हैं जिस खुदा के, वो कोई अच्छा खुदा नहीं है॥

इस शेर में यदि 'खुदा' के स्थान पर 'वेद' शब्द रख दिया जाये तो लोगों के वेदों से विमुख होने का कारण स्पष्ट हो जायेगा। कारण के ठीक हो जाने पर कार्य स्वत: ठीक हो जायेगा।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

मेरे विचार से यह प्रश्न ही गलत है कि लोग वेदों से क्यों विमुख हो रहे हैं। भारत के लोग वेदों के सम्मुख हुए कब थे? यहां तो हजारों साल से ढोंग-धतूरे का राज चल रहा है। इन्हीं लोगों की कृपा से वेदों को अगम्य और अबोध बनाया गया है, उनमें मूर्खतापूर्ण बातों का समावेश किया गया है। नीरद चौधरी जैसे अर्ध-शिक्षित बौद्धिकों तथा विश्वविद्यालयों के अपढ़ विद्वानों ने अपने प्रमाद के कारण वेदों का और भी विनाश किया। अच्छा हो कि आर्य-समाज और अरविन्द घोष की परम्परा

के अनुसार वेदों के सरल और पठनीय संस्करण प्रकाशित किए जाएं। उनका दुनिया की अनेकानेक भाषाओं में अनुवाद भी किया जाना चाहिए।

वैद्यनाथ शास्त्री

निःसन्देह वेद की शिक्षा सार्वभौम है, परन्तु वेद का प्रचार वे लोग करते हैं जिनके जीवन में वेद की शिक्षा को स्थान नहीं, और जो स्वयं वेद को नहीं जानते हैं। वेद को जानने और पालन करने वाले लोगों के द्वारा वेद की शिक्षा का प्रचार किया जा सकता है। वेद की बात को जानना नहीं और अपनी ही बात को वेद की कहना —ऐसे प्रचार से वेद का प्रचार नहीं हो सकता है। जो अपनी न्यूनताएं हैं वे हटाई जायें और वेद को सही रूप से सामने लाया जाये।

सत्वदेव विद्यालंकार

यह प्रश्न अस्पष्ट है। वेद विमुख कौन हो रहा है, समझ में नहीं आया। वेद ऐसा सत्य है जो भिन्न-भिन्न रूपों में मानव का कल्याण ही करता है। पश्चिमी विचार-धारा और अत्यन्त अर्थ प्रधान युग ने जो उथल-पुथल मचाई है, वह इतिहास में पुनः-पुनः जागृत होती रहती है।

डॉ. सहदेव वर्मा

यह तो सीधी सी बात है वेद सत्य का प्रतिपादक है, जबकि सत्य के तीव्र प्रकाश में काला धन्धा नहीं चल सकता, इसी कारण पाखण्डियों की आंखे चुधियाती हैं। वेद यह भी ठीक, वह भी ठीक का समर्थक नहीं। कर्म फल से बचना असंभव है, अतः लोग शतुर्मुग बनकर वेद की उपेक्षा करते हैं। प्रचार के साधनों को सम्पन्न कर, स्वयं वेद का अध्ययन कर तथा जिज्ञासुओं के लिए वेद संस्थान स्थापित कर उसके पठन-पाठन की व्यवस्था होनी चाहिए। प्राचीन गुरुकुल पद्धति विशेष सहायक है।

सुदर्शन देव

वेदों से विमुखता के कारण ये हैं—देश के धर्म-निरपेक्ष संविधान के कारण हिन्दुओं में अनेक व्यक्ति, प्रमुख सम्प्रदाय अपने प्रवर्तक की मान्यता या ग्रन्थों को मान्यता देते हैं। सामूहिक रूप में वे पुराणाभिमुख तुलसीकृत रामायण तथा गीता तक पहुंच रखते हैं। वेद दुर्बोध पिता के बाहर से आये उनके ऋषियों के ग्रन्थ वेद हैं इत्यादि स्कूली पाठ्क्रमों से प्राप्त निष्कर्षों को उनकी भावनाएं एवं विचार लोगों में होने से वे वेद के प्रति आत्मीयता का क्षीणतर अंश मात्र ही रखते हैं। राजनैतिक एवं आर्थिक मामलों में लोगों की दैनंदिन स्थिति सुबोध दिलचस्पी होने से वेद के बिना भी उनका यथेच्छ जीवन व्यवहार चल रहा है, इसलिए भी वे वेद को मानने या उसका यथोचित व्यवहार करना आवश्यक नहीं समझते। स्वयं आर्य-समाजी भी वयोवृद्ध बनते जा रहे हैं। लोगों का एक सम्प्रदाय इन नवीन वैचारिकता सम्पन्न लोगों की दृष्टि में बनता जा रहा है। इसलिए भी आर्य-समाज धुआँधार प्रचार तथा बीहड़ विमुखता जंगल में प्रवेश कर उन्हें झंकझोर नहीं रहा है। इस कारण भी लोग विमुख होते जा रहे हैं।

वेद को जन-जन तक पहुंचाने के लिए आर्य-समाज अपने आन्दोलन को जन आन्दोलन बनाए। राष्ट्रीय स्वयं सेवक युवकों के माध्यम से देश में गत ३६ वर्षों में ३६ गुने से अधिक फैला है। इससे उसको विश्व हिन्दू परिषद, राजनैतिक शाखा जन संघ, भारतीय जनता पार्टी के कितने करोड़ अनुमानिक मत दाता बने हैं। यह सब कार्य उसके प्रचार से संभव हो सका है। आर्य-समाज की विरुद्धवादी विचारधारा की तरह भा.ज.पा. या संघ की मान्यताएं भी तो कांग्रेस-कम्युनिस्ट आदि सभी राजनैतिक दलों के विरुद्ध है। फिर जब वे विरुद्धता के पहाड़ के होते हुए भी इतने सशक्त एवं लोकप्रिय हो सकते हैं। निरकारी, रजनीश, सतसई बाबा, जय गुरुदेव आदि तथा ईसाई आदि इतने प्रबल हो सकते हैं। अस्मिता पर संकट आने पर हिन्दू जब इतने संगठित आन्दोलन छेड़ सकते है कि पंजाब के तथा आस-पास के जन-जीवन को विध्वंस कर सकते हैं तो आर्य-समाज ठोस कर्म नहीं कर सके तो आवश्यकता है अधिक से अधिक ६०० प्रबुद्ध आर्यों को इस दिशा में स्थापित समिति द्वारा प्राप्त निष्कर्षों पर त्वरित ढंग से संपूर्ण देश में तथा विदेश में विदेशों की परिस्थिति के अनुसार कार्य बढ़ाने की।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्त

(१) न वेद सुलभ हैं, न सरलता से बोधगम्य। स्वाध्याय की प्रवृत्ति युग के प्रवाह में लीन होती जा रही है। मानव स्वभाव से ही कथनी और करनी में भेद करने का अभयस्त है। अतः वेदविमुखता है।

(२) इस विषय में गीता प्रेस, गोरखपुर से बहुत कुछ अनुभूति ली जा सकती है। भजन और भजनीक अच्छे शक्तिशाली माध्यम हैं, परन्तु उन द्वारा दी गई सामग्री का परिब्रह्मण परम आवश्यक है यह केवल उपदेशों और भाषणों से सिद्ध नहीं होगा। मनन आदि की सतत प्रेरणा परमावश्यक है।

हरिकिशन मलिक

वेदेत्तर धर्म ग्रन्थों में जो सत्य है वह वेदों का है और जो झूठ है वह उनका अपना है। वेदों से लोग इसलिए विमुख नहीं होते कि वेद की शिक्षा ठीक नहीं लगती, वास्तविकता यह है कि धर्म की चर्चा उन्हीं को सुहाती है जो अर्थ और काम में हुए नहीं होते। आज अधिकांश व्यक्ति कुकर्मों से कमाई करते हैं। वह वेद की बात सुनें तो उनका पाप का धन्धा छूट जाय। उन्हें ऐसे पाखण्डियों की बात अच्छी लगती है जो उनकी कमाई का कुछ भाग लेकर उन्हें स्वर्ग जाने का आश्वासन दे सकें। वेदवाणी को सुनने के इच्छुक होते हैं धर्मात्मा तपस्वी लोग। पाप की कमाई खाने वाले सिनेमा देखेंगे, कैबरे देखेंगे, परन्तु वेद वाणी को नहीं सुनेंगे। उनके घरों में मुफ्त वेद की पुस्तकें दे आओ तो भी वह उन्हें नहीं पढ़ेंगे। वेद की वाणी घर-घर पहुंचानी है तो आर्य-समाज राज्य सत्ता संभाले और सुराज्य की स्थापना करे। फिर लोग स्वयं वेदवाणी सुनने की मांग करेंगे।

१०

आर्य-समाज और स्त्री-स्वातन्त्र्य

प्रश्न

वेदों में स्त्रियों को सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। आर्य-समाज ने भी स्त्री-शिक्षा के प्रचार से उन्हें सम्मान एवं उचित स्थान दिलाने का बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य किया है। आज पाश्चात्य सभ्यता के फलस्वरूप स्त्री स्वातंत्र्य की बात बड़े जोरों पर है। इस सम्बन्ध में आर्य-समाज की भूमिका क्या होनी चाहिए ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

निश्चिय ही भारत की प्राचीन परम्परा में नारी-शिक्षा का उच्च स्थान था, किन्तु दासता के कारण परिस्थितियां ऐसी हुई कि बाल-विवाह का चलन हो गया और अब पाश्चात्य प्रभाव बढ़ता जा रहा है। प्रयत्न यह होना चाहिए कि प्राचीन वातावरण आधुनिक रूप में प्रस्तुत किया जाय।

अमरनाथ कांत

इसका कारण है कि हमने कभी भी उनको वह भयंकर भविष्य के परिणाम से अवगत नहीं कराया, जैसा कि विदेशों में आवारा निष्क्रय संतान हो रही है और उन्हीं के ही वे बालक हैं जो न कभी अपना आहार-विहार सुधार सकें और न अनुशासन में ही रह सकें। इसलिए प्रारम्भ में आर्य-समाज ने स्त्री-शिक्षा, धर्म, कर्तव्य जीवन, गृहस्थ जीवन का ज्ञानादि से देना चाहिए। केवल दूसरों को देख कर ही नहीं चलाना चाहिए, हमें अपने आपको भी देखना चाहिए। हमें कभी दूसरों की होड़ में नहीं लगे रहना चाहिए, जिससे हम नीचे गिरते हैं जो कि विदेशी दीक्षा हैं, शिक्षा है।

प्रो. कैलाश नाथ सिंह

पाश्चात्य सभ्यता की ओर बढ़ती हुई महिलाएं आर्य-समाज के सिद्धांतों से अनभिज्ञ हैं प्रचार-प्रसार सहृदयता और प्रेम के साथ (दोषदर्शी न होकर) नैतिक आधार पर हो। नारी का सम्मान आर्य-समाज करता है, किन्तु सीमा के बाहर नारी का स्वतन्त्र होना हितकर नहीं।

प्रो. कृष्णलाल

वेदों के आधार पर अपना प्रचार चालू रखें। बताया जाये कि आर्य-समाज ने स्त्रियों के लिये क्या किया। स्त्री-स्वातन्त्रय की बात वास्तव में बहुत कुछ उच्छं-खलता की सीमा तक पहुंची है और स्वयं स्त्रियों ने उसकी निन्दा की है। पुरुषों को भी नारी-सहयोग की शिक्षा देनी होगी।

जगतराम आर्य

पढ़ी लिखी स्त्रियों को पर्दा से घृणा है और वे पर्दे में नहीं रहना चाहती। स्त्रियों के लिये मेरे विचार में आर्य-समाज की भूमिका यह होनी चाहिए कि स्त्रियां दफ्तरों में सर्विस न करें, कन्याओं के विद्यालय, महाविद्यालयों में अध्यापिका काम ही करें, और अपने बच्चों को घर पर अच्छी शिक्षा देकर वीर और चरित्रवान बनाएं। सादा वेश-भूषा ही अपनाएं, फैशन न बनाकर वीरांगना और विदुषी भारतीय नारी का सबूत दें।

डॉ. दुखनराम

स्त्री स्वतन्त्रता के विषय में आर्य-समाज की भूमिका देश, काल परिस्थितियों के अनुकूल होनी चाहिये !

देवेन्द्र आर्य

जहां आर्य-समाज के कन्या गुरुकुल व महिला शिक्षा-केन्द्र हैं, वहीं से इसमें सुधार लाया जा सकता है। इस कार्य में महिला उपदेशिकाओं की विशेष आवश्यकता है।

धर्मेन्द्र गुप्त

मैं स्वामी जी को नारी-मुक्ति का प्रथम मंत्रदाता मानना हूं, किंतु आर्य-समाज की वर्तमान स्थिति समाज से कटी हुई है, अतः नारी मुक्ति का प्रश्न भी दूर है। अगर आर्य-समाज आज की सामाजिक रूढ़ियों से सीधे टकराने की बात स्वीकारता है तो भारतीय नारी गहरी राहत पायेगी,ऐसा मेरा विश्वास है।

प्रताप सहगल

स्त्री-स्वातन्त्रय को मात्र काम-सम्बन्धों की स्वतन्ता ही न मान लिया जाए सैक्ससुअल डिस्टोरशंस कोई नारी-स्वातन्त्य नहीं है, जबकि अधिकांशन ारियों ने यही

मान लिया है। आर्य-समाज इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है, बशर्ते कि इसका प्रचार करने वालों के ज्ञान-चक्षु भी खुले हों। आज नारी को आर्थिक और वैचारिक दृष्टि से स्वतन्त्र करने की जरूरत हैं। वही लोग जो नारी की वैचारिक स्वतन्त्रता की बात करते हैं, घर पर अपनी ही पत्नी या बेटी की वैचारिक स्वतन्त्रता का हनन करते हैं। यह स्वतन्त्रता देना इतना आसान नहीं है, जितना कि किताबों य अखबारों में लगता है। सबसे पहले आर्य-समाज को चाहिए कि वह नारियों को उनके अधिकारों के प्रति सचेत करे। पुरुषों को इस योग्य बनाएं कि वे घर में नारी का अपना-सा ही सम्मान करना सीखें। नारी स्वातन्त्रय को स्त्री पुरुष समानता की दृष्टि से नहीं, अपनी-अपनी जगह पर महत्व की दृष्टि से देखा जाना चाहिए। पाश्चात्य देशों में तो आज स्वयं नारियों ने यह अस्वीकार किया है कि वे पुरुष के बिना भी रह सकती हैं। हमें पश्चिम में उठे नारों का अनुकरण नहीं करना, बल्कि नारी स्वातन्त्रय के मानदण्ड स्वयं अपने ही देश-काल के अनुरूप बनाने हैं।

प्रो. प्रभूशुर आर्य

आर्य-समाज को आज एक बार फिर नारी-जाति के पश्चिमी सभ्यता के प्रति बढ़े मोह को तोड़ना है, तथा भारतीय संस्कृति के प्रति श्रद्धा को जागृत करना है। नारी को बतलाना होगा कि वैदिक सभ्यता तुझे ससुराल की साम्राज्ञी बनाती है जबकि स्वतंत्रता की रट लगाने वाली पश्चिमी सभ्यता मात्र भोग की एक वस्तु वैदिक सभ्यता में तू 'माता निर्माता भवति' है, तो पाश्चात्य सभ्यता मात्र सन्तान पैदा करने का यन्त्र, नारी जब अर्धनग्न होकर निकलेगी तो लोग भी उसे वासनामयी दृष्टि से अवश्य देखेंगे। नारी और नर एक दूसरे के पूरक हैं, विकल्प नहीं। नारी से ही गृह बनता है और तभी वह गृहिणी कहलाती है और जब वह घर छोड़कर बाहर आ जाती है तो गृह भवन बनकर रह जाता है और बच्चों का निर्माण उचित ढंग से नहीं हो सकता है?

प्रेमनाथ

स्त्री-शिक्षा बड़ी अच्छी बात है, परन्तु वह भी जब कि गुरुकुलपद्धति से हो और भौतिक विद्या के साथ अध्यात्म विद्या का ज्ञान भी देने वाली हो और आचार को ऊंचा करने वाली हो। आजकल सहशिक्षा के कारण अथवा धार्मिक शिक्षा के अभाव में स्त्रियों का आचरण गिर रहा है। फैशन व सिनेमादि विषय वर्धक बातों की ओर लड़के-लड़कियों की रूचि बहुत बढ़ रही है। कालेजों के शिक्षित स्त्री-पुरुषों (अर्थात् पति-पत्नी) के विवाह विच्छेद के बाद बहुत बढ़ रहे हैं। सरकार से अब शिक्षा संस्थाओं के लिये बहुत बड़ी सहायता लेने के कारण हमारा नियन्त्रण उन पर कुछ नहीं रहता और वेदों व शास्त्रों का प्रचार उनमें कैसे हो सकता है।

डॉ. प्रशांत कुमार

यदि पुरुष की स्वतन्त्रता अच्छी है तो स्त्री की स्वतन्त्रता की बात भी अच्छी है। पाश्चात्य सभ्यता का अर्थ यदि यह स्वतन्त्रता है तो मेरा या दयानन्द का या वेद

का उससे कोई विरोध नहीं है। पाश्चात्य सभ्यता का अर्थ यदि भौतिकता, उद्दण्डता व विलासिता से है तो यह स्त्री और पुरुष दोनों के लिए हेय है। बिना आश्रय-व्यवस्था का पालन किये इस पर अंकुश नहीं लगाया जा सकता।

भगवान चैतन्य

भारत में और पाश्चात्य राष्ट्रों में नारी की क्या स्थिति थी यह इतिहास हमें बताता है। आज नारी पुरुष के बराबर बैठने व चलने का दावा करती है, इसका श्रेय भी महर्षि दयानन्द व आर्य-समाज को ही है। आर्य-समाज तो नारी को पुरुष से भी अधिक महत्त्व देता हैं, मगर इसके लिए नारी के भीतर उस प्रकार के गुण भी पैदा करने पड़ेंगे। आर्य-समाज तो नारी-जागरण का भूलाधार है, मगर हुआ यह कि जहां नारी की आर्य पद्धति को लेकर अपने भीतर 'ब्रह्ममय' गुणों का आधान करके जागृत और स्वतंत्र होना था वहां पर वह पश्चिमी चकाचौंध के वश होकर जननी के गौरवमय पद से स्वयं गिरकर गरिमाहीन हो गई है। वह स्वतंत्र होकर दिशाहीन नदी की तरह बह निकली हैं। आर्य-समाज का दायित्व है कि नारी-जागरण को दिशा देन के लिए महिलाओं को भी कार्य-क्षेत्र में उतारे, ताकि उच्छृंखल नारी को स्वतंत्र मगर मर्यादित किया जा सके। नारी को यह बताने की परमावश्यकता है कि महर्षि दयानन्द ने हमें पर्दे में न रहने के लिए तो कहा था, मगर बेपर्दा होने को भी उन्होंने नहीं कहा था। आर्य-समाज ही यह कार्य कर सकता है, क्योंकि वह नारी-जागरण का पक्षधर है।

डॉ. भवानीलाल भारतीय

नारी उत्थान के लिये आर्य-समाज उसी प्रणाली पर कार्य करे, जिस पर वह आज तक करता आया है।

मदन गोपाल खोसला

आर्य-समाज ने स्त्रियों को उचित स्थान दिया है। यह सम्मान बड़ा महत्वपूर्ण है। पाश्चात्य सभ्यता के फलस्वरूप जो स्वतन्त्रता है, वह स्त्रियों के लिए हानिकारक है और उसका विरोध होना चाहिए।

डॉ. मण्डन मिश्र

स्त्रियों का आदर भारतीय संस्कृति में सबसे बड़ा अवदान है। आर्य-समाज ने इस दिशा में बहुत महत्वपूर्ण काम किया है, लेकिन अभी स्त्रियों के साथ ज्यादती होने के समाचार दिन-दिन बढ़ रहें है। उसके लिए आर्य-समाज के महिला-सदस्यों को जन-जागरण का प्रयास करना चाहिए।

मुल्कराज भल्ला

आर्य-समाज को स्त्री-शिक्षा ओर फैलानी चाहिये। साथ ही साथ वैदिक

संस्कृति की पूरी शिक्षा आवश्यक है। स्कूलों-कालिजों में धर्म-शिक्षा पर बहुत जोर दिया जाये। अभी धर्म-शिक्षा तो नाम मात्र है।

यशपाल वैद

वेदों में स्त्री-पुरुष को समान माना गया है। एक के बिना दूसरा अधूरा है। कर्तव्य और अधिकार समान हैं। नारी का स्वच्छन्द होना हितकर नहीं। पाश्चात्य सभ्यता के फलस्वरूप स्त्री स्वातंत्र्य की बात वेदानुकूल नहीं। आर्य-समाज आज के समय में यही देख कर सकता है कि कहीं नारी का शोषण-दमन तो नहीं, क्योंकि ऐसी दमित प्रवृत्तियों के प्रतिक्रिया स्वरूप भी नारी उच्छंखल और स्वच्छन्द हो सकती है।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार

पाश्चात्य सभ्यता के फलस्वरूप आज स्त्री-जाति स्वतंत्रता के नाम पर पथ से भटक गयी है। इसीलिए सभी क्षेत्रों में पुरुषों के साथ-साथ नौकरी करने पर स्वेच्छा से या जबरन अनैतिकता भी स्त्रियों के कारण पनपी है। आज जहां एक ओर शिक्षा, राजनीति आदि में स्त्री का आना शुभ रहा है, वहाँ रिश्वत, पाकेटमारी, अनैतिक धन्धे, शराब खोरी आदि में स्त्रियों की प्रवृत्ति घोर अशुभ संकेत दे रही है। तलाक को मान्य करने से भारतीय ढांचे में ढला पारिवारिक बन्धन टूट रहा है। यह सब पाश्चात्य सभ्यता का परिणाम है।

राजकुमारी कोहली

आर्य-समाज को आज एक बार फिर नारी की रक्षा, सुरक्षा तथा समुचित आदर के कार्य करना होगा तथा आज दहेज के लोभी भेड़ियों से उसे बचाना होगा। उसे यह भी बतलाना होगा कि मात्र भारतीय समाज ही उन्हें उचित मार्ग दिखा सकता है।

कु० विद्यावती आनन्द

वेदों में स्त्रियों को सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। आर्य-समाज ने भी स्त्री-शिक्षा के प्रचार द्वारा उन्हें सम्मान एवं उचित स्थान दिलाने का प्रत्यन अवश्य किया है, परन्तु इसके आगे कुछ नहीं। आर्य-समाजी और आर्य-संस्थाओं में पुरुषों का ही प्रधानत्व है। मुख से कहते हैं नारी वन्दनीय है, वास्तविकता यह है कि अधिकतर पुरुष नारी को उसका उचित स्थान देने को तैयार नहीं। इसी कारण स्त्री पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित होकर स्त्री स्वातंत्र्य की बात कर रही है। आर्य-समाजी पुरुष पहले यह निर्णय कर लें कि हिन्दू समाज में स्त्री का स्थान क्या होना चाहिये। फिर अपते वचन और कर्म में भेद न आने दें। तब भारत की स्त्री पश्चिमी ढंग के उस स्वातंत्र्य की मांग नहीं करेगी, जिससे उसकी नारीत्व गरिमा ही समाप्त हो जाये। वह भारतीय नारी के वन्दनीय रूप में ही रहना पसन्द करेगी।

विद्यानन्द सरस्वती

लड़कियों के स्कूलों व कालिजों तथा महिला संगठनों के द्वारा अपनी मान्यताओं से अवगत कराने का प्रयास होना चाहिये। भारत सरकार के अंगभूत उन प्रभावशाली लोगोंपर जोर डालकर जिन्हें आर्य-समाज आये दिन सम्मानित करता रहता है, अश्लीलता का प्रचार करने वाली पत्र-पत्रिकाओं, चल चित्रों, दूरदर्शन के कार्यक्रमों, फैशन परेडों, सौन्दर्य प्रतियोगिताओं आदि पर रोक लगवानी चाहिये ! आर्य प्रादेशिक सभा तथा डी. ए. वी. कालिज मैनेजिंग कमेटी द्वारा खोले जाने वाले अंग्रेजी माध्यम व सहशिक्षा वाले स्कूलों तथा उन्हें चलाने के लिए अभिनेत्रियों के नाच-गानों की भर्त्सना करनी चाहिये।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

स्त्री शिक्षा के बारे में आर्य-समाज का कार्य सचमुच बेजोड़ रहा है। पश्चिम के नारी स्वतंत्रता आन्दोलन को आर्य-समाज के नारी-सम्मान आन्दोलन से बहुत कुछ सीखने की जरूरत है।

वैद्यनाथ शास्त्री

जिस प्रकार का स्त्री स्वातंत्र्य आज है इसका प्रचार आर्य-समाज ने कभी नहीं किया और न ऋषि के ग्रन्थों में ही कहीं पर है। स्वातंत्रय का अर्थ निःस्वतन्त्रा और उच्छंखलता और अनियबद्धता नहीं है। स्वतंत्ता में भी अपना तंत्र और अनुशासन होता है। 'स्व' को तो जोर से पकड़ रखा है, परन्तु तंत्र को छोड़ दिया है। बस इस तन्त्र व अनुशासन की भावना को बढ़ाया जाये और अधिकार की भावना को ही अधिक बल न देकर कर्तव्य की भावना को भी पूर्ण महत्व दिया जाये। यह कार्य आर्य-समाज ही कर सकता है।

सत्यदेव विद्यालंकार

वैदिक वाङ्मय में स्त्री बहुत उत्कृष्ट स्थिति में दर्शायी गई है। नारी स्वयं ही अबला होना स्वीकार कर लेती है। यह स्वयं ही स्वच्छन्दता का नाच दिखाती है। यह प्रश्न तो 'शेष प्रश्न' है, नित्य है। इस प्रश्न की आवश्यकता ही नहीं है।

डॉ. सहदेव वर्मा

इस प्रश्न का उत्तर स्वयं प्रश्न में ही छिपा है। वास्तव में नारी स्वातन्त्र्य तथा समानाधिकार में अन्तर है। अधिकार व कर्तव्यों में कुछ तो अन्तर करना ही पड़ेगा। आर्य-समाज की भूमिका ? गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली के द्वारा शिक्षा-प्रचार हो जिसकी विशेष आशा दृष्टिगोचर नहीं होती, क्योंकि उच्च पदों पर आसीन अधिकारीगण दूसरों के लिए ही ऐसी बातें सुरक्षित रखते हैं। यह कथनी और करनी का भेद ही इस आन्दोलन को डुबो रहा है।

सुदर्शन देव

स्त्री स्वातंत्र्य के अतिरिक्त स्त्री की दासता एवं स्त्री की पुराने ढांचे में रह कर भी उच्छृंलता, रूढ़िग्रस्तता आदि अनेक तरह के रोग हैं। उन पर भी विचार हो। स्वातन्त्र्य को आन्दोलन के रूप में न चला कर स्त्री के हितों की सुरक्षा के निमित्त उसके कतिपय प्रावधानों का प्रचार किया जाय तथा उच्छृंलता एवं गुण्डों का ग्रास बन सकने की स्थिति उत्पन्न करने वाले स्त्री स्वातंत्र्य विषयक विचारों के विरूद्ध प्रबल खण्डन-साहित्य एवं प्रचार, तंत्र निर्मित किया जाय। आर्य-समाज नारी को गुण, कर्म, स्वाभावानुसार सीता, सावित्री, गार्गी, झांसी की रानी, किरण कुमारी बनावें।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्त

स्त्रियों की स्वतंत्रता कमनीय है, स्वच्छन्दता निन्दनीय है। परिवार-समाज में स्त्री और पुरुषों को इतनी सीमा तक ही समान रूप में स्वतंत्रता अभिनन्दनीय है, जिसमें इन दोनों में विघटन, विमनस्कता, अस्थिरता आदि न आएं। ऋषि का लेख है कि जीव वर्तमान में कर्म करने में किंचित्मात्र स्वतन्त्र है, अर्थात् पूर्णतः नहीं। अतः नारियां भी और पुरुष भी अपनी परिधियों में किंचित्मात्र ही स्वतंत्र हो सकते हैं शेष में परस्पर परतन्त्र। आर्य-समाज अपने सिद्धान्तों और मान्यताओं के आलोक में ही नारी स्वतंत्रता के साम्प्रतिक आन्दोलन का समर्थन एवं विरोध दोनों ही यथा स्थिति करें।

हरिकिशन मलिक

स्त्री-शिक्षा के विषय में भी स्वार्थी राजनैतिक नेताओं की बुद्धिहीनता के कारण गड़बड़ी हुई है। आर्य-समाज स्त्री और पुरुष को एक दूसरे का पूरक मानता है और इसलिए यह आवश्यक समझा जाता है कि स्त्री और पुरुष दोनों समान विद्वान हों, जिससे कि वह मिलकर गृहस्थी की गाड़ी को खींच सकें। संस्कृत में पति और पत्नी दोनों को मिलकर दम्पती कहते हैं, क्योंकि वह दोनों मिलकर गृह के स्वामी होते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार पति वह कार्य करता है जो पत्नी के योग्य नहीं और पत्नी वह कार्य सम्भाल लेती है जो पुरुष नहीं करते घर के अन्दर के सारे कार्य प्रायः पत्नी करती है और घर के बाहर के कार्य पति। पाश्चात्य सभ्यता ने इस पूरक सिद्धांत को नहीं समझा और स्त्री-पुरुष को समान अधिकार देने के प्रयत्न में एक दूसरे का प्रतिद्वन्द्वी बना कर खड़ा कर दिया। हमारी स्वदेशी सरकार में पाश्चात्य सभ्यता के पीछे आँख बंद कर दौड़ने वालों का बाहुल्य है। उन्होंने भारत में भी ऐसी परिस्थितियां बना दीं, जिससे कि स्त्री और पुरुष एक दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी बन गए। आर्य-समाज ने स्त्री शिक्षा का जिस प्रकार का कार्य किया था, वह अत्यन्त सराहनीय था। अब भी पतिव्रत तथा पत्नीव्रत धर्म की भावना को सम्मुख रखकर स्त्री-शिक्षा को ठीक दिशा देने के लिए कार्य करते रहना चाहिए। जहाँ तक बने पड़े कन्याओं की शिक्षा के लिए गुरुकुलीय पद्धति को अपनाया जाए।

११

वेद का सन्देश और विश्व-शान्ति

प्रश्न

'संगच्छध्वं संवदध्वं' की वेद-विहित धारणा क्या आज की गुट-निरपेक्षता एवं विश्व-शान्ति का सन्देश देती है ? यदि वर्तमान विश्व इस मन्त्र का पालन करे तो क्या विश्व-समाज का निर्माण नहीं हो सकता ? आपका क्या विचार है ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

विश्वशान्ति के लिए आर्य-समाज को निश्चित ही प्रयत्न करना चाहिए ?

अमरनाथ कांत

हो रहा है और होता भी रहेगा, परन्तु आदेश वेद का नाम नहीं लिया जाता है। इसमें दोष हमारा है जिसमें हम एक दूसरे की पगड़ी तो उछालते हैं, मगर उसका समाधान नहीं करते हैं।

प्रो. कैलाश नाथ सिंह

'संगच्छध्वं-संवदध्वं' विश्व शान्ति की आधार शिला है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसका प्रचार अपेक्षित है। खेद है कि भारत के आर्य नेता ही इसे हृदयंगम नहीं कर सके हैं।

प्रो. कृष्णलाल

निश्चित ही हो सकता है, यदि कथनी और करनी में अन्तर न हो, भेद भाव न रहे। संयुक्त राष्ट्र में एक बड़े समुदाय वाली भाषा 'हिन्दी' की मान्यता न होना क्या भारत के साथ भेदभाव नहीं ? हमारी सरकार इसे कैसे सहन कर रही है ? इस प्रकार के अनेक उदाहरण हो सकते हैं।

जगतराम आर्य

ऋग्वेद के अन्तिम सूक्त 'संगच्छध्वं' के आचरण से विश्व समाज का निर्माण और कल्याण हो सकता है, परन्तु विश्व में इस सूक्त का पालन कोई नहीं करता। महर्षि दयानन्द के बताए मार्ग पर चलने से ही विश्व में शान्ति हो सकती है। उपरोक्त सूक्त का पाठ आर्य-समाज मन्दिरों में प्रत्येक रविवार को होता है, परन्तु आर्य-समाज के सदस्य ही इसका पालन नहीं करते तो विश्व की बात क्या करें।

डॉ. दुखनराम

हमारा विचार है कि केवल "संगच्छध्वं संवदध्वं" का निरन्तर पाठ ही न किया जाय, अपितु उसे जीवन में उतारा जाय। इसी से गुट निरपेक्षता एवं विश्व शान्ति संभव है।

देवेन्द्र आर्य

ऐसे मन्त्रों का प्रचार अन्य देशों में हो तो श्रेष्ठ रहेगा। यदि प्रचारक नहीं हैं तो साहित्य तैयार कराया जाये और उनकी भाषा में अपनी भाषा के सार्थ अर्थ दिया जाये।

धर्मेन्द्र गुप्त

विश्व की बात न करके पहले हमें अपने घर भारत में आर्य-समाज को पुनः उसका गौरवपूर्ण स्थान दिलाने की बात करनी चाहिये।

प्रताप सहगल

यह बात सही है।

प्रो. प्रभुशूर आर्य

वेद का संदेश मानव मात्र के लिए है और वेद के अनुसार मनुष्य-मनुष्य में सम्बन्ध भ्राता, भगिनी, सखा-मित्र का है। सभी ईश्वर के अमृत पुत्र-पुत्रियां हैं। अगर 'संगच्छध्वं संगच्छवं...' की धारणा को अपना लें तो विवाद कहां रह जाता है? फिर गुट निरपेक्षता का औचित्य ही नहीं रहता है, क्योंकि जब गुट ही नहीं होंगे तो गुट के बाहर और गुट के भीतर का प्रश्न ही समाप्त हो जाता है 'कृण्वन्तो-विश्वमार्यम्, के माध्यम से विश्व समाज का निर्माण सम्भव है और विश्वशान्ति का यह सर्वोत्तम साधन है। तभी विकसित और विकासशील तथा धनी और निर्धन देशों के बीच की खाई पाटी जा सकती है।

प्रेमनाथ

आर्य-समाज में ही 'संगच्छध्वं संवदध्वं' का पालन नहीं तो विश्व के कल्याण को आर्य-समाज द्वारा प्रश्न ही नहीं उठता।

डॉ. प्रशान्त कुमार

'संगच्छध्वं' आदि का कोरापाठ कुछ नहीं करेगा। इसको व्यावहारिक रूप देने के लिए कुछ नये राष्ट्रीय कानून बनाने होंगे। राष्ट्रवाद की संकुचित धारणा का परि-त्याग करके विश्व-मैत्री की तरफ बढ़ने का हमें प्रयत्न करना है। पर इसका यह अर्थ नहीं कि हम राष्ट्र-प्रेम के विरुद्ध हैं। वस्तुतः संगच्छध्वं की भावना परिवार, समाज, राष्ट्र के प्रेम से ही विश्व तक पहुंचेगी। हमें यह ध्यान रखना होगा कि 'संगच्छध्वं' में एक उच्च भावना का ही प्रतिपादन है, इसमें कोई किसी विश्व-मैत्री की पद्धति का वर्णन नहीं है।

भगवान चैतन्य

'संगच्छध्वं संवदध्वं...' ही आज विश्व में एकात्मकता ला पाने की सामर्थ्य रखता है। वेद का यह आदेश आज भी उतना ही सार्थक है, जितना पहले था। आज समूचा विश्व गुटों में व दायरों में बंट चुका है। यदि यह दौड़ होड़ ऐसे ही चलती रही तो अब तक जो विध्वंस के काले बादल निरन्तर मंडरा रहे हैं उनका बरसना कभी न कभी निश्चित हो जाएगा और इससे समूची मानवता क्षत-विक्षत एवं समाप्त हो जाएगी, इसमें दो मत नहीं। वेद माता के उपरोक्त आदेश पर चलकर एक विश्व परिवार का निर्माण किया जा सकता है। आवश्यकता इस बात की हैं कि प्रत्येक आर्य अपने परिवार से इस महामंत्र को कर्तव्य रूप देने का शुभारंभ करे। फिर आगे से आगे चल कर संस्था स्तर पर लाकर इसी मूल मंत्र, संगठन-मंत्र एवं दिव्य-मंत्र को प्रान्तीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक लाया जाय सकता है। वेद के इस आदेश पर चले बिना ही विश्व शान्ति का आधार खोजना एक दिवा-स्वप्न मात्र है। वेद समस्त विश्व को एक सूत्र में बांध पाने का एक मात्र आधार है।

डॉ. भवानी लाल भारतीय

निश्चय ही संगच्छध्वं मंत्र की भावना के अनुसार चलने पर विश्व समाज में एकता हो सकती है।

मदन गोपाल खोसला

संगच्छध्वं संवदध्वंकी वेद विहित धारण में निश्चित रूप से समाज का निर्माण हो सकता है।

डॉ. मण्डन मिश्र

वैदिक आदर्श के अनुरूप विश्व समाज का निर्माण ही संसार की वर्तमान सम-स्याओं का एकमात्र हल है। संसार इस बात को महसूस कर रहा है, यह प्रसन्नता का विषय है। विभिन्न भाषाओं के माध्यम से और वैदिक साहित्य के प्रचार से विश्व सामाजिक निर्माण में सहायता मिलेगी।

मुल्कराज भल्ला

अच्छी तरह हो सकता है।

यशपाल वेंद

'संगछध्वं संवदध्वं'' की धारणा समस्त मानवता के कल्याण के लिए है, हाल ही में हुए निर्गुट सम्मेलन में एक प्रतिनिधि ने उक्त मंत्र का उच्चारण कर सबके कल्याण के लिए, शुभ कर्म के लिए साथ मिलकर चलने का विचार प्रकट किया। वेद का संन्देश जाति-वर्ग से ऊपर है। विश्व बन्धुत्व की कल्पना इस मंत्र के पालन से अवश्य पूरी हो सकती है।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार

आज की स्थिति में विश्व समाज का निर्माण दुष्कर कार्य है। आज भाषा, धर्म, जाति-पृथक राष्ट्रवाद तथा परस्पर ईर्ष्या, द्वेष एवं दूसरे समुदाय को नष्ट करने की प्रवृत्ति इतनी दृढमूल हो गई है कि विश्व समाज का निर्माण कठिन है। आर्य-समाजी ही संगच्छध्वं की भावना को अपना लें तो यह भी अपने आप में बहुत बड़ी बात होगी!

राजकुमार कोहली

विश्व वेद के संदेश 'संगछध्वं···' को स्वीकार कर ले तो निश्चित रूप से अनेक विवाद समाप्त हो सकते हैं तथा विश्व-शान्ति ला सकता है।

कु० विद्यावती आन्नद

यदि विश्व इस मन्त्र का पालन करे तो अवश्य ही विश्व समाज का निर्माण हो सकता है, परन्तु न विश्व इस मंत्र का पालन करेगा और न विश्व समाज का निर्माण होगा।

विधानन्द सरस्वती

'संगच्छध्वं संवदध्वं' की धारणा क्या कर सकती है, इसकी परीक्षा पहले हमें अपने संगठन में करके देखना चाहिये। वर्तमान में हम किस मुंह से ऐसा कह सकते हैं?

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

यह प्रश्न असंगत है।

वैद्यनाथ शास्त्री

'संगच्छध्वं' में गति, मति, उक्ति की समानता पर बल दिया गया है। यह ऋग्वेद का मन्त्र है। सारा सूक्त समानता और गुट बन्दी का विरोधी है। इसके साथ आर्य-समाज के नियमों को और मिला देने पर विश्व समाज का निर्माण हो सकता है।

सत्यदेव विद्यालंकार

इस प्रश्न का उत्तर, मानवजाति का सर्वनाश करने वाले स्वार्थी राजनैतिक व्यक्ति ही दे सकते हैं। संघर्ष और जीवन पर्यायवाची हैं। कोई समाज इससे बच नहीं सकता। 'यत्र विश्वं भवत्येकनी म्' का सिद्धांत आज की लड़खड़ाती भौतिक दुनिया पर लागू नहीं हो सकता।

डॉ. सहदेव वर्मा

इसमें दो मत नहीं हो सकते। यदि विश्व इस पर आचरण करे तो कल्याण में सन्देह नहीं।

सुदर्शन देव

'संगच्छध्वं संवदध्वं' गुट निरपेक्षता तथा विश्व-शान्ति के उपदेश तो सामाजिक रूप में दे सकते हैं। अन्ततः तो वह गुट समाप्ति एवं एक विचार, एक राजनैतिक विश्व-सत्ता का एवं विश्व-उन्नति का संदेश देती है। तभी एक विश्वसमाज का निर्माण हो सकता है। अन्यथा जहरीली विनाशक मनों एवं राजनैतिक धार्मिक गुटों की सत्ता तो ज्यों की त्यों रहेगी और विभिन्नता पुनः पुनः कोलाहल तथा संघर्ष का दल-दल विश्वमें बनते रहेंगे।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्त

विश्व समाज का सीमित निर्माण ही सम्भव है। संगच्छध्वं आदि हमारे आदर्श हैं। व्यवहार में हम अपने संस्कारों और स्वभाव से परवश होते हुए कलह और संघर्ष आदि में मग्न रहते रहे हैं, रहते हैं और रहते रहेंगे।

हरिकिशन मलिक

विश्व के सारे राष्ट्र "संगच्छध्वं संवदध्वं' की धारणा का पालन करने लगे तो विश्व समाज का निर्माण होने में तनिक भी कठिनाई नहीं। प्रश्न यह है कि सारे राष्ट्र इस धारणा का पालन अपने आप क्यों करेंगे? क्या किसी देश के निवासियों ने स्वेच्छा से चोरी आदि अपराधों का परित्याग किया है? जिस प्रकार एक देश में सुव्यवस्था बनाए रखने के लिए शासक की आवश्यकता रहती है इसी प्रकार आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य हुए बिना सब राष्ट्रों द्वारा अपने आप उपरोक्त धारण का पालन करना संभव नहीं। इस समय भी यू. एन. ओ. आदि की जो कुछ व्यवस्था दिखाई पड़ती हैं वह भय के कारण है न कि किसी सिद्धांत में निष्ठा के कारण। इस प्रकार के संघ तो समझदार व्यापारी भी स्वेच्छा से बना ही लिया करते हैं।

'आर्यसमाज : आज के सन्दर्भ में' के सम्पादक
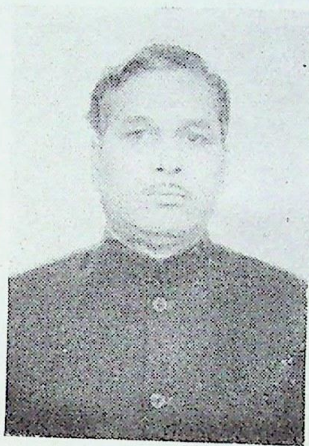
डॉ० धर्मपाल
एम० ए०, पीएच० डी०
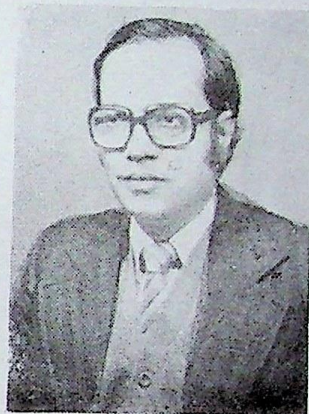
डॉ० कमल किशोर गोयनका
एम० ए०, पीएच० डी०, डी०लिट्०

परिचर्चा में भाग लेने वाले कुछ विद्वान

अमरनाथ कान्त
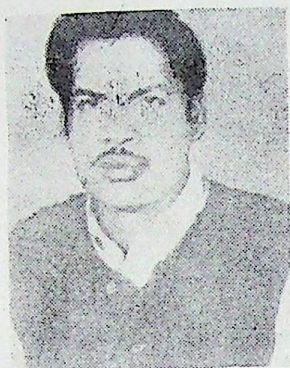
प्रो० कैलाशनाथ सिंह

प्रो० कृष्ण लाल
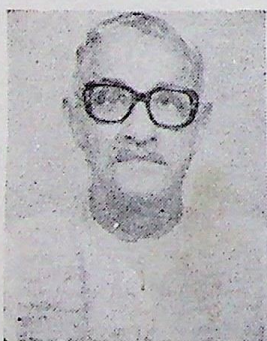
जगतराम आर्य
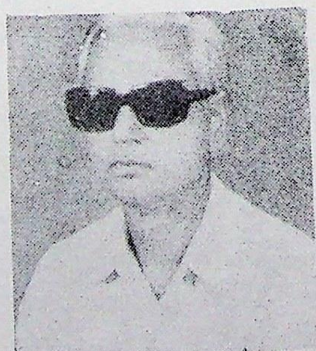
देवेन्द्र आर्य

परिचर्चा में भाग लेने वाले कुछ विद्वान

धर्मेन्द्र गुप्त

प्रह्लाद दत्त वैद्य

पं० बिहारीलाल शास्त्री
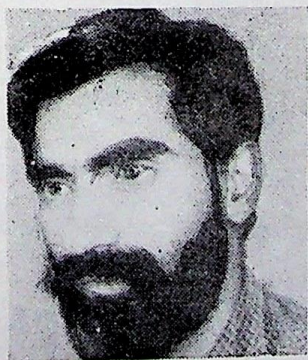
भगवान चैतन्य

मुल्कराज भल्ला

परिचर्चा में भाग लेने वाले कुछ विद्वान

डॉ० यशपाल वैद

विद्यानन्द सरस्वती

कु० विद्यावती आनन्द

वैद्यनाथ शास्त्री

हरिकृष्ण मलिक

१२

पश्चिमी सभ्यता बनाम वेद-संस्कृति की रक्षा के उपाय

प्रश्न

विश्व के अन्य विकासशील देशों के समान भारत में भी पश्चिमी सभ्यता अपने पैर जमाती चली जा रही है। आज भारत अपनी अस्मिता खोता चला जा रहा है और विसंस्कृतीकरण की भयावह समस्या सामने आ खड़ी हुई है। ऐसी परिस्थिति में वेद-संस्कृति कैसे बचाई जा सकती है? आप इसके लिए स्वयं क्या कर रहे हैं और दूसरों को क्या करने का सुझाव देते हैं?

उत्तर

अक्षय कुमार जैन

नैतिक मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है। मैं स्वयं नैतिक पथ पर ही चलता हूं, दूसरों को उपदेश देना न उचित समझता हूं और न प्रभावकारी।

अमरनाथ कांत

इसमें पश्चिमी सभ्यता का दोष नहीं है, दोष केवल हमारा है। दूसरों को देखते हैं और वैसा ही अपने आपको बनाने की चेष्टा करते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि उससे आगे ही निकलने की चेष्टा करते हैं और कर भी गुजरते हैं। कह देते हैं कोई हर्ज नहीं यह तो बच्चे हैं, मन बहला ही तो रहे हैं रहने भी दो परन्तु बाद में वह अपनेमन में लज्जित होते हैं कि अब क्या करें, हमारा वंश मिटा जा रहा है। और तब वे आर्य-समाज की ही ओर देखते हैं कि इन्हीं को बचाओ। अब प्रश्न यह उठता है वेद-संस्कृति कैसे बचाई जा सकती है? सो मान्य- वर यह वेद किसी मनुष्य के बनाये हुए तो नहीं है जो समय पर अवाक हो जायेंगे। यह तो स्वतः ही ज्ञान-विज्ञान का दाता है जो हमेशा भूल को शरण में लेता है, इसलिए इसके सामने मनुष्य कृत सिद्धांत टिक नहीं सकते हैं। इसलिए हमें इस वेद के प्रकार से कभी आलस्य नहीं

करना चाहिए इसलिए। मैं इस विकलांग अवस्था में भी आर्य-समाजों में प्रचार कार्य को अवश्य करता हूं।

प्रो० कैशालनाथ सिंह

भारत विसंस्कृत Malicultural हो रहा है। इसका अनुभव महर्षि दयानन्द ने कर लिया था। आर्य-समाज का प्रचार, वैदिक संस्कृति की श्रेष्ठता का व्यापक उत्साह पूर्वक प्रचार देख के समस्त आर्य विचारों के नेता एक मन से आगे बढ़े। मैं अपनी शक्ति भर भारत को संस्कृत होने से रोकने हेतु प्रचाररत हूं।

प्रो० कृष्णलाल

मैं संस्कृत और हिन्दी का प्रचार कर रहा हूं, सर्वत्र प्रेरणा देता हूं। किसी सांस्कृतिक कार्यक्रम का निमंत्रण अंग्रेजी में हो तो उसमें सम्मिलित नहीं होता। स्वयं भारतीय वेष धारण करता हू, बच्चों को प्रेरणा देता हूं। वात वास्तव में बाजार भाव की है। आर्य-समाजी ही अपनी संस्थाओं में भारतीयता का उपहास करते दिखाई देते हैं। वर विवाह के समय पलथी मार कर नहीं बैठता तो पुरोहित विरोध नहीं करता। संस्कार के समय कितने लोग मंत्र सुनते हैं? क्या आर्य-समाजी सिगरेट, मदिरा, मांस आदि का प्रयोग नहीं करते?

जगतराम आर्य

भारत में पश्चिमी सभ्यता पैर न जमाए, भारतीय सभ्यता और संस्कृति की रक्षा हो, अतः वेद संस्कृति बचाई जा सके इसके लिये एक ही रास्ता है कि आर्य साम्राज्य की स्थापना हो।

डॉ० दुखनराम

हम पश्चिमी सभ्यता के प्रवाह को रोकना नहीं चाहते, अपितु उसकी धारा को मोड़ कर वैदिक संस्कृति के विशाल महासागर में निमज्जित कर भारत की अस्मिता को उदीयमान करना चाहते हैं। इससे विसंस्कृतिकरण की भयावता स्वयं नष्ट हो जायेगी। हम इसके लिये यह प्रयास कर रहे हैं कि विदेशियों से मिल-जुलकर तथा उनके साथ उठ-बैठकर दूसरों को भी ऐसा करने का उपदेश देकर उन्हें अपना लेवें।

देवेन्द्र आर्य

इसका मुख्य कारण शिक्षा-प्रणाली का दूषित होना है। प्रारम्भ ही शिक्षा का बिना उद्देश्य के है (बिना लक्ष्य न विद्या)। माता-पिताओं को अग्रसर होना होगा और साथ ही पाठ्य-प्रणाली के अन्तर्गत ऐसी पुस्तकों का समावेश किया जाय जिनमें सदाचार, शिष्टाचार, परोपकार, विद्या, दया, धर्म, अहिंसा, सत्य आदि के पाठ हों, चाहे वे किसी भाषा में हों। अध्यापकों की नियुक्तियों का आधार केवल योग्यता न होकर साथ ही वेशभूषा, चाल-चलन, चरित्र आदि का भी ध्यान रखा जाना अनिवार्य हो क्योंकि अध्यापक की प्रत्येक क्रिया-कलाप का प्रभाव विद्यार्थी पर पड़ता है।

प्रताप सहगल

भारतीय सभ्यता के बहाने आप मात्र वेद-संस्कृति की ही बात क्यों करते हैं? अगर आर्य-समाज भी अन्य साम्प्रदायिक मतवादों की ही तरह से बात करना चाहता है, तो वह कुछ भी नहीं कर सकता। ऐसी बात करके आप भी देश के विखण्डन की ही बात करते हैं। भारतीय संस्कृति मिली-जुली संस्कृति है। हां, यह बात और है कि इस सांस्कृतिक धारा की सबसे बड़ी धारा हिन्दू धारा है। वेद-संस्कृति की धारा से विसंस्कृतिकरण की समस्या तभी समाप्त हो सकती है, जब हम दूसरी संस्कृतियों के अच्छे तत्वों को आत्मसात् करते हुए अपनी पहचान बनाए रखें। हम तो कालिज में अपने सम्पर्क में आए छात्रों को अपनी पहचान की ओर सचेत किए रखते हैं और कुछ लेखक के माध्यम से भी यह काम हो जाना है।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

वर्तमान भौतिकता के युग में विकासशील देशों की भांति भारत भी पश्चिमी सभ्यता के पीछे पागल होकर भाग रहा है। इसके लिए लोगों को बतलाना होगा कि सुख संतोष में ही है। भोगों में सुख होता तो हजारों विदेशी हर वर्ष शांति की खोज में भारत न आते। मानव का लक्ष्य मुक्ति है। हमें जीने के लिए ही खाना चाहिये। खाने के लिए ही जीना पाशविक वृत्ति है। भौतिक क्षेत्र में अपने से नीचे वालों को ही देखने में सुख है, परन्तु आध्यात्मिक क्षेत्र में अपने से ऊपर वालों को देखना ही लाभप्रद है। हमने कभी भौतिक साधनों को महत्व नहीं दिया है। अगर समाज में नैतिक मूल्यों की पुर्नस्थापना हो सके तो मानवता का असीम उपकार हो सकेगा।

प्रेमनाथ

इस प्रश्न का उत्तर ऊपर दिया जा चुका है। पुनरूक्ति की आवश्यकता नहीं।

डॉ० प्रशान्त कुमार

(क) यह संक्रांतिकाल है। संक्रांति काल में अराजकता रहती है। उथल-पुथल होती है। पश्चिमी सभ्यता से अभिप्राय यदि भौतिकवाद से है तो वह निश्चय ही बढ़ रही है। पर वह बढ़ती ही रहेगी, ऐसा कहना अनुचित है। संक्रांतिकाल समाप्त होते ही कोरा भौतिकवाद टिकेगा नहीं।

(ख) यह कहना गलत है कि हमारी संस्कृति ही नष्ट हो रही है। विचार के स्तर पर वह आज भी सशक्त है। हां, व्यवहार में वह ओझल अवश्य हो गई है। वह सदा ओझल ही रहेगी, यह कहना निराशाजनक विचार है।

(ग) मैं विचार और व्यवहार दोनों ही तरह से अपनी संस्कृति को अपनाने का प्रयत्न करता है। भाषण, लेखन, जीवन आदि रूपों से उसको अपनाने की प्रेरणा देता है।

प्रह्लाद दत्त वैद्य

वेद संस्कृति का अर्थ है—ईश्वरीय ज्ञान और विज्ञान। ये संस्कृति कभी नष्ट होने वाली नहीं। योग्यता और त्याग भाव की कमी के कारण शिथिल तो पड़ सकती है। ब्रह्म शक्ति और छात्र-बल दोनों एक साथ कार्यरत हों। मैं इस विषय में कुछ करने को उतना समर्थ नहीं हूं। ये तो राजनीतिज्ञ व राज-सरकारों का कार्य है।

भगवान चैतन्य

वेद संस्कृति को बचाने का एक मात्र आधार यही है कि वेद की शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार अधिक से अधिक किया जाए। प्रत्येक वेदानुयायी यह कार्य भी स्वयं से ही प्रारम्भ करें। अपना आचरण ऐसा पवित्र एवं उज्ज्वल हो कि किसी को छिद्र ढूंढने का अवसर ही न मिले। संगठन को शक्तिशाली एवं वेदानुकूल बनाने की आवश्यकता है। हमारा संगठन इतना प्रभावशाली है कि राजनीति पर भी हमारा अंकुश रहे। इसके लिए अपना एक राजनैतिक संगठन भी बनाया जा सकता है, क्योंकि अधिकार हाथ में आ जाने पर वेद की सार्वभौमिक शिक्षाओं को दृढ़ता के साथ लागू करने में सुविधा रहेगी। प्रत्येक व्यक्ति को पाश्चात्य संस्कृति का परित्याग करना चाहिए तथा दूसरों को भी ऐसी ही प्रेरणा देते रहना चाहिए। मैं स्वयं भी इस कार्य में प्रयत्नशील हूं।

डॉ० भवानी लाल भारतीय

वेद-संस्कृति को बचाने के लिये अनेक प्रकार के कार्य किए जा सकते हैं, परन्तु उनका विस्तृत उत्तर इस संक्षिप्त प्रश्नोत्तर में नहीं दिया जा सकता।

मदन गोपाल खोसला

आर्य लोगों को चाहिए कि गर्भ से ही अपने बच्चों पर आर्य एवं भारतीय संस्कृति की ऐसी गहरी छाप डाल ताकि पश्चिम का रंग यदि दें, चढ़े भी तो अपनी बुद्धि एवं ज्ञान से वह स्वयं ही उसका निर्णय कर लें। इसके लिए माता-पिता को भी अपने आचरण और व्यवहार को उत्तम बनाना होगा। हमारे परिवार में ३-४ वर्ष का बच्चा संध्या एवं हवन मंत्रों को कण्ठस्थ जानता है, क्योंकि वह परिवार में रोज यह ध्वनि सुनता है। हम आर्य-ग्रन्थों को बांटने का कार्य कर रहे हैं।

डॉ० मण्डन मिश्र

मैं अपने परिवार और अनुयायियों को भारतीय संस्कृति और सभ्यता के प्रति आस्था रखने की न केवल प्रेरणा देता हूं, अपितु उसके पालन में भी विश्वास रखता हूं। आर्य-समाज के सदस्य यदि अपने जीवन के व्यवहार में भारतीय वेशभूषा और भारतीय भाषाओं का अनिवार्य रूप से स्थान देने का प्रयास करें तो हम भारतीय संस्कृति और सभ्यता के निकट रह सकते हैं।

मुल्कराज भल्ला

स्कूलों, कालिजों में धर्म-शिक्षा पर जोर दिया जाये । अपना चरित्र ऊंचा बनाया जाये, जीवन सादा और सच्चा अथवा परिश्रम वाला हो, ताकि बच्चे छोटेपन में ही आपको देखकर अच्छे नागरिक बनें ।

यशपाल वैद

भारत में पश्चिमी सभ्यता के कितने भी पैर क्यों न जमने लगें परन्तु वेद-संस्कृति सुरक्षित रहेगी । मन्दर, धूमिल वेशक पड़ जाये लेकिन अंश मात्र में भी बचने पर यहपुनः अपने उज्ज्वल मूल रूप में सामने आयेगी, क्योंकि इस संस्कृति में मूलभूत मानवता की अस्मिता की रक्षा निहित है ।

डॉ० रघुवीर वेदालंकार

आज की स्थति में वेद-संस्कृति को बचाने के लिए लोगों को धर्म तथा ईश्वर की ओर अभिमुख करना होगा । इसके लिए वेद के साथ गीता-रामायण-उपनिषद आर्य आदि ग्रन्थों का प्रचार भी आवश्यक है । इसके लिए हमें स्वयं आचरण तथा प्रचार करना होगा ।

राजकुमार कोहली

भारतीय समाज को पश्चिम की चकाचौंध से मुक्ति दिलाने के लिए उसे अपने अतीत के गौरवमय इतिहास का स्मरण करवाना होगा । वेद-संस्कृति की रक्षा के लिए वेद-ज्ञान की श्रेष्ठता का प्रचार-प्रसार आवश्यक है ।

कुमारी विद्यावती आनन्द

वेद-संस्कृति को बचाने के लिए ऐसा वातावरण पैदा करना चाहिए, जिसमें वैदिक संस्कृति पनप सके । यह वातावरण घरों और शिक्षा संस्थाओं में पैदा किया जाए । हमारे अधिकतर घरों में वैदिक संस्कृति नामकी वस्तु दिखाई नहीं देती । आपस में होड़ लगी है कि किसकी सन्तान परिश्रमी सभ्यता के रंग में अधिक रंगी गई है । हमारी शिक्षा संस्थाएं भी अपने ध्येय से भटक गई हैं । माता-पिता घरों में वेद-संस्कृति के बीज अपने बच्चों के मन में डालें । शिक्षा संस्थाओं के कर्णधार विचार करें कि शिक्षा संस्थाएं किस आदर्श को सम्मुख रख कर खोली गई थीं । यदि आर्य परिवारों में वेद-संस्कृति पनपती है तो धीरे-धीरे यह सम्पूर्ण भारत में और विश्व में फैलेगी । आर्य वीर इसका प्रसार करेंगे ।

विद्यानन्द सरस्वती

यह प्रश्न आर्य-समाज के सन्दर्भ में किया गया है । पहले आर्य-समाजियों को पश्चिम सभ्यता के प्रभाव से मुक्त करना होगा । कतिपय महत्वपूर्ण विधि-निषेधों का निर्णय करके उन्हें आर्य-समाजियों परब लात् लादना होगा । उन्हें अस्वीकार करने

वालों को निष्कासित कर आर्य-समाज को पवित्र करके उसे आदर्श रूप में प्रस्तुत करना होगा। मैं अपने जीवन को वैसा ही बनाने और तदनुसार व्यवहार करने में सफल रहा हूं, और दूसरों को भी वैसा करने की प्रेरणा देता हूं, किन्तु अब आर्य-समाज के उपदेशकों और नेताओं तक को पाश्चात्य वेशभूषा (टाई तक) में सुसज्जित देखता हूं तो निराश हो जाता हूं।

डॉ० वेद प्रताप वैदिक

पश्चिम सभ्यता से इतना ज्यादा डरने की जरूरत नहीं है। पश्चिम भी उसी दुनिया में है जिसमें आप और हम हैं और जिसे भगवान ने बताया है। पश्चिम ने मानवता को अनेक महान् मूल्यमान दिये हैं। उन्हें ग्रहण करने से झिझकना क्यों ? किन्तु यदि भारतीय मूल्यमानों के ढांचे में उनको स्वीकार किया जा सके तो एक सुन्दर समन्वित संस्कृति बन सकती है। दूसरों के लिए हमारा यही सुझाव है और खुद उसके मुताबिक जीने की कोशिश करते हैं।

वैद्य नाथ शास्त्री

नियमों के विषय में जो विचार हैं, ठीक हैं, परन्तु जब तक समाजशास्त्र के दर्शन को नहीं समझा जायेगा तब तक चाहा परिणाम नहीं निकलेगा। व्यक्तिवाद और समष्टिवाद के समन्वय में नियम प्रभावशाली भूमिका रखते हैं। विश्व का दर्शन इन दो वादों में और अन्तर्राष्ट्रीयवाद में ऐसा फंसा है कि इन नियमों की तरफ अपनी शक्ति की उन्नतता के कारण नहीं जाता है। इन सब समस्याओं को ठीक तौर से सुलझाने की आवश्यकता है। हम इसका पालन करते हैं, जहां तक मेरे व्यक्तित्व और समाज का सम्बन्ध है।

जब आप भारत में संस्कृति बचाने की बात करते हैं तो यह भूल जाते हैं कि भारत के संविधान में सामाजिक अर्थात् भिन्न-भिन्न संस्कृति को भारत की संस्कृति का रूप सामने लाना होगा और तभी वैदिक संस्कृति को बढ़ावा मिलेगा और उसकी स्थापना आप कर सकेंगे।

सत्यदेव विद्यालंकार

इसका उत्तर दे सकना संभव नहीं।

डॉ० सहदेव वर्मा

निस्सन्देह भारत अपनी अस्मिता खो रहा है। दूसरों को कहने की उपेक्षा स्वयं को ही झिंझोड़े ! आर्य-समाज के अधिकारी विशेष रूप से परोपकारिणी सभा प्रतिनिधि-सभाओं तथा सार्वदेशिक-सभा के ऊपर यह उत्तरदायित्व है किन्तु जैसा ऊपर कहा गया है, पदाधिकारी गण स्वयं कुर्सी के व्यामोह से ग्रस्त हैं। आप स्वयं सोचिए यदि बाढ़ ही खेत को खाने लगे तो रक्षा कैसे हो ?

सुदर्शन देव

वेद-संस्कृति बचाने का एक मात्र उपाय है वैदिक शासन मूल को वशवर्ती करने से तने, छाल, पत्ते उसी के अनुरूप बन सकेंगे। अतः जब तक राजनैतिक सभा आर्य-

समाज के अधीन न हो जावे तब तक प्रभावकारी स्थिति बनाकर राजनैतिक दलों, सत्तारुढ़ दल तथा समाज को प्रभावित तथा अपनी बात की सच्चाई की अनुभूति करा कर ही विसंस्कृतिकरण एवं अंग्रेजी सभ्यता के विरुद्ध मोर्चा जमाया जा सकता है। मैं व्यक्तिगत रूप में इस समय कुछ नहीं कर रहा हूं। यही हाल लाखों आर्य-समाजियों का है। वे गतिरोध, दिग्भ्रम एवं अकर्तव्यकर की स्थिति में हैं।

डॉ० सुधीर कुमार गुप्त

व्यावहारिक जीवन में जो संस्कृति उपयोगी सिद्ध होगी, उसका प्रचार-प्रसार स्वतः होता जायेगा। यदि हमारी संस्कृति इस कसौटी पर खरी उतरेगी, तो वह कभी नष्ट न होगी और इसलिए अभी जीवित है। हमने इसे संकीर्ण बनाने का प्रयास किला, उदार बनाने का नहीं। हमें अपने आचरण और जीवन से विशेष रूप से इस संस्कृति की उपयोगिता सिद्ध करनी है और दूसरी 'संस्कृतियों' से श्रेष्ठता दिखानी है। भाषण में साहित्य आदि प्रचार के साधन भी उपयुक्त और आवश्यक है। इसी के अनुसार आचरण कर रहा हूं। मेरी रचनाएं इसको प्रत्यक्ष कराती रहती हैं।

हरिकिशन मलिक

बाहर के विरोधियों से वेद-संस्कृति की रक्षा करना इतना कठिन नहीं है, जितना घर के विरोधियों से। उदाहरण रूपेण 'सरिता' नाम की हिन्दी पत्रिका वेदादि शास्त्रों पर जितना कीचड़ उछाल रही है उसका दसवां भाग भी कोई मुसलमान अथवा ईसाई नहीं उछाल सकता। अन्य देशों के कुछ प्रबुद्ध व्यक्ति तो वेद और वैदिक संस्कृति की ओर आकृष्ट हो रहे हैं। इसका मुख्य क्रियात्मक विरोध हमारे ही सत्ताधारी भाइयों द्वारा हो रहा है। उनसे राज्य सत्ता छीने बिना वेद-संस्कृति की रक्षा करना अत्यन्त कठिन है। आर्य-समाज को आलस्य त्यागकर 'सत्यार्थ प्रकाश' के छठे समुल्लास में वर्णित सुराज्य की स्थापना करनी चाहिए।

१३

आर्य-समाज के नियम और उनके आचरण

प्रश्न

आर्य-समाज के पहले दो नियम ईश्वर के सम्बन्ध में, अगले तीन नियम अपने स्वयं के सम्बन्ध में तथा अन्तिम पांच नियम अन्य लोगों के सम्बन्ध में कर्त्तव्य का विधान करते हैं ? इन नियमों में इतनी सामग्री मौजूद है कि इनके ऊपर आचरण करने से व्यक्ति और समाज दोनों कल्याणकारी स्थिति को प्राप्त कर सकते हैं। क्या आप अपने जीवन में इन नियमों का पालन करते हुए इस स्थिति को प्राप्त कर सके हैं ?

उत्तर

अजय कुमार जैन

आर्य-समाज के नियम अच्छे हैं। उन पर चलकर व्यक्ति नैतिक मार्ग का अनुसरण कर सकता है।

अमरनाथ कांत

आर्य-समाज के नियम तो क्या कोई भी बात संकुचित नहीं है। केवल अपने ही लिए कोई बात नहीं सब आठों ही नियम समष्टि के लिए हैं। इसलिए प्रत्येक मत-मतान्तरों मनुष्य कृति धूरी इसके सामने टिक नहीं सकती है। इन नियमों में एक-एक वाक्य व्यक्ति और समाज का ही नहीं समस्त विश्व के कल्याण का इच्छुक है। मेरे जीवन का उत्थान का कारण ही आर्य-समाज के दस नियम हैं जो प्रथम ईश्वर से लेकर अन्त में शरीर से आत्मा को उन्नत कराते हैं। जिसमें अपने और पराये का भेद मिटाया है।

प्रो० कैलाशनाथ सिंह

मैं पूर्णतया नियमानुकूल आचरण करता हुआ सन्तुष्ट हूं। जनता को विद्वानें

द्वारा समझाने की आवश्यकता है ।

प्रो० कृष्णलाल

प्रयत्न कर रहा हूं ।

जगतराम आर्य

आर्य-समाज के नियमों पर आचरण करने से व्यक्ति और समाज का चमत्कारा कल्याण होता है । मैं भी यथाशक्ति इन नियमों का पालन कर रहा हूं, इससे मुझे संताप और खुशी होती हैं ।

डॉ० दुखनराम

हाँ—हम आर्य-समाज के दसों नियमों का पालन करते हुए अपने जीवन में व्यक्ति एवं समाज दोनों का कल्याण कर रहे हैं और अन्य लोगों को भी ऐसा करना चाहिए ।

देवेन्द्र आर्य

इसमें कोई विरोध नहीं कि यदि आर्य-समाज के नियमों पर चला जाय व अन्यों को भी इस सम्बन्ध में दिशा निर्देश किया जाए तो व्यक्ति और समाज कल्याणकारी स्थिति को प्राप्त कर सकते हैं, परन्तु पर छिद्रान्वेशी अधिक है, अतः प्रत्येक मानव का सर्वांश में ठीक होना अत्यन्त कठिन कार्य है, दोष रहित तो ऋषि होगा ।

प्रताप सहगल

एक स्थिति ऐसी आती है, जब व्यक्ति को अपने रोजमर्रा के जीवन में नियम देखकर चलने की जरूरत महसूस नहीं होती । उसका अपना विवेक इतना जागृह होता है कि गलत सही का निर्णय लेता चलता है और काम करता है । ढाई आखर 'प्रेम' के सीख लीजिए, बाकी नियम प्रपंच लगते हैं ।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

आर्य-समाज के दस नियम मानव-धर्म के दस सूत्र हैं, जिनमें सत्य को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है । सत्य प्रकाश का प्रतीक है तो मिथ्या अंधकार का । जिस प्रकार अंधकार में बुराइयों को फैलाने का अवसर मिलता है उसी प्रकार सत्य के लोप होते ही सामाजिक कुरीतियां, भ्रष्टाचार आदि सिर उठाने लगते हैं । सत्य का संग बना रहे तो अधिकांश कुरीतियां स्वतः ही समाप्त हो जाती हैं । हमें सत्य के प्रति निष्ठावान रहने का इतना लाभ हुआ कि हमारी बात पर कोई अविश्वास नहीं करता है जो कम उपलब्धि नहीं है ।

प्रेमनाथ

इस प्रश्न का भी उत्तर दिया जा चुका है । आर्य-समाज के सत्संगों में केवल

इन नियमों के पढ़ लेने से कल्याण नहीं हो सकता।

डॉ० प्रशान्त कुमार

मेरे जीवन में जो कुछ कल्याणकारी है, वह वेद, महर्षि दयानन्द व आर्य-समाज (के नियम) के ही कारण है। समाज का कल्याण भी मैं आर्य-समाज के नियमों से ही कुछ कर पाता हूं।

प्रह्लाद दत्त वैद्य

इस प्रश्न का उत्तर मैं क्या निवेदन करूं ? मेरे सम्पर्क में आने वालों को अधिक जानकारी हो सकती है।

भगवान् चैतन्य

ईश्वर, व्यक्ति (स्वयं) व समाज इनसे सम्बन्धित क्रमश: आर्य-समाज के नियम हैं। महर्षि की ऐसी ही भावना लगती है। इसीलिए इसी बात को एक विशेष (अलग से) नियम में इस रूप में रखा है कि व्यक्ति को शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति करके, संसार के लिए भी इन्हीं सफलताओं की प्राप्ति के लिए सहयोग देना चाहिए। आर्य-समाज का उद्देश्य है—संसार का उपकार करना। इसका आधार है शरीर, आत्मा और फिर समाज की उन्नति करना। इन तीन मूलाधारों पर चलकर ही संसार का उपकार हो सकेगा। यही क्रम हमें आर्य-समाज के दस नियमों में भी दिखाई देता है। इन नियमों में इस लोक एवं परलोक की उन्नति का आधार भी मौजूद है जो धर्म की व्याख्या के रूप में भी दर्शनकारों ने हमारे समक्ष रखा है। मैं स्वयं भी इन्हीं नियमों के आधार पर चलकर निरन्तर उन्नति करता रहा हूं। तीनों ही उपलब्धियों के लिए मैं कार्यरत हूं।

डॉ भवानीलाल भारतीय

यथासम्भव इसमें सफलता मिली है।

मदनगोपाल खोसला

आर्य-समाज के १० नियमों में स्वामी जी ने व्यक्ति के पूर्ण व्यक्तित्व तैयार करने की सामग्री भरी हुई है। हम अपनी ओर से अधिक से अधिक अपनाने का प्रयत्न करते हैं।

डॉ० मण्डन मिश्र

मुझे आर्य-समाज के नियमों में विश्वास है और उन्हें व्यक्ति और समाज दोनों के लिए कल्याणकारी मानता हूं। हम जीवन में जो भी प्राप्त कर सके है—उसमें इन नियमों के मार्गदर्शन का विशेष महत्व है।

मुल्कराज भल्ला

कर सका हूं—मेरा जीवन बड़ा सुखी और शान्त है।

यशपाल वैद

आर्य-समाज के दस नियम अपने-आप में पूर्ण हैं और किसी भी व्यक्ति, समाज के लिए इन्हें अपनाना, इनका पालन करना, सुख और सन्तोष को प्राप्त करना है। व्यक्तिगत रूप में जब-जब इन नियमों का न केवल ध्यान अपितु पालन किया है, सुख और शान्ति ही मिली है, इनसे दूर होने पर मन विचलित ही हुआ है।

डॉ० रघुवीर वेदालंकार

मैं नहीं समझता कि आर्य-समाज के अन्तिम पांच नियम अन्य लोगों के सम्बन्ध में तथा उनसे पूर्ववर्ती तीन नियम अपने सम्बन्ध में हैं। कारण नियम नं० ४ तथा ५ व्यक्तिगत ही नहीं अपितु समाज से भी सम्बन्ध रखते हैं। इन पर आचरण करने से मुझे सुख, शान्ति एवं आनन्द मिलता है।

राजकुमार कोहली

मेरे विचार में आर्य-समाज के नियमों में इतनी सामग्री मौजूद है, जिन पर आचरण करने से व्यक्ति और समाज दोनों कल्याणकारी स्थिति को प्राप्त हो सकते हैं। मेरे जीवन में इन नियमों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाही है।

कु० विद्यावती आनन्द

आर्य-समाज के नियमों पर आचारण करने से व्यक्ति और समाज दोनों कल्याणकारी स्थिति को प्राप्त कर सकते हैं। मैं अपने जीवन में इन नियमों का पालन अवश्य करती हूं, परन्तु यह नहीं कह सकती कि मैं कल्याणकारी स्थिति को कहां तक प्राप्त कर सकी हूं। इसका अनुमान तो मेरे सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति ही लगा सकते हैं।

विद्यानंद सरस्वती

मुझे आर्य-समाज के नियमों का पालन करने में सफलता मिली है। यदि मैं सफल हो सकता हूं तो प्रयास करने पर और क्यों नहीं हो सकते?

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

ईश्वर हमें मिला है या न मिला, यह ईश्वर ही जाने। हम को तो पता भी नहीं चलता। नियमों का हमें ध्यान ही नहीं आता। एक जीवन-शैली बन गई है। यह तो कोई और ही तय कर सकता है कि उसमें नियम पल रहे हैं, या टूट रहे हैं। लेकिन इतना मैं कह सकता हूँ कि आर्य-समाज के नियम पालन करने योग्य हैं।

वैद्यनाथ शास्त्री

आर्य-समाज के नियमों में सब कुछ है। विश्व शासन और समाज के निर्माण के लिए वे नियम पर्याप्त हैं। मैं इनका पालन करता हूं, जितने व्यक्ति से सम्बन्ध रखते हैं। ये नियम व्यक्ति और समाज दोनों को सुखी-सम्पन्न कर सकने हैं और

विश्व-राष्ट्रों को एक स्थान पर बैठाकर समन्वित विश्व-शासन को सफलीभूत कर सकते हैं।

सत्यदेव विद्यालंकार

आर्य-समाज के दस नियम, ऋषि की श्रेष्ठतम देन हैं। कोई इनमें पूरा नहीं उतर सकता। स्वल्प आचरण भी हो तो श्रेयस्कर है। हम सामान्य जन कैसे इन नियमों पर जीवन-यात्रा चलाने में समर्थ हो सकते हैं, यह प्रश्न पूछना ही नहीं चाहिए था।

डॉ० सहदेव वर्मा

वस्तुतः आर्य-समाज के दसों नियम अत्तन्त सशक्त, ठोस एवं व्यावहारिक हैं—यदि पालन किया जाये तो व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र के कल्याण में सन्देह नहीं। छटा नियम तो अनुपम है ही।

सुदर्शन देव

मैं एक सामान्य व्यक्ति हूं। ईश्वर के सम्बन्ध में दिये गये विशेषण उसकी महत्ता का भान है। साधारणतया मैं सहज आर्य-समाजी हूं। शासन के रूप में भी मैं विशेष सक्रिय नहीं रहा। स्थितियों को सहन चलते रहने में मेरी प्रवृत्ति रही है।

डॉ० सुधीर कुमार गुप्ता

कल्याण की परिभाषा, लक्ष्य और सीमाएं अपनी-अपनी दृष्टि से मानव द्वारा निर्धारित की जातीं हैं। मुझे इन नियमों के पालन से मानसिक शारीरिक और सामाजिक सुविधाएं सामान्यतः प्राप्त होती रही हैं। मेरे पर कुछ सीमा तक उपनिषदों और गीता के कर्मयोग और अनासक्तिवाद का भी प्रभाव है।

हरिकिशन मलिक

हाँ।

१४

वर्तमान जीवन की समस्याएं और आर्य-समाज का समाधान

प्रश्न

आज भारत जिन समम्याओं से घिरा है, उनसे हम सभी परिचित हैं। ये समस्ताएं हैं—क्षेत्र, भाषा एवं धर्म की संकीर्णता, राष्ट्रीय चरित्र का अभाव, अनैतिकता एवं भ्रष्टाचार, जनसंख्या का विस्फोट, बेकारी तथा युवा पीढ़ी की दिशाहीनता, स्वार्थी राजनेताओं के हाथ में सत्ता का अधिकार, प्रजातंत्र का दुरुपयोग, गरीबी एवं अशिक्षा का विस्तार, सामाजिक कार्यों के प्रति उदासीनता और स्वार्थों का जमघट आदि। एक आर्य-समाजी के रूप में आप इन समस्याओ का किस प्रकार समाधान करना चाहेंगे ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

भारत की विभिन्न समस्याओं का एकमात्र हल है धार्मिक सहिष्णुता, भाईचारा, मानव-प्रेम आदि इन्हीं का प्रचार स्वामीजी ने किया।

अमरनाथ कांत

इन सबकी समस्याओं का समाधान है आर्य-समाज और उसके उद्देश्य तथा आर्य-समाज का भावी कार्यक्रम व वेद-प्रचार से ही सारी समस्याओं का हल होगा।

प्रो. कैलाशनाथ सिंह

आर्य-समाज के क्षेत्र में इन समस्त दुराग्रहपूर्ण समस्याओं का निराकारण है। आर्य-दर्शन को जीवन में परिणत करने की आवश्यकता हैं। मैं इस दिशा में प्रचार शील हूं। आर्य-समाज को एक विशाल मंच भी इन कुरीतियों से संघर्ष हेतु स्थापित करना चाहिए।

प्रो. कृष्णलाल

स्ववं आचरण और फिर यथासम्भव प्रचार द्वारा। प्रत्येक आर्य-समाजी को संकल्प करना चाहिए।

जगतराम आर्य

आज भारत अनेकों समस्याओं और संकटों से घिरा हुआ है । इन सभी समस्याओं का हल महर्षि का बताया हुआ मार्ग ही हल कर सकता है । महर्षि के अनुयायी आर्य-समाजी कृणवन्तो विश्वमार्यम् को साकार करें । सारे जगत को आर्य बनाएंगे तो सभी समस्याएं भारत की हल हो जाएंगी ।

डॉ. दुखनराम

वैदिक साम्यवाद द्वारा इन समस्याओं का समाधान हो सकता है ।

देवेन्द्र आर्य

आपने जिन समस्याओं की ओर ध्यान आकृष्ट किया है न्यूनाधिक सदैव से हैं और रहेंगी । सर्वथा अभाव असम्भव है । हां, न्यूनता आ सकती है, यदि शिक्षाप्रणाली पर ध्यान दिया जाय जैसा ऊपर कहा है ! साथ ही चुनाव प्रणाली तो बिल्कुल दूषित है, चुनाव प्रणाली का आधार आयु न मानकर यदि विशिष्ट योग्यता का आधार माना जाय, जैसा महर्षि ने 'सत्यार्थ प्रकाश' केष्ट समुल्लास में कहा है । (गणाद गुणों गरियान) अशिक्षितों की अधिक संख्या अशिक्षित को ही चुनेगी और विधान में अपूर्ण, दोष युक्त रहना उनका दृष्टिकोण स्वार्थपूर्ण होगा । राजनीति में दूषिता का आधार भी यही है।

प्रताप ससगल

इस प्रश्न में आपने ढेरों समस्याएं गिनवा दी हैं। अच्छा होता कि आप यह पूछते कि एक भारतीय होने के रूप में इतना समाधान कैसे सम्भव है, ताकि एक आर्य-समाजी के रूप में पहले भी कह चुका हूं कि मैं आज आर्य-समाजी नहीं हूं, इसलिए इस दृष्टि से इस प्रश्न को देखना सम्भव नहीं है । हां, एक भारतीय के रूप में कह सकता हूं, कि इन सब समस्याओं के यथावत रूप के कारण है सत्ता लोलुप राजनेता लोग, चापलूस और मक्कार हमारी सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक शोषण, जातिवाद, अशिक्षा और भ्रष्टाचार । समस्याएं तो हमेशा कुछ न कुछ रहेंगी, पर आदमी आदमी की जिन्दगी जी सके, उसके लिए इस गली-सड़ी व्यवस्था का बदलना जरूरी है, कर्म फल का सिद्धांत गलत है । उसके प्रति भारतीयों की आस्था को तोड़ना जरूरी है ।

प्रो. प्रभूशूर आर्य

अगर हम 'सत्यार्थ प्रकाश' की विचारधारा का समुचित प्रचार-प्रसार कर सकें तो देश, क्षेत्र, भाषा एवं धर्म (मजहब) की संकीर्णता राष्ट्रीय चरित्र का अभाव, अनैतिकता एवं भ्रष्टाचार, जनसंख्या का विस्फोट, बेकारी, युवा पीढ़ी की दिशहीनता, स्वार्थी राजनेताओं के हाथ में सजा का अधिकार, प्रजातंत्र का दुरुपयोग, गरीबी एवं

का विस्तार, सामाजिक कार्यों के प्रति उदासीनता आदि दोषों से मुक्त हो सकता है क्योंकि महर्षि ने सभी विषयों का समावेश 'सत्यार्थ प्रकाश' में सूत्र रूप अथवा संक्षेप में किया है। परिवार नियोजन पर करोड़ों रुपये व्यय हो रहे हैं परन्तु शराब के विस्तार से अनेकों दोष समाज में व्याप्त हो जाते हैं। सरकार को नैतिकता को महत्व देना होगा और शराब पर रोक लगाये बिना यह सम्भव नहीं है।

प्रेमनाथ

आर्य-समाज के नियमों पर यदि हम आचरण करें तो सब कुछ हो सकता है। खाली लैक्चरबाजी व ढोल-ढमक्का से अथवा बड़े-बड़े मेलों से कोई प्रगति नहीं हो सकती।

डॉ. प्रशान्त कुमार

सब समस्याओं की जड़ है भोगों के प्रति अमिट तृष्णा। आर्य-समाज ने वैदिक आश्रम व्यवस्था ध्वस्त होने पर इन समस्याओं का समाधान करना चाहा। ५५-६० वर्षों के उपरान्त यदि व्यक्ति सेवा निवृत्त (केवल सरकारी नौकरी से नहीं वरन व्यापार व राजनीति से भी) हो जाए और शहर छोड़ कर गांव में जाकर शिक्षा के विकास में जुट जाए तो बेकारी आदि काफी समस्याओं का हल हो सकेगा।

प्रहलाद दत्त वैद्य

ये शुद्ध राजनीतिक प्रश्न हैं। इसका समाधान 'सत्यार्थ प्रकाश' के छठे समुल्लास में ऋषि ने विस्तार से लिख दिया है, अर्थात् शासन में आर्यों का आधिपत्य हो और इसी दृष्टि से छठे समुल्लास का प्रचार आर्य-समाजों व जनसाधारण में हो।

भगवान चैतन्य

इन सब समस्याओं का निराकरण भी वेद-पथ पर चलने से ही हो सकता है। वेद बड़ी ऊंची बात करता है, उसमें न तो भाषायी झगड़े हैं, न क्षेत्रीयता एवं जातियता की संकीर्णताएं हैं। राजनीति पर वैदिक धर्म का रंग हो तो वह भी भ्रष्ट नहीं हो सकती है। आर्य-समाज या महर्षि दयानन्द का लक्ष्य ही व्यक्ति में चारित्रिक सभी प्रकार की गुण पैदा करना है, क्योंकि हमारा स्वप्न है विश्व को आर्य बनाना। विश्व का आर्यकरण करना है कि प्रत्येक व्यक्ति में मानवीय गुणों का आधान करके उसे श्रेष्ठ (आर्य) बनाना। जब हम व्यक्ति का चारित्रिक उत्थान करने में सफल हो जाएंगे तो सभी झगड़े समाप्त हो जाएंगे। आवश्यकता इसी बात की है कि वेद को आधार मान कर हम एक ईश्वर, एक भाषा एवं सार्वभौमिकता की बात कहें। अन्य कोई भी मार्ग इन झगड़ों एवं स्वार्थ तथा संकीर्णताओं से व्यक्ति को ऊपर उठाने में सार्थक नहीं हो सकेगा।

डॉ. भवानी लाल भारतीय

इस प्रश्न का उत्तर भी विस्तार से दिया जाना अपेक्षित है जो इस उत्तरावली

में सम्भव नहीं है।

मदन गोपाल खोसला

आर्य-समाज के प्रत्येक सदस्य का कर्तव्य है कि वह पहले स्वयं को इन संकीर्णताओं में ऊपर उठकर इतना योग्य बना ले कि वह अपने पास रहने वाले थोड़े से ही लोगों का मार्ग-दर्शन कर सके और इस प्रकार धीरे-धीरे यह सुधार आन्दोलन देश में चलाया जा सके। इन सदस्यों की लगन पं० लेखराम और गुरुदत्त जैसी होनी चाहिए।

डॉ. मण्डन मिश्र

पुराने स्नातकों के समान यदि हम राष्ट्र को सर्वोपरि मानकर चलते भारत की वर्तमान समस्याओं के समाधान में महत्वपूर्ण योग दे सकते हैं। राष्ट्र के प्रति निष्ठा को अपना सर्वस्व मान लें तो एक-एक व्यक्ति मिलकर सारे समाज की समस्याओं के समाधान में सहायक हो सकता है।

मुलकराज भल्ला

हर पुरुष अपने आपको ठीक करने का यत्न करे। दूसरों की बुराइयों और कमियों पर ध्यान न दे। यथा योग्य हर एक के काम आवे ! यदि हर आदमी स्वयं को ठीक कर लेगा तो समाज अपने आप ठीक होगा। अब तो हम सब को पद की इच्छा है—सेवा की भावना नहीं। आत्मा को समझे तो कल्याण होगा। कहनी और करनी एक सी हो।

यशपाल वैद

आज की विभिन्न सम्याओं का समाधान किसी भी धर्म के आधारभूत नियमों का पालन करना ही हो सकता है। किसी भी धर्म में मानवता के अहित की बात नहीं है। धर्म नाम कर्तव्य का है। आर्य-समाज के सन्दर्भ में दस नियमों का पालन ही बड़ा योगदान है। पहले भी कहा, कथनी और करनी में समानता एक स्वर्ग-सूत्र है आज की ज्वलंत समस्याओं को हल करने का।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार

समस्याएं विविध हैं तथा उनके समाधान भी विविध होंगे ! क्षेत्र, भाषा एवं धर्म की संकीर्णता को दूर करने के लिए राष्ट्रीयभावना का प्रचार करना होगा। राष्ट्र विरोधी कार्यों जैसे पृथक देश की मांग करना, देश का झण्डा फाड़ना, आदि कार्यों के लिए कड़े से कड़ा दण्ड दिया जाए। युवा पीढ़ी को अधिक से अधिक रोजगार के अवसर दिए जाएं। उनको नौकरी मात्र पर आश्रित न रहकर स्वावलम्बी कार्य सिखाये जाएं। जनसंख्या को अप्राकृतिक साधनों की अपेक्षा संयम एवं ब्रह्मचर्य के आधार पर रोकना अच्छा होगा। आज राजनेताओं के कारण अधिक भ्रष्टाचार पनप रहा है। उसका उपाय तो जनमानस को चेतना देकर भ्रष्ट व्यक्तियों को सत्ता में न आने देना

ही है, किन्तु यह अति दुष्कर कार्य है। सभी राजनीतिक पार्टियों में यह रोग व्याप्त है। इसका ठोस उपाय है सभी पार्टियों के ईमानदार लोगों की कम से कम १०-१५ वर्ष तक निर्वाचन रहित स्थिर तथा पूर्ण शक्तिशाली सरकार।

राजकुमार कोहली

आर्य-समाज राष्ट्रीय एकता का प्रबल पक्षधर रहा है और हिन्दी को जन-जन तक पहुंचाने और सम्पर्क भाषा बनाने का श्रेय भी उसी को दिया जाता है। आर्य-समाज की विचारधारा के प्रचार-प्रसार से क्षेत्र, भाषा, धर्म की संकीर्णता, अनैतिकता एवं भ्रष्टाचार को मिटाया जा सकता है।

कु० विद्यावती आनंद

इन समस्याओं का समाधान तभी हो सकता है यदि चरित्रवान आर्य-समाजी राजनीति में सक्रिय भाग लें। लोक-सभा और विधान-सभाओं में जाकर वह इन समस्याओं के विषय में निर्भयता से और धडल्ले से अपनी बात कहें और बलवती लॉबी तैयार करें। वह किसी राजनैतिक पार्टी के दुमछल्ले बन कर अपनी अन्तरात्मा का हनन न करें। विधान-सभाओं के बाहर भी क्षेत्रीयता, भाषावाद, साम्प्रदायिकता, अनैतिकता एवं भ्रष्टाचार के विरुद्ध युद्ध स्तर पर काम करके जन-मत तैयार करें। जन-मत में अथाह शक्ति है। सरकार को मजबूर करें कि समस्त शिक्षा संस्थाओं में ऐसी नैतिक शिक्षा दी जाये और ऐसा इतिहास पढाया जाए जिससे बच्चों का चरित्र निर्माण हो, बच्चे भारतीय संस्कृति से प्रेम करना सीखें एवं राष्ट्र-भक्त बनें। अगर हम ऐसा कर सकें तो नई पीढ़ी इन समस्याओं का समाधान करने में आर्य-कार्यकर्ताओं का साथ देगी और स्वयं भी इन समस्याओं को सुलझाने में समर्थ होगी।

विद्यानंद सरस्वती

इस प्रश्न का उतर कुछ पंक्तियों में निबद्ध करना सम्भव नहीं।

डॉ. वेद प्रताप वैदिक

इस प्रश्न का जवाब देने के लिए एक बड़ा ग्रन्थ लिखना होगा लेकिन जैसा कि मैंने पहले कहा कि यदि आर्य-समाज सांस्कृतिक क्रान्ति का अभियान चलाए तो बड़ा काम हो सकता है। सांस्कृतिक क्रान्ति राजनीतिक क्रान्ति की मां है।

वैद्यनाथ शास्त्री

सारी समस्याओं से जूझना पड़ेगा, परन्तु सब समाधान आर्य-समाज के माध्यम से और वेद के सिद्धान्त पर ही किया जा सकेगा। समस्याएं इतनी गिनाई गई हैं कि उनके सम्बन्ध में एक दो पंक्ति में कुछ कहा नहीं जा सकता है।

सत्यदेव विद्यालंकार

जब तक राजनैतिक शक्ति और सत्ता, आर्य-समाज के हाथों में नहीं आयेगी

तब तक समस्याओं का हल असंभव है और अन्धेरे में लाठी मारने के समान है ।

डॉ. सहदेव वर्मा

गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर व्यक्ति का मूल्यांकन, सर्वेभवन्तुसुखिनः की कामना सांस्कृतिक आधार पर राष्ट्रीयता का विकास ही इन समस्याओं का समाधान है । भ्रष्टाचार, राष्ट्र-द्रोह, विघटनकारी प्रवृत्तियों तथा अस्पृश्यता के लिए पूर्णतः सरकार जिम्मेदार है । जब तक वर्तमान जातीय आधार पर रिजर्वेशन जैसे प्रावधान रहेंगे—संसार की कोई शक्ति इन बुराइयों को नहीं मिटा सकती ।

सुदर्शन देव

आज की भारतीय समस्याओं का यों तो अंतिम एवं एकमात्र सही उपाय आर्य-समाजी सत्ता की स्थापना है, किन्तु अन्तरिम रूप में व्यापक जन-जागरण, प्रचार सघनता,लोक-शिक्षण, स्वयं की पत्र-पत्रिकाओं को सार्वजनिक रूप देकर लोगों की विचारधारा पर अधिकार करना, प्रदर्शन एवं देवव्यापी पद-यात्रा, शिक्षालयों में भाषण-वाद-विवाद प्रतियोगिता, जन सम्पर्क अभियान, शासन एवं राजनैतिक पार्टियों में प्रवेश कर अपने मन्तव्यों का अनुयायी वर्ग तैयार करने से पर्याप्त सीमा तक इन समस्याओं का निराकरण संभव है ।

डॉ० सुधीर कुमार गुप्त

नैतिक सदाचार, निष्ठा और चरित्र निर्माण द्वारा ।

हरिकिशन मलिक

सारी समस्याओं का मूल कारण है राज्य-सत्ता का भ्रष्ट, स्वार्थी तथा अयोग्य व्यक्तियों के हाथों में चला जाना । यह समस्याएं कहीं बाहर से नहीं आईं । इनमें से कुछ हमारे ही राजनैतिक नेताओं की बुद्धिहीनता के कारण उत्पन्न हुई हैं और शेष उनकी स्वार्थ-सिद्धि के कारण । समझने की बात है कि केवल स्वराज्य प्राप्ति से सुराज्य की स्थापना नहीं हो जाया करती । जरासंध, कंस आदि विदेशी नहीं थे, और उस समय तक भारत में ऋषि लोग भी मौजूद थे, परन्तु उन स्वार्थी सिन्धु शासकों ने उधम मचा रखा था । इसी कारण महाराजा कृष्ण को उनका हनन करना पड़ा था । इन समस्त समस्याओं से निपटने का एक मात्र उपाय यह है कि 'सत्यार्थ प्रकाश' के छठे समुल्लास में वर्णित राज्य व्यवस्था की जाए। महर्षि ने वह समुल्लास 'सत्यार्थ प्रकाश' का कलेवर बढ़ाने के लिए नहीं लिखा था और न ही आर्य-समाज को कोरे बुद्धिजीवियों का संघ बनाया था । महर्षि ने तो आर्य-समाज में गणतन्त्र प्रणाली द्वारा अधिकारियों के चुनाव का शुद्ध ढंग अपना कर आर्यों को स्पष्ट संकेत दे दिया था कि इसी प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् श्रेष्ठतम व्यक्तियों को अपना प्रतिनिधि बनाकर सुराज्य की स्थापना कर लेना। अफसोस कि आर्य-समाज के नेता स्वतंत्रता

प्राप्ति के पश्चात् आर्य-समाज को केवल एक धार्मिक संस्था समझकर राज्य शासन में सक्रिय भाग लेने से पीछे हट गए। इसी भूल के कारण आज ये दुर्दिन देखने पड़ रहे हैं। अस्पृश्यता की समस्या को भी बाल-बुद्धि नेताओं ने उभारा है। आर्य-समाज ने जन्म के अनेक शूद्रों को सुशिक्षित करके महा-पण्डित और संन्यासी तक बना दिया। किसी ने विरोध नहीं किया, परन्तु सरकार केवल जन्म के आधार पर आरक्षण करके अयोग्य व्यक्तियों को भी ऊंचे पद दे डालती है जिसके फलस्वरूप वे स्वयं भ्रष्ट होते हैं तथा अन्यों को भ्रष्ट करते हैं। इसका विरोध होता है तो तनाव फैलता है। एक छोटा-सा निजी उदाहरण पर्याप्त होगा। जब हम स्कूल में पढ़ते थे तो प्यास लगने पर रास्ते में पड़ने वाले गांवों में जान-पूछकर चमारों के घरों में पानी पिया करते थे। चमारियां अपने घर को लीप-पोतकर शुद्ध रखती थीं, और हमें उनके हाथ से पानी पीने में तनिक भी संकोच नहीं होता था। और अब जन्म के शूद्र परन्तु उच्च सरकारी अफसरों के घर में प्यासा रह जाना मंजूर है, परन्तु पानी पीते संकोच होता है कि क्योंकि मेज पर अण्डे पड़े होते हैं, आंगन में मुर्गियों की आवाज आ रही होती है और शीशे की अलमारियों में शराब की बोतलें सजी होती हैं। किसी ब्राह्मण के घर में यह हाल हो तो वहां भी प्यासे ही रहना पड़ता है। कहने का तात्पर्य यह है कि अस्पृश्यता का निराकरण उसी ढंग से हो पायेगा जो महर्षि ने बताया था और जो क्रियात्मक रूप से भी श्रेष्ठ सिद्ध हो चुका है।

१५

अस्पृश्यता की समस्या और उसका निराकरण

प्रश्न

आर्य-समाज ने भारत को अनेक प्रमुख समस्याओं के समाधान में सदैव दिशा-निर्देशन किया है। आज भारत में दूषित वर्ण-व्यवस्था, अस्पृश्यता, पाखण्ड एवं भ्रष्टाचार, राष्ट्रद्रोह एवं विघटनकारी प्रवृत्तियां तथा बलात् धर्मांतरण आदि समस्याओं का जाल फैला हुआ है। कृपया बतायें इन समस्याओं को समूल समाप्त करने के लिए आप क्या करना चाहेंगे ? देश में अस्पृश्यता की समस्या सरकारी और गैर-सरकारी तौर पर काफी कुछ करने के बाद भी भयावह बनी हुई है। आर्य-समाज को इस समस्या का निराकरण करने के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

आर्य-समाज ने प्रारम्भ में स्वार्थहीनता, परोपकार, राष्ट्रप्रेम, धर्म के प्रति आस्था का जिस उत्साह के साथ प्रचार किया था, वह आज दिखाई नहीं देता।

अमरनाथ कांत

प्रथम जो समस्याओं का जाल फैला हुआ है, उसके लिए सर्वप्रथम अराष्ट्रीय शासकों को सत्ता से हटाना होगा। सत्ता देश-भक्तों व आर्य-विचारकों के हाथों में संभाल कर फिर देश में अस्पृश्यता की समस्या को सत्ताधारी विदेशी सरकारी शासकों ने जो बिगाड़ा है, उसमें केवल उन्हीं का अपना स्वार्थ साधने के लिए जब वह नहीं रहेंगे तब आर्य-समाजका वैदिक धर्म प्रचार मिशन सफलतापूर्वक कार्य करता हुआ सब को वेद का उपदेश देता हुआ सब का कल्याण करता रहेगा।

प्रो० कैलाशनाथ सिंह

आर्य-सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार के साथ आर्यजनों को स्वयं आदर्श बनकर जनता के सामने आना चाहिए। धर्मान्तिरण पर बल देना चाहिए। हरिजन तथा शुद्धि द्वारा आये विधर्मी आर्य-समाज में पूर्ण मर्यादा के साथ जीवन व्यतीत करें और हिन्दू समाज को इतना सहृदय बनाया जाय कि वह उसके अंग बन जाएं।

प्रो० कृष्णलाल

आर्य-समाजों का कार्य गांवों में बहुत कम है। सरकार ने 'आरक्षण' के द्वारा अस्पृश्यों को अलग वर्ग बना दिया है। आर्य-समाज को गांवों में सत्संग लगाकर, वहां ऐसे लोगों को निमंत्रित करके समान-व्यवहार, कभी-कभी प्रीतिभोज आदि का आयोजन करना चाहिये। पौराणिक भाइयों को भी वेद-पुराण के आधार पर समझाना होगा।

जगतराम आर्य

यदि अध्यापक कट्टर आर्य-समाजी होगा तो छात्र छात्राओं के संस्कार आर्य-समाजी बनेंगे। इसी प्रकार भारत के शासकों के संस्कार तथा शिक्षा-दीक्षा आर्य-समाजी होगी, आर्य-समाज के नियम सिद्धान्तों का पता होगा तो भारतीय जनता को भी वैसा बनाने का प्रयत्न करेंगी। भारत के शासक-प्रशासक प्रायः पौराणिक विचार-धारा के हैं, वे आर्य विचारधारा को क्यों अपनाएंगे और जनता में प्रचलित करेंगे ? पहले शासकों-प्रशासकों को आर्य-विचार का बनाना चाहिए, जैसा राजा वैसी प्रजा।

डॉ० दुखनराम

इन सारी समस्याओं को दूर करने के लिए आर्य-समाज को अपनी शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करनी चाहिए।

देवेन्द्र आर्य

आर्य-समाज जैसे पूर्व से दिशा-निर्देश देता आ रहा है तो अब भी आर्य-समाज को चाहिए वह बड़े राजनीतिज्ञों को प्रभाव में ले, क्योंकि बड़ों के प्रभाव से छोटा व्यक्ति प्रभाव में आता है। यदि राजनयिकों की समझ में आ जाए कि राष्ट्र के तीन शत्रु हैं—अविद्या, अन्याय, अभाव और इस पर वर्ण-व्यवस्था व युगीन व्यवस्था का सम्बन्ध भी बताया जाए तो विशेष कठिनाई आने की सम्भावना नहीं है।

प्रताप सहगल

कौन क्या धर्म मानता है या कोई किसी भी धर्म में विश्वास नहीं करता इसकी छूट मौजूदा परिस्थितियों में जरूरी है। अस्पृश्यता एक अभिशाप है और इसका मूल मनुस्मृति है। मनुस्मृति का विष पूरे समाज में फैला हुआ है। राष्ट्रद्रोह अक्षम्य होना चाहिए। विघटनकारी तत्त्वों को सख्ती से दबाना चाहिए और पाखण्ड, भ्रष्टा-

चार आदि समाप्त करने के लिए आर्य-समाज तथा ऐसी ही दूसरी संस्थाओं को जबर्दस्त आन्दोलन छेड़ना चाहिए।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

आर्य-समाज जब तक आन्दोलन का रूप रहा तो वह समस्याओं से जुझने में अग्रणी रहा है, परन्तु जब से अपने को सम्प्रदाय के रूप में बांध कर हिन्दू के पीछे जोड़ लिया है तभी से यह उन बुराइयों में स्वयं-ग्रस्त हो गया है। दूषित वर्णव्यस्था के दलदल में आज आर्य-समाजी स्वयं फसे हैं, यहां तक कि उनके लिये रिश्ते ढूँढने में बिरादरी ही प्रमुख होती है। भाग्य से आर्य-समाजी परिवार में मिल जाये तो शेखी बधारेंगे कि 'हमने आर्य-समाजियों में रिश्ता किया है'। जन्मना वर्ण-व्यवस्था को हम गुण-कर्मानुसार रिश्ते तय करके मिटा सकते हैं। नाम से जन्मना जाति सूचक शब्द हटाकर भी इस वर्ग व्यवस्था को मिटाया जा सकता है। अस्पृश्यता निवारण में उपरोक्त साधन के संग-संग गुरुकुल शिक्षा प्रणाली भी सहायक सिद्ध हो सकती है। सरकार की आरक्षण नीति अधिक द्वेष फैला रही है। वेद की कर्म फिलासिफी पाखण्डों को दूर कर सकती है तथा बलात् धर्मान्तिरण रोकने के लिए अभावग्रस्थ बन्धुओं को गले लगाना होगा। राष्ट्र द्रोही एवं विघटनकारी प्रवृत्तियों का मुंह तोड़ उत्तर देना होगा।

डॉ. प्रशान्त कुमार

मंद बुद्धि नष्ट करने के लिए वैदिक वर्णव्यवस्था को जन्मानुसार न मानकर गुण-कर्म के अनुसार मानना होगा।...आदि (विस्तार के लिए मेरी 'राज्य व्यवस्था व समाज व्यवस्था' ग्रन्थ देखें) धनी, शिक्षित व प्रतिष्ठित हरिजनों के आरक्षण व विशेषाधिकारों को समाप्त करना होगा—समान शिक्षण-प्रणाली भी इन समस्याओं के हल में सहायक रहेगी (देखें मेरी शिक्षा व भाषा नीति पुस्तक)।

प्रहलाद दत्त वैद्य

जाति-भेद व वर्ग-भेद सामप्त हों और गुण, कर्म, स्वभाव अनुसार विवाह सम्बन्ध आदि हों।

भगवान चैतन्य

आपने जिन समस्याओं का निर्देश किया है उनका निराकरण आज की सरकार के पास है ही नहीं। सरकार का ढर्रा कुछ ऐसे ढंग से चल पड़ा है कि प्रत्येक समस्या जिसका समाधान करने के लिए जो भी प्रयास किए जाते हैं वे प्रयास उस समस्या को और भी अधिक बढ़ावा देने वाले सिद्ध हो रहे हैं। दूसरे शब्दों में कहूं तो लगता यह है कि मानों सरकार स्वयं इन समस्याओं को बढ़ा रही है। जातीयता के आधार पर सहयोग देने से तथा जन्म को आधार मानने से वर्ण व्यवस्था और भी अधिक विकट बनती जा रही है। उसी प्रकार अल्प संख्यकों के नाम पर ऐसे लोगों को सुरक्षा मिल रही है जो भारत को पराधीन व धर्म-भ्रष्ट करने का स्वप्न देख रहे हैं। ऐसी ही बाकी

समस्याओं की भी स्थिति है। आर्य-समाज जो कार्य कर रहा है इन समस्याओं का समाधान उसी में है, मगर इस कार्य को और अधिक गति देने की आवश्यकता है। आर्य-समाज में सभी समस्याओं का सही हल मौजूद है। सरकार के पास अपने विचार रखकर उसे भी प्रेरित करें तथा उसका सहयोग लेने की आवश्यकता है।

मदन गोपाल खोसला

आर्य-समाज भी देश को दिशा दे सकता है। कम से कम जो बात जनता के हाथ में है वह लोगों को अवश्य करनी चाहिए। जो राष्ट्र से द्रोह करता है उसके रिश्तेदार और मिलने वाले ३ वर्ष के लिए मिलना जुलना छोड़ दें। यदि किसी लड़की को मार दिया जाता है तो उसे परिवार में कोई लड़की न दे। अस्पृश्यता दूर करने के लिए एक सुझाव है, प्रत्येक घर में हरिजन कार्य करते हैं उनके किसी एक छोटे बच्चे को हिन्दी पढ़ाई जाए। इससे हिन्दी का प्रचार भी होगा और छुआ-छूत की दीवार गिर जाएगी। आर्य-समाजों में इन लोगों के साथ प्रीति-भोज किए जाने चाहिए।

डॉ. मण्डन मिश्र

आर्य-समाज का वर्तमान रूप यदि पुरानी सेवा-भावना पर आकर विकसित हो तो समाज का प्रत्येक सदस्य उल्लिखित प्रश्नों के समाधान में सहायक हो सकता है।

यशपाल वैद

केवल बाहरी सहायता से कोई कुरीति दूर नहीं हो सकती, अस्पृश्यता पाखण्ड एवं भ्रष्टाचार के लिए आदर्श जनता के सामने आने चाहिये। जाति-रंग-भेद के आधार पर अन्तर नहीं होना चाहिये। व्यक्ति का चरित्र ही स्वयं बोले। अस्पृश्यता जैसी समस्या के लिए गुरुनानक देव, स्वामी दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, गांधी जी ने क्रियात्मक कार्य किया। कर्म, गुण और स्वभाव के सामंजस्य की आवश्यकता है।

डॉ. रघुबीर वेदालंकार

वर्ण-व्यवस्था को तो पूर्णतः आर्य-समाज भी नहीं अपना सका। समाज में व्याप्त पाखण्ड, अस्पृश्यता, भ्रष्टाचार आदि प्रचार तथा राजकीय एवं सामाजिक दण्ड से दूर होंगे। बाहर से आने वाले पैसे के बल पर धर्मान्तिरण करने पर कानूनी रोक अनिवार्य है। इसके उल्लंघन पर सरकार दण्ड प्रदान करे। साथ ही आर्य-समाज को अन्य हिन्दू संगठनों के साथ मिलकर प्रचार द्वारा शुद्धि कार्य की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। स्वामी श्रद्धानन्द तथा पं० लेखराम के पश्चात् शिथिल पड़े शुद्धि कार्य में मीनाक्षीपुरम् की घटना के बाद चेतना आयी है। यह कार्य चलता रहे।

राजकुमार कोहली

आर्य-समाज अस्पृश्यता का कलंक हरिजनों को गले लगाकर तथा उनसे विवाह आदि के सम्बन्ध स्थापित कर मिटा सकता है। भारत में फैली दूषित वर्ण-व्यव-

स्था, पाखण्ड, राष्ट्र-द्रोह व विघटनकारी प्रवृत्तियों को मिटाने के लिये भी आर्य-समाज को आलस्य त्यागना होगा तथा अतीत के स्वर्णमय इतिहास की पुन: स्थापना करनी होगी।

कु. विद्यावती आनंद

आर्य-समाजी इन प्रवृत्तियों के विरूद्ध जनमत तैयार करें। भ्रष्टाचारियों, राजद्रोहियों, पाखण्डियों, विघटनकारियों की पोल जनता के सामने खोलें और अपने प्राणों की बाजी लगाकर भी उनका विरोध करें। भारत सरकार को मजबूर करें कि भ्रष्टाचारियों, राजद्रोहियों, विघटनकारियों और अस्पृश्यता में विश्वास रखने वालों को कठोर दण्ड दें। शूद्र भाइयों की बस्तियों में जाकर काम करें। उनको विश्वास दिलाएं कि वे हमारे भाई हैं। हमें उनकी भलाई में रूचि है। दुख और कष्ट के समय वे हम पर निर्भर कर सकते हैं। जब तक हम उनमें विश्वास पैदा नहीं करते, उन्हें अपनी तरह ही मानव नहीं समझते तब तक मुसलमान और ईसाई उनको अपनी ओर खींचते रहेंगे और धर्मान्तिरण होता रहेगा।

डॉ. वेद प्रताप वैदिक

इस प्रश्न के अन्तंगत आपने जिन समस्याओं को गिनाया है उनके समाधान के लिए सबसे पहले आर्य-समाजियों को अपने निजी जीवन में ही पहले परिवर्तन करना होगा। कितने आर्य-समाजियों ने जात तोड़ी है, या अछूतों को अपना दोस्त और मेहमान बनाया है ?

वैद्यनाथ शास्त्री

आर्य-समाज को इन समस्याओं का समाधान अपने सिद्धान्तों पर करना चाहिए। राजनैतिक सौदे बाजी और केवल संविधान से न समस्या का समाधान हो सकता है और न कोई बात सुलझ सकती है। अस्पृश्यता सदा बनी रहेगी, जब तक उसे राजनीति से जोड़ा जायेगा। इसी प्रकार अन्य भी बातें हैं। धर्मान्तिरण को शुद्धि के मार्ग से ही रोका जा सकता है, अपने ढंग से अपने को आर्य के स्थान में हिन्दू बनाकर नहीं।

सत्यदेव विधालंकार

यह प्रश्न केवल आर्य-समाज का नहीं है, सारी हिन्दू जाति का है। कर्म-फल के सिद्धांत को मान लेने पर अस्पृश्यता का उत्तर कठिन है। जिस जाति में आर्य-समाज ने ५०-६० साल तक काम किया था, उसे राजनैतिक स्वार्थी, महत्वाकांक्षाओं ने बहुत पीछे फेंक दिया है। "कालो ह्चयं निरवधि:" वही एक मात्र इलाज है। राजनैतिक प्रभुता के बिना कुछ अधिक हम नहीं कर पायेंगे।

सुदर्शन देव

अस्पृश्यता-पाखण्ड आदि के निराकरण के लिए लोकमत को झकझोरना, बलिदानी जत्थे तैयार कर पुलिस तथा सरकार को शिकायत, प्रतिवेदन देकर रोक लगाना,

सजा दिलवाना, पुलिस तथा कर्मचारी-अधिकारी वर्ग को अंकुश में रखने जैसे कार्य करने की क्षमता प्राप्त करनी चाहिये। विघटनकारी शक्तियों के विरुद्ध सरकार को मजबूत बनाना, आर्यवीर दल के सैनिकों को सक्रिय अर्द्ध सैनिक बनाकर पहरेदारी की व्यवस्था करना, बलात् धर्मान्तिरण के लिये देश भर के हिन्दुओं को विशेषत: तथा सामान्यत: मुसलमानों, ईसाइयों में भी जागरूकता लाना आवश्यक है। सरकार की अरब देशों या विश्व जनमत से डरने की प्रवृत्ति को भी समाप्त करना होगा।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्त

आर्य-समाज अपने सिद्धांतों का ठोस प्रचार करे और अपने जीवन में उसे उतारे। आर्यों ने अस्पृश्यों को अपने में पूर्णत: आत्मसात् नहीं किया है, उनका अलग व पूर्ववत् रूप बना रहा है। आर्य-जन अपने सिद्धान्तों के अनुसार क्रियात्मक जीवन बिताते हुए ही दूसरों को प्रभावित कर सकते हैं। वैदिक साहित्य में वर्णित देवासुर संग्राम से और मुद्राराक्षस की, चाणक्य की नीतियों से भी विरोधी शक्तियों पर वश पाने के उपाय खोजे जा सकते हैं।

हरिकिशन मलिक

वेदेतर धर्म-ग्रन्थों में जो सत्य है वह वेदों का है और जो झूठ है वह उनका अपना है। वेदों से लोग इसलिए विमुख नहीं होते कि वेद की शिक्षा ठीक नहीं लगती। वास्तविकता यह है कि धर्म की चर्चा उन्हीं को सुहाती है जो अर्थ और काम में फंसे हुए नहीं होते। आज अधिकांश व्यक्ति कुकर्मों से कमाई करते हैं। वह वेद की बात सुनें तो उनका पाप का धन्धा छूट जाए। उन्हें ऐसे पाखण्डियों की बात अच्छी लगती है जो उनकी कमाई का कुछ भाग लेकर उन्हें स्वर्ग जाने का आश्वासन दे सकें। वेद वाणी को सुनने के इच्छुक होते हैं धर्मात्मा तपस्वीलोग। पाप की कमाई खाने वाले सिनेमा देखेंगे, कैबरे देखेंगे परन्तु वेद वाणी को नहीं सुनेंगे। उन घरों में मुफ्त वेद की पुस्तकें दे जाओ तो कभी वह उन्हें नहीं पढ़ेंगे। वेद की वाणी घर-घर पहुंचानी है तो आर्य-समाज राज्य-सत्ता संभाले और सुराज्य की स्थापना करे। फिर लोग स्वयं वेदवाणी सुनने की मांग करेंगे। □

१६
आर्य-समाज और हिन्दी

प्रश्न

सम्पूर्ण भारत में हिन्दी का प्रयोग हो और इसे राष्ट्रभाषा का दर्जा प्राप्त हो इसके लिए आर्य-समाज ने क्या किया है ? आज हम विश्व हिन्दी सम्मेलन मनाने जा रहे हैं। विदेशों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में आर्य-समाज की क्या भूमिका रही है ? विश्व में हिन्दी को उचित स्थान दिलाने के लिए आर्य-समाज को क्या करना चाहिए ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

महर्षि ने मौलिक ग्रंथ लिखा संस्कृत के महापण्डित होते हुए भी वह हिन्दी में लिखा। आर्य-समाज को भी आज हिन्दी के प्रचार-प्रसार में लग जाना चाहिए।

अमरनाथ कांत

जो कार्य राष्ट्रपिता महर्षि श्री दयानन्द सरस्वती ने अपनाया था वह अपना सारा कार्य आर्यभाषा में ही करते थे, वैसा ही अब समस्त आर्य-समाज तथा आर्य सभासद अपना सारा कार्य जिससे भी पत्रोत्तर आदि सामाजिक व व्यक्तिगत भी क्यों न हो, वह होना चाहिए, देवनागरी लिपि-हिन्दी-भाषा में ही होनी ही चाहिये, जिससे राष्ट्र भाषा ही हिन्दी और संस्कृत हो जावें।

प्रो. कैलाशनाथ सिंह

प्राय: निर्णय राजनीति के नेता करते हैं, जो भारतीय संस्कृति में अधिकांश शून्य है। आर्य-समाज की राजनीति प्रभावी होना चाहिए। आर्य जनों को स्वतंत्र रूप से राजनीति में आगे बढ़ना चाहिए। वर्तमान शासकीय सत्ताधारी हिन्दी के शत्रु हैं।

इन्हें बदलने के लिए आर्य-समाज को राजनीति में पैर बढ़ाना आवश्यक है। स्वतंत्रता आन्दोलन में आर्य-समाज और हिन्दी एक दूसरे के पर्यायवाची शब्द बन गये थे। आर्य भाषा (हिन्दी) के श्री संवर्धन हेतु महर्षि दयानन्द ने अमरक्रान्तिकारी ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश को जन-जन की भाषा हिन्दी में लिखा। विश्व में प्रचारार्थ, विश्व के राष्ट्र-संघ में हिन्दी को प्रमुख स्थान दिलाने के लिए प्रयास होना चाहिए।

प्रो॰ कृष्ण लाल

आर्यसमाज ने तो बहुत कुछ किया है, परन्तु पढ़े लिखे (अंग्रेजी वाले) आर्य-समाजी आज इसका आचरण नहीं करते। निजी और अधिकाधिक कार्यालय का कार्य भी हिन्दी में करने का व्रत सबको लेना चाहिये, जैसे महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन चलाया था, वैसे ही प्रत्येक आर्य-समाजी अंग्रेजी में निमन्त्रण मिलने पर सम्मिलित न होने का संकल्प करें। कम से कम स्वयं तो हिन्दी का प्रयोग करें।

जगतराम आर्य

हमारा पत्र व्यवहार हिन्दी में हो, व्यापार के सभी काम हिन्दी में हों, दुकानों के साइन बोर्ड में हों, निमन्त्रण पत्र हिन्दी में हों। जहां से अंग्रेजी के निमन्त्रण-पत्र आते हैं, चाहे मेरा नजदीकी रिश्तेदार ही हो मैं उसमें शामिल नहीं होता। विदेशों में आर्य-समाज के कारण हिन्दी का प्रचार हुआ है, उदाहरणार्थ फिज़ी, ईस्ट अफ्रीका और मारिशस आदि।

डॉ. दुखनराम

हिन्दी रक्षा के लिए आर्य-समाज ने १९५७ में हिन्दी रक्षा आन्दोलन किया जिसका लक्ष्य यह था कि राष्ट्रभाषा का दर्जा उसे शीघ्र प्राप्त हो। हिन्दी का प्रचार-प्रसार विदेशों में आर्य-समाज के द्वारा ही हुआ। इसीलिए आज हम विश्वहिन्दी सम्मेलन मनाने के योग्य हुए हैं।

देवेन्द्र आर्य

इस दिशा में आर्य-समाज का समस्त साहित्य अब तक हिन्दी भाषा में ही प्रकाशित हुआ है और भविष्य में भी ऐसा ही होना चाहिए।

प्रताप सहगल

हिन्दी बढ़ रही है, बढ़ेगी। आर्य-समाज भी इस दिशा में हमेशा सक्रिय रहा है, रहेगा। वैज्ञानिकों को प्रेरित करें कि वे भी हिन्दी में सोचना ही शुरू करें।

प्रभुशूर आर्य

भारत में हिन्दी के उत्थान व प्रचार-प्रसार (आर्य-भाषा के रूप) में, जितना महर्षि दयानन्द व आर्य-समाज ने योगदान दिया है वह अद्वितीय है। राष्ट्र भाषा के रूप

में प्रतिष्ठित करवाने का श्रेय भी आर्य-समाज को ही जाता है। विदेशों में हिन्दी के प्रसार-प्रचार में आर्य-समाज की प्रमुख भूमिका रही है। विश्व में हिन्दी को उचित स्थान दिलाने के लिये आर्य-समाज बोलचाल, पत्र-व्यवहार, नाम-पट्ट,-शिक्षा-दीक्षा में हिन्दी का प्रयोग करने-करवाने में सहायक सिद्ध हो सकता है। आवश्यकता है आत्म-गौरव जगाने की। सबसे प्रथम हिन्दी को स्वदेश में उचित स्थान मिलना चाहिये। अंग्रेजी के प्रति हमारा मोह आज भी भंग नहीं हुआ है, जबकि अन्य सभी राष्ट्रों ने स्व-भाषा को अपनाया है।

प्रेमनाथ

अब आर्य-समाज की संस्थाएं ही पब्लिक स्कूलों के रूप में इंगलिश माध्यम द्वारा बच्चों को आरम्भ से शिक्षा दे रही है तब हिन्दी भाषा का प्रचार हो गया। हां, इसमें संदेह नहीं कि वेद प्रचार व व्यापार आदि के लिये विदेशों की भाषा भी अवश्य जाननी चाहिये, परन्तु हिन्दी को प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

प्रह्लाददत्त वैद

हिन्दी के प्रचार,-प्रसार के लिए जितना कार्य आर्य-समाज ने और ऋषि दयानन्द जी ने किया वह सब संस्थाओं से बढ़कर है। अन्य देशों के साहित्य का अनुवाद हिन्दी में और हिन्दी साहित्य का अनुवाद अन्य भाषाओं में हो। देश-विदेशों में प्रचारक इसी दृष्टि से भेजे जाएं। केवल व्याख्यानों व सम्मेलनों से बात नहीं बनेगी। ये कर्तव्य कर्म है। इसको समझना चाहिए।

भगवान चैतन्य

हिन्दी को राष्ट्र भाषा का दर्जा दिलवाने के लिए आर्य-समाज सदा ही संघर्ष करता रहा है तथा आज भी कर रहा है। देश-विदेश में अपने प्रचारकों के माध्यम से आर्य-समाज इस दिशा में और भी अधिक रचनात्मक भूमिका निभा सकता है। इसके लिए अलग से एक 'हिन्दी प्रचारक समिति' का गठन भी किया जा सकता है जो आर्य समाज के मूल सिद्धान्तों एवं उद्देश्यों के आधार पर अपने उपनियम निर्धारित करके काम करे। 'प्रकाशन संस्थान' इस दिशा में ठोस भूमिका निभा सकता है।

भवानीलाल भारतीय

हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार के लिए आर्य-समाज ने जो किया वह सर्वविदित है। विश्व हिन्दी सम्मेलन का इसी मास में आयोजित अधिवेशन सरकार के चापलूस लोग कर रहे हैं। उसमें हिन्दी सेवियों, साहित्यकारों का योगदान तो नगण्य ही होगा। आर्य-समाज को हिन्दी के प्रचार-प्रसार में पूर्ववत् योग देते रहना चाहिए।

मदनगोपाल खोसला

हम लोग घर में हिन्दी बोलें। पत्र-व्यवहार हिन्दी में करें और दफ्तरों में भी हिन्दी भाषा का प्रयोग करें।

डॉ. मण्डन मिश्र

आर्य-समाज ने हिन्दी का बहुत काम किया है इसके लिए सारा संसार महर्षि दयानन्द जी का ऋणी है। विश्व में हिन्दी के स्थान की बात तो दूर है, हमारे राष्ट्र में भी उसको संविधान में निर्धारित सम्मान भी मिल सके तो भी बड़ी बात है।

मुल्कराज भल्ला

जहां तक हो सके हिन्दी का प्रयोग करें। हिन्दी साहित्य सम्मेलन की गति-विधियों में भाग लें। घर में हिन्दी में बात करें।

यशपाल वैद

स्वामी दयानन्द ने तो अपने ग्रन्थों की रचना हिन्दी में ही की है। आर्य-समाज के विभिन्न नेता समय-समय पर विश्व व्यापी सम्मेलनों में हिन्दी में ही भाषण देते रहे हैं और आज भी आर्य-समाज विदेशों में अपने विचारों में हिन्दी को प्रमुखता देता है। राष्ट्र की भावना के लिए वेदों का प्रचार-प्रसार ही एकमात्र साधन है है क्योंकि वेदों पर सब की आस्था है।

डॉ. रघुबीर वेदालंकार

हिन्दी के लिए आर्य-समाज के कार्यों एवं बलिदान को कोई नहीं भूल सकता। हिन्दी रक्षा सत्याग्रह आदि इसके उदाहरण हैं।प्रचार एवं लेखन द्वारा भी आर्य-समाज को हिन्दी के प्रति निष्ठा, प्रेम, उत्पन्न करना चाहिए। साथ ही सरकार पर राष्ट्रीय स्तर पर दबाव भी दिया जाए। ये दोनों ही हिन्दी के प्रयोग में भारत में ही बाधक हैं। विदेश की बात तो पीछे की है। आर्य-समाजी स्वयं भी अंग्रेज़ी का अधिक प्रयोग करने लगे हैं। पैसे के लिए अंग्रेजी माध्यम से चलने वाले आर्य-समाज के स्कूल भी इसी दिशा में एक कदम है, जो भयानक है।

राजकुमार कोहली

आर्य-समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने अपने ग्रंथ हिन्दी में प्रकाशित कर तथा उपदेश भी इसी भाषा में देकर यह सिद्ध कर दिया कि देश की एकता के लिए सम्पर्क भाषा की कितनी अधिक आवश्यकता है और इस पद के लिये मात्र हिन्दी ही उपयुक्त है। स्वामी जी की मातृभाषा गुजराती थी और शिक्षा-दीक्षा संस्कृत में हुइ थी, परन्तु उन्होंने हिन्दी को ही जन-सम्पर्क की भाषा के योग्य समझा था। देश-विदेश में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में आर्य-समाज की विशेष भूमिका रही है, लेकिन इसे विश्व भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करवाने के लिये सर्वप्रथम देश की एकमात्र सम्पर्क भाषा बनाने के लिए जी तोड़ कार्य करना होगा। लोगों को व्यवहार में हिन्दी लाने के लिये प्रेरित करना होगा।

कु. विद्यावती आनंद

सम्पूर्ण भारत में हिन्दी का प्रयोग हो और इसे राष्ट्र भाषा का दर्जा प्राप्त हो, इस दिशा में आर्य-समाज ने बहुत काम किया है, परन्तु उतना नहीं जितना करना चाहिये था। विदेशों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में आर्य-समाज की भूमिका विशेष महत्त्वपूर्ण नहीं रही। आर्य-समाजियों को अपना तथा अपनी संस्थाओं का सब कार्य हिन्दी में करना चाहिये। निमन्त्रण-पत्र हिन्दी में छपवाएं। बोलचाल में हिन्दी का प्रयोग करें। हिन्दी का प्रयोग करते हुए हीनता नहीं गर्व अनुभव करें। हिन्दी भाषी प्रांतों में हिन्दी पढ़ाने के लिये पाठशालाएं स्थापित करें। हिन्दी का अधिक से अधिक प्रयोग करने के लिये सरकार पर भी बल डालें।

विद्यानंद सरस्वती

विदेशों में हिन्दी के प्रचार की बात करने से पहले भारत में आर्य-समाजों, आर्य-समाजियों तथा आर्य-समाज की संस्थाओं में हिन्दी के अपनाये जाने की बात करनी चाहिये। एतदर्थ कठोर शासन एवं अनुशासन अपेक्षित है।

वैद्यनाथ शास्त्री

हिन्दी का प्रचार और प्रयोग भारत में बिना राजनैतिक रूप दिये किया जाये। शिक्षा का माध्यम प्रान्तीय भाषाओं और हिन्दी को किया जाये। शिक्षा का माध्यम हिन्दी हो, आदि। विदेशों में प्रचार करना ठीक है, परन्तु वहां पर इसे अनिवार्य नहीं किया जा सकता, जहां तक विदेश में मूल वासियों का सम्बन्ध है।

सत्यदेव विद्यालंकार

हिन्दी का इतिहास और हिन्दी का प्रचार, आर्य-समाज के मुख्य कार्य नहीं हैं। अन्य अनेक संस्थाएं यह कार्य कर रही है—अच्छा कर रही हैं। आर्य-समाज को भाषा के प्रश्न के साथ जोड़ना उचित प्रतीत नहीं होता।

डॉ. सहदेव वर्मा

आर्य-समाज तो सदा से ही एक राष्ट्र, एक भाषा तथा एक ही भावना का समर्थनहै। देश हो चाहे विदेश, जहां-जहां आर्य-समाज की स्थापना हुई, वहां-वहां हिन्दी की प्रतिष्ठा हुई। तन, मन, वचन से हिन्दी प्रयोग, ज्ञानवर्धक रचनाएं, पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन, पत्र-व्यवहार, शिक्षा का माध्यम, दैनिक कार्य-कलाप हिन्दी में ही हों। अंग्रेजी का मुखौटा उतार कर राष्ट्रीयता को प्रश्रय दिया जाये तो हिन्दी स्वतः बढ़ती चली जायेगी। सरकार की दुरंगी नीति हिन्दी प्रचार में बहुत बाधक है।

सुदर्शन देव

संपूर्ण भारत में हिन्दी का प्रयोग एवं इसे राष्ट्र-भाषा का दर्जा प्राप्त करने के

लिए जितना प्रचार एवं प्रयत्न आर्य-समाज को करना चाहिए, उतना नहीं किया गया है। विश्व हिन्दी सम्मेलन मनाना केवल मात्रा औपचारिकता ही है। जब तक शासन तंत्र से आर्य-समाज का अटूट संबंध नहीं होगा, तब तक हिन्दी को यथा स्थान प्राप्त करना असंभव-सा लगता है।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्त

स्वामी जी ने अपने जीवन काल में हिन्दी को ही मान्यता दी, परन्तु आचरण में अनेक शक्तिशाली आर्य हिन्दी के प्रयोग में और उसका पक्ष लेने में शिथिल हैं। अपने-अपने राजनीतिक दल को हिन्दी के पक्ष में निर्णय के लिए बाधित करें। विदेशों में जब जाएं तो वहां प्रमुख समारोहों में हिन्दी में भाषण दें, परन्तु आर्य-समाज का प्रचार स्थानीय भाषा के माध्यम से ही हो सकेगा।

हरिकिशन मलिक

सत्य यह है कि आज हिन्दी को थोड़ा-बहुत जो कुछ सम्मान मिला हुआ है वह आर्य-समाज के कारण से है। आर्य-समाज के कारण ही इसे संविधान में राष्ट्रभाषा का पद प्राप्त हुआ था, परन्तु स्वार्थी राजनैतिक नेताओं ने क्रियात्मक रूप से वह पद प्राप्त होने नहीं दिया। विश्व में हिन्दी को स्थान तभी मिल सकता है, जबकि हमारे राजनैतिक नेता तथा उच्च पदाधिकारी इसके लिए प्रयत्न करें। परन्तु वह स्वयं अंग्रेजी के दीवाने हो रहे हैं। अंग्रेजी को देश निकाला दिए बिना हिन्दी की यही दुर्दशा रहेगी। अंग्रेजी को देश निकाला तब मिलेगा, जबकि भारत में स्वराज्य का सच्चा रूप स्थापित होगा एके साधे सब सधे के अनुसार आर्य-समाज को अपनी शक्ति सुराज्य की स्थापना के लिए लगानी चाहिए।

□

१७

आर्य-समाज और राष्ट्रीयता

प्रश्न

आर्य-समाज ने भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। राष्ट्र के विकास के लिए आर्य नेता सदैव तत्पर रहे हैं। आज राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता की भावना के विकास के लिए आर्य-समाज क्या करे ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में आर्य-सगाज की भूमिका किसी से छिपी नहीं है। प्रारम्भिक समस्त राष्ट्रकर्मी आर्य-समाजी ही थे तथा आर्य-समाज से प्रेरित होकर ही कांग्रेस में प्रविष्ट हुए थे। आज राजनीति हावी हो गई है और हमें इस सम्वन्ध में विचार करना चाहिए।

अमरनाथ कांत

आर्य-समाजों के शिक्षालयों व विद्यालयों में अपने धार्मिक विद्वानों के प्रवचन होने चाहिये तथा देश भक्त, वीर योद्धाओं, वीतरागी परशुराम जी, मर्यादा पुरुषोत्तम राम चन्द्र जी व योगी राज कृष्णचन्द जी तथा व्याकरण—का सूर्य दण्डीस्वामी गुरुवर विरजानन्दजी, महर्षि स्वामी दयानन्द जीसरस्वतीआदि और बीर जी, राणाप्रताप सिंह, राणा छत्रसाल, बन्दावीर वैरागी आदि महानुभावों के चित्र व चरित्रों को पढ़ाया जावे तो सन्तानें वैसी वनें, सब के मन में अपने देश व धर्म के प्रति आदर-आस्था श्रद्धा-भक्ति अवश्यमेव पैदा हो जायेगी और वह वैसा ही बनने की चेष्टा करेंगे।

प्रो० कैलाशनाथ सिंह

वैदिक साहित्य पर नवीन ग्रन्थों का प्रकाशन राष्ट्रीय भावना की व्यापकता एवं प्रसार पर बल दिया जाय। राष्ट्रभक्ति के पाठ पढ़ाकर युवापीढ़ी में राष्ट्रीयता के वीज वोये जाएं।

प्रो० कृष्णलाल

निष्ठावान व्यक्ति तैयार करें। आर्य-समाज के अधिकारी विद्वान, चरित्रवान चाटुकारिता रहित, वेद समझने वाले एवं निष्ठावान हों।

जगतराम आर्य

भारत की स्वतन्त्रता का श्रेय महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायी आर्य-समाजी अर्थात् आर्य-समाज को है, परन्तु आर्य-समाज के नेताओं ने न तो भारत के नेताओं और शासकों को बताया और न ही जनता को। क्योंकि देशभक्त कोई है तो आर्य-समाजी ही है। आर्य-समाज को भारत के नेताओं और शासकों से सम्पर्क स्थापित करना चाहिए।

डॉ० दुखनराम

आज राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता की भावना के लिए आर्य-समाज को आर्य-वीरदल की स्थापना सम्पूर्ण भारत में करनी चाहिये।

देवेन्द्र आर्य

राष्ट्रीय भावना को जाग्रत करने के लिए आर्य-समाज को ऐसा सुलभ साहित्य प्रकाशित कर सर्वत्र देश में वितरित करना चाहिए और राष्ट्र के कर्णधारों को भी भेजा जाना चाहिए तथा राष्ट्र विरोधी जनों के विरुद्ध जनजागरण कराया जाये और आवश्यकता पड़ने पर सत्याग्रह आदि के लिए तैयार रहा जाये।

प्रताप सहगल

यह सत्य है कि आजादी की लड़ाई में आर्य-समाज की भूमिका महत्वपूर्ण है, लेकिन अफसोस है कि वो उत्साह और तत्परता आज आर्य-नेताओं या आर्य-समाजियों में गायब है। वे भी निहित स्वार्थों और कुर्सी की जोड़-तोड़ में लगे हुए हैं। ऐसी कौन सी खास बात है कि पिछले पच्चीस सालों से आर्य-समाज के प्रधान और सर्वेसर्वा एक ही व्यक्ति बने हुए हैं। आप नौजवान खून को अवसर ही नहीं देंगे तो आगे आने का तो काम कहां से होगा। इसलिये आर्य-समाजियों को चाहिए कि दूसरों को उपदेश देना बन्द करके उन्हें पहले अपने ही जीवन में उतारें।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

आज राष्ट्र और राष्ट्रीयता की भावना के विकास के लिये 'आर्य-समाज को एक बार पुनः स्वराज्य व स्वदेशी का संदेश घर-घर पहुंचाना होगा। 'सत्यार्थ प्रकाश हमारा यहां भी मार्गदर्शक बन सकता है।

डॉ० प्रशान्त कुमार

यदि सभी आर्य-समाजी आश्रम व्यवस्था के अनुसार ६० वर्षों की आयु के बाद शहरों से ग्रामों में अपने-अपने आश्रम बना कर बैठ जाएं और देश की अशिक्षा, निर्धनता, बीमारी को नष्ट करने में जुट जाएं तो वे देश सेवा कर सकेंगे। ६० के लगभग गुरुकुल खुले हुए हैं, पर उनमें काम ठीक नहीं हो रहा है, क्योंकि वहां भी गृहस्थी अध्यापक हैं। सम्पूर्ण देश में संस्कृत (वेद) की शिक्षा के आधार से राष्ट्रीयता (राष्ट्रीय एकता) को बल मिल सकता है।

प्रह्लाद दत्त वैद्य

इसका उत्तर पहले आ चुका है। किन्तु एक प्रबल राजनैतिक संगठन तैयार हो और इसके लिये देश में इसी तरह का वातावरण तैयार किया जाय। ऐसा संगठन आर्य-समाज के सिद्धान्तों के अनुरूप हो। खिचड़ी संस्कृति वाला न हो। हो सकता है इसके लिये अधिक परिश्रम व समय लगाना पड़े, परन्तु काम में जुट जाना चाहिये।

भगवान चैतन्य

राष्ट्र-रक्षा के लिए आर्य-समाज जिस ढंग से पहले सक्रिय रहा है उसी प्रकार आज भी राष्ट्र रक्षा के सम्बन्ध में उसके पास सही दृष्टिकोण है। हिन्दुओं की जो मूर्खताएं परतन्त्रता का कारण बनी है या बनती हैं उनके निराकरण में आर्य-समाज लगा ही हुआ है। उसी प्रकार धर्मान्तिरण रूपी विघटनकारी समस्याओं से भी हम लोहा ले रहे हैं। इस दिशा में आर्य-समाज के दृष्टिकोण एकदम सही है, मगर उन्हें और अधिक सक्रियता के साथ कार्य रूप देने की आवश्यकता है।

मदन गोपाल खोसला

आर्य-माता-पिता को चाहिए कि अपने बच्चों को साप्ताहिक सत्संग में अवश्य लेकर जाए। इनमें राष्ट्रीय एकता एवं विकास विषय के लिए १५-२० मिनट का समय अवश्य दिया जाए।

डॉ. मण्डन मिश्र

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आर्य-समाज की भूमिका का उल्लेखनीय स्थान है। वह त्याग और तप पर आधारित समाज था। आज भी यदि हम उसी प्रकार के समाज का निर्माण करें तो राष्ट्र के लिए कल्याणकारी होगा। इसके लिए आर्य-समाज का सदस्य बनाते समय सदस्य को यह बता देना चाहिए कि समाज के सदस्य के लिए राष्ट्र के लिए त्याग की भावना का संकल्प अनिवार्य है।

यशपाल वेद

माता भूमि पुत्रोऽहं—पृथिव्या? (अथर्ववेद) का सूत्र किसी भी राष्ट्र के प्राणियों के लिए प्रेरणादायक है।

राजकुमार कोहली

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आर्य-समाज की भूमिका रही है, परन्तु स्वाधीनता के पश्चात आर्य-समाज अपना कार्य क्षेत्र सामाजिक क्षेत्र तक ही सीमित करके रह गया है जिसके कारण यह भयावह स्थिति उत्पन्न हो चुकी है। मेरे विचार में राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेकर आर्य-समाज, राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता की भावना को विकसित कर सकता है। राष्ट्र और राष्ट्रीयता की भावना के अभाव में स्वतंत्रता भी महत्व-हीन होकर रह जाती है।

प्रो. रामगोपाल

केवल राष्ट्र और राष्ट्रीयता की भावना के विकास के लिये ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण जगत के कल्याण के लिए आर्य-समाज को अपना कार्य स्वामी दयानन्द के बताये सिद्धांतों के अनुसार जारी रखना चाहिए। आज के युग में संकीर्ण राष्ट्रीयता भी मानव जाति में पारस्परिक विद्वेष उत्पन्न कर रही है। अतएव आर्य-समाज को 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के अनुसार सारी मानव जाति के कल्याण का उद्देश्य अपने सामने रखना चाहिए।

कुमारी विद्यावती आनंद

अपने बच्चों के मन तथा अपनी शिक्षा-संस्थाओं में काम करने वाले अध्यापकों एवं विद्यार्थियों के मन में राष्ट्रीयता की भावना भरें। राष्ट्र के विकास कार्यों में रूचि लें। जन-मत तैयार करें। सरकार को मजबूर करें कि देश की समस्त शिक्षा संस्थाओं में राष्ट्रीयता का, भारतीयता का, अनुशासन का पाठ पढ़ाया जाये। किसी शिक्षा संस्था को अल्पसंख्यक के नाम पर छूट न दी जाये।

विद्यानन्द सरस्वती

'सत्यार्थ प्रकाश' के आठवें समुल्लास में महर्षि ने लिखा है—"परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा, पृथक-पृथक शिक्षा, अलग-अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है।" इन भेदों तथा आर्यों के विदेशी होने की मान्यता का निराकरण सहायक हो सकता है।

डॉ. वेद प्रताप वैदिक

यदि आज महर्षि दयानन्द जीवित होते तो वे शायद भारत की सांस्कृतिक क्रान्ति के अग्रदूत होते। रोम का पोप और मुसलमानों का महामुफ्ती उनसे सलाह लेने आते। हमारे राजनीतिक नेतागण उनके सामने दुम दबाये बैठे होते। सार्वदेशिक सभा का प्रधान मन्त्री भारत के प्रधान मन्त्री से कई गुना अधिक शक्तिशाली होता। उसका सार्वदेशिक नाम होता और उसका बोला हुआ शब्द दुनिया के एक बड़े हिस्से में कानून की तरह सम्मानित होता।

यह भी हो सकता था कि यदि आज दयानन्द होते तो कोई जगन्नाथ उन्हें जहर न देता लेकिन सरकार उन्हें पकड़ कर चांदनी चौक में फांसी लगवा देती और देश के सारे आर्य-समाजियों को या तो जेल में रहना पड़ता या देश निकाला दे दिया जाता।

वैद्यनाथ शास्त्री

सही माने में राष्ट्र क्या है—इस बात को समझाएं और इसका प्रचार करें, मातृ-भूमि मातृ-भाषा और मातृ-संस्कृति की रक्षा सच्ची राष्ट्रीयता है। इसकी स्थापना आर्य-समाज करे।

सत्यदेव विद्यालंकार

इसका उत्तर देना श्रेयस्कर नहीं है।

डॉ० सहदेव वर्मा

यह सच है कि भारतीय स्वतंत्रता की पृष्ठभूमि में ही नहीं प्रत्यक्ष रूप से भी आर्य-समाज का योगदान गौरवपूर्ण रहा हैं—आज भी आर्य-समाज को अपना वही तेजस्वी-प्रचण्ड रूप प्रस्तुत करना चाहिए जिसके ताप से देशद्रोही तथा पाखण्डी तिल-मिला उठें। वैदिक राष्ट्रीयता का स्वरूप सच्चाई से उपस्थित करना चाहिए—भले ही सरकार का कोप भाजन बनना पड़े। आर्य-समाज राजभक्त न होकर राष्ट्र-भक्त ही रहा है।आज भी उसी की आवश्यकता है।

सुदर्शन देव

राष्ट्र एवं राष्ट्रीयता की भावना के विकास के लिए आर्य-समाज अपने सिद्धांतों पर सुदृढ़ रह कर अपने मन्तव्यों का प्रचार करते हुए आर्य-ध्वज के साथ राष्ट्र-ध्वज को भी फहरावें। शोभायात्राओं में साथ ले जावें। देश की संस्कृति के मलिन एवं धूमिल पक्षों को निरन्तर व्याख्यानों मे प्रकट कर पूर्वजों के अछूतों एवं शूद्रों के प्रति किये गये पाप का प्रायश्चित करें। हिन्दू-समाज के विभिन्न सम्प्रदायों को समाप्त करे या उनको संगठित कर उनके लिये एक समान आचार-विचार संहिता तैयार करें। मुसलमानों, ईसाइयों के, कम्युनिष्टों के विघटनकारी तत्वों की भर्त्सना तथा उनमें से राष्ट्र-भक्त सच्चे मानवतावादी लोगों के पक्ष को बल पहुंचावें। उर्दू, अंग्रेजी, गुरुमुखी आदि में साहित्य, पत्र आदि का व्यापक अभियान छेड़े। इसके लिए आर्य-समाज के आन्तरिक ढांचे का पुनर्गठन करना तथा विभागीकरण करना आवश्यक है। पौलेंड, फ्रांस, संयुक्त राज्य अमेरिका आदि में चर्च द्वारा निबाही जा रही भूमिका से भी बढ़ कर भूमिका निभाने की आर्य-समाज तैयारी करें।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्त

आर्य-समाज ने राष्ट्र और उसके विकास की कोई स्पष्ट रूप-रेखा न बनाई है, न प्रचारित की है। ऐसा स्वरूप निर्धारित कर प्रत्येक आर्य जिस भी राजनीतिक दल से सम्बन्ध रखे, वहां उस स्वरूप के अनुरूप कार्य करे और दूसरों को अपने पक्ष में लाए। जो ऐसा न कर सके, उसे दृढ़तर व्यक्ति के लिए स्थान रिक्त कर देना चाहिए, परन्तु यह असम्भव नहीं, तो असम्भव की सीमाओं के आसपास है आज ऐसे आर्य विरल है।

हरिकिशन मलिक

राष्ट्र तथा राष्ट्रीयता की भावना का विकास भी तभी सम्भव है, जबकि राज्य व्यवस्था तपस्वी, सदाचारी और योग्य व्यक्तियों के हाथ में हो। आर्य-समाज को ऐसी राज्य-व्यवस्था की स्थापना के लिए पूरी शक्ति लगानी चाहिए। वास्तव में तभी संकट दूर होंगे। □

१८

महर्षि दयानन्द और वर्तमान परिस्थितियां

प्रश्न

यदि आज महर्षि दलानन्द सरस्वती जीवित होते तो देश की वर्तमान परि-स्थितियों पर उनकी क्या प्रतिक्रिया होती ?

उत्तर

अज्ञयकुमार जैन

स्वामी जी आज निश्चय ही बहुत सुखी अनुभव नहीं करते।

अमरनाथ कांत

यदि आज महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती जीवित होते तो यह आर्यावर्त सारे देश में होता तथा सन् १८९० ई० में ही विदेशी हमारे देश को छोड़ कर चले जाते। और आर्यावर्त देश की वही सीमा होती जो कि महर्षि ने 'सत्यार्थ प्रकाश' में बताई है और प्रत्येक परिवार में संध्या-यज्ञ, शुद्ध चरित्रवान वीर, देश भक्त, धर्मवीर यज्ञमानों की भोग्य वसुन्धरा होती।

प्रो. कैलाशनाथ सिंह

द्विगुणित शक्ति के साथ आर्य-समाज के सिद्धांत एवं प्रचार पर बल देते तथा छद्मवेशी, भूखे, अयोग्य पदलोभी, आर्य-समाज के नेताओं को संस्था से बाहर निकाल देते।

प्रो. कृष्णलाल

वे तो उस ससय भी रोते थे, आज भी रोते, परन्तु शान्त होकर बैठे न रहते।

जगतराम आर्य

यदि महर्षि दयानन्द आज जीवित होते हो ऐसी विकट परिस्थितियां विल्कुल न होंती। यदि दस वर्ष भी और जीवित रहते तो आज हमें यह दुर्दिन देखने न पड़ते।

डॉ. दुखन राम

यदि महर्षि आज जीवित होते तो देश की परिस्थितियां इतनी न बिगड़ती। आज के डेढ़-सौ वर्षों से ऊपर की आयुवाले ऋषि दयानन्द अपनी दिव्यदृष्टि द्वारा देश का कल्याण ही करते।

देवेन्द्र आर्य

यदि सौभाग्य से महर्षि जीवित होते तो आज के समाज की दशा आज जैसी न होकर बड़ी ही उच्च दशा में होती तथा वर्तमान की समस्याएं ही न होतीं।

प्रताप सहगल

स्वामी दयानन्द आज होते तो वे आर्य-समाज को बन्द करके कोई और नया तेज आन्दोलन छेड़ते, देश की वर्तमान परिस्थितियों के प्रति असंतुष्ट होते।

प्रो. प्रभुशूर आर्य

आज यदि महर्षि दयानन्द जीवित होते तो उनकी विचारधारा पिछली एक शती में सम्पूर्ण भूमण्डल में फैल चुकी होती। वेद की शिक्षा मुसलमान और ईसाई भी मान रहे होते। आज के संदर्भ में उनकी भूमिका वर्तमान कुरीतियों व पाखण्डों से संघर्ष करने की होती और वे राष्ट्रवाद को ठोस आधार प्रदान करते।

प्रेमनाथ

यदि ऋषि दयानन्द जीवित होते तो ऐसी परिस्थितियां आती ही नहीं। समाज के १० नियमों का पालन होता और यदि वे अब आ जायें तो सम्भवतः आर्य-समाज को संजीवित कर देव संस्कृत के प्रचार का और कोई मार्ग निकालते।

डॉ. प्रशान्त कुमार

यदि आज महर्षि दयानन्द होते तो वे अकेले ही राष्ट्रीय समस्याओं से जूझ पड़ते, पर पहले आर्य-समाजों में सुधार करते। जब तक देश में वर्णाश्रम व्यवस्था ठीक प्रकार से नहीं चलती, तब तक दयानन्द को चैन न पड़ती।

प्रह्लाद दत्त वैद्य

आज के समय में महर्षि पर प्रतिक्रिया यह होती है कि इतना साहित्य और प्राचीन इतिहास आर्यों को सौंप देने पर भी उनके आचरण में विशेष परिवर्तन क्यों

नहीं आया, इस पर खेद व्यक्त करते।

भगवान चैतन्य

महर्षि दयानन्द जी यदि आज तक जीवित रहते तो भारत की यह दुर्दशा ही उस ढंग से न होती क्योंकि वे इस ढंग से कार्य करते कि आज भारतवर्ष पर आर्य साम्राज्य होता। यदि ऐसा संभव हो पाता तो आज ये समस्याएं भी न होतीं। बल्कि आज पुनः भारत का विश्व के अन्य राष्ट्रों पर किसी-न-किसी रूप में आधिपत्य स्थापित हो चुका होता। यदि ऐसी कल्पना भी हम करें तो उनकी पैनी दृष्टि क्या प्रतिक्रिया करती यह भी हम कल्पना के आधार पर ही बता सकते हैं। इतना निश्चित है कि महर्षि की बुद्धि इतनी विकसित थी कि वे आज की सभी समस्याओं का सही समाधान कर पाने में समर्थ थे।

डॉ. भवानीलाल भारतीय

यह बताना हमारे लिये सम्भव नहीं है।

मदनगोपाल खोसला

जैसे स्वामी जी ने अपने जीवन काल में समस्याओं का सामना करके सफलता प्राप्त की और समाज को कुरीतियों के पंजे से छुड़ाया, वैसे आज भी वह जनता-जनार्दन का परिवर्तन करके ही सांस लेते।

डॉ. मण्डन मिश्र

यदि आज महर्षि दयानन्द जीवित होते तो भी वे निराश नहीं होते। उनकी प्रेरणा और दिशा-दर्शन से देश की वर्तमान परिस्थिति को भी लाभ होता और वे राष्ट्र में आचार को विशेष महत्त्व देते जिससे अपने आप सब समस्याओं का समाधान हो जाता।

मुल्कराज भल्ला

मैं कुछ कह नहीं सकता। हां, आज के आदमी का चरित्र पतन उनसे देखा नहीं जाता।

यशपाल वैद

स्वामी दयानन्द पाखण्ड, असत्य को देख कर आज भी बहुत विचलित होते और इसे दूर करने के लिए दृढ़ संकल्प कर आगे आते।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार

महर्षि जीवित होते तो उनकी प्रतिक्रिया ऐसी ही होती जो तत्कालीन परिस्थिति को देख कर उन्होंने तब प्रकट की थी।

राजकुमार कोहली

आज यदि महर्षि दयानन्द जीवित होते तो देश की वर्तमान परिस्थितियों से उसी प्रकार संघर्ष करते, जैसी उन्होंने एक शती पूर्व देश की तब की परिस्थितियों को देख कर किया था। उनका आज भी यत्न सत्य-धर्म की स्थापना का होता।

डॉ. रामगोपाल

यदि आज स्वामी दयानन्द सरस्वती जीवित होते तो वे वर्तमान भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष का नेतृत्व करते।

कु० विद्यावती आनन्द

महर्षि दयानन्द जीवित होते तो देश में यह परिस्थतियां पैदा ही नहीं होतीं। यदि होतीं तो वह बहुत दुखी होते और इन परिस्थितियों को सुधारने के लिए दिन-रात एक कर देते और चैन से नहीं बैठते।

विद्यानन्द सरस्वती

महर्षि दयानन्द दुखी होते और इसके लिए अपने अनुयायियों को आड़े हाथों लेते।

वैद्यनाथ शास्त्री

उनकी तीव्र प्रतिक्रिया और कई बातों के आमूलचूल परिवर्तन के लिए होती। समाज और राजनीति का रूप भी तो बदला जाता और मूक दर्शक बने नेताओं को परिस्थिति से जूझने के लिए तैयार किया जाता और समाज के सभी उपयोगी वर्गों को भारत के सुधार के कार्य में लगाया जाता।

सत्यदेव विद्यालंकार

यह 'यदि' वाला प्रश्न निरर्थक है। इस लट् लकार के लिए कुछ भी सोचना तुक्के लगाना होगा।

डॉ. सहदेव वर्मा

निश्चय ही आक्रोशित व खिन्न होते। अपनी निष्कलुष तथा तीखी ललकार से शेर की खाल लपेटे भेड़ियों की चमड़ी उधेड़ देते।

सुदर्शन देव

यदि ऋषि दयानन्द आज जीवित होते तो यह परिस्थिति आज उत्पन्न ही नहीं होने दी जाती। कारण स्वतंत्रता उनके प्रयत्नों का प्रति फल होती। वे विशुद्ध धार्मिक विषयों को छोड़कर स्वतंत्रता के पश्चात् राजनैतिक सुव्यवस्था करते। रावराणा उदयपुर तथा जोधपुर नरेश को फटकारने वाले दयानन्द स्वयं अयातुल्ला

खुमेनी की तरह से नहीं बल्कि भारतीय मनीषी प्रज्ञा पुरुष होने के साथ विवेक आधारित महा निर्देशक की भूमिका निभाते हुए मनु की दण्ड शक्ति सर्वाप्रजा: के विधान का पालन करते हुए ये समस्याएं ही नहीं उत्पन्न होने देते । उस परिस्थिति में वे जनता के आन्तरिक सुधार तथा वैदिक धर्म के रचनात्मक प्रसार पर सर्वाशत: बल देते रहे । स्वातंत्र्य शक्तियों को जन्म दे, आगे बढ़ा, सिद्धि प्राप्त करके इन आधुनिक समस्याओं को उत्पन्न ही नहीं होने देते । महात्मागांधी जी जैसी तटस्थता वे नहीं दिखाते ।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्त

वे अधिक तप के साथ अपने सिद्धांतों का प्रचार करने में संलग्न होते ।

हरिकिशन मलिक

आज की परिस्थितियों में और १८८३ की परिस्थितियों में केवल एक ही अन्तर है और वह यह कि १८८३ में हम अंग्रेजों के दास थे अब स्वतन्त्र हैं यदि आज महर्षि जीवित होते तो वह सब तो करते ही जो जीवन भर करते रहे, इसके अतिरिक्त सुराज्य की स्थापना के लिए विशेष बल लगाते जिससे कि पुन: भूमण्डल पर आर्यों के चक्रवर्ती राज्य की स्थापना होकर लाखों वर्षों तक संसार में सुख शान्ति बनी रहे और मानव मात्र मोक्ष की प्राप्ति के लिए निर्बाध साधना कर सके ।

□.

१६

आर्य-समाज और उसका वर्तमान नेतृत्व

प्रश्न

आज देश-विदेश में आर्य-समाज की जो स्थिति है तथा आर्य नेता और उनके अनुयायी जिस प्रकार आर्य-समाज को चला और अपना रहे हैं, क्या आप उससे संतुष्ट हैं ? आर्य-समाज में नित्य नया जीवन आना चाहिए, इसके लिए आप क्या सुझाव देना चाहेंगे ?

उत्तर

अक्षय कुमार जैन

आर्य-समाज में एक बार फिर से प्राण डालने की आवश्यकता है। इसके लिए नई पीढ़ी को प्रेरित करना चाहिए।

अमरनाथ कांत

आर्य-समाजों व आर्य प्रतिनिधि सभा आदि के अधिकारी व नेतागण अनुयायी नहीं है वह तो दम्भिक, कुशासक, शोषक हैं। वह तो धर्म के अनुयायी हैं इसीलिये विद्वानों का अपमान और उन्हीं की विद्वत्ता को नष्ट, भ्रष्ट करने पर हर समय तत्पर रहते हैं और इसीलिए आर्य-समाज का कार्य रुका पड़ा है। झूठे मत-मतान्तरों का विस्तार हो रहा है वे पनप रहे हैं, इससे प्रत्येक योग्य विद्वान मन मार कर वेदना दबाए चुप सहन तो कर रहा है परन्तु कुछ कह नहीं पा रहा हैं। इन जालिमों, दुश्चरित्रवान, अनाधिकारी नेतागणों के आगे इस समय के अनुशासकों से योग्य विद्वान असंतुष्ट हैं। रहा आर्य-समाजों में नित नया जीवन आना चाहिए, सो उसके लिए सभी आर्य-समाजों को बाध्य किया जाये कि यहां आर्यवीर दल, आर्य वीरांगना दल, आर्य कुमार सभा व तर्क शालिनी सभा तथा पुस्तकालय, वाचनालयादि अवश्मेव होने चाहिए। प्रत्येक आर्य-समाज ही ठीक बनाये और उसका निरीक्षण प्रान्तीय सभा

करती रहे जिससे शिथिलता न आने पाये। यदि कोई समाज ऐसा न करे तो उसके अधिकारी वर्ग को निकम्मा, स्वार्थी, अनार्यों का समाज घोषित कर दिया जाये।

प्रो. कैलाशनाथ सिंह

नवीन रक्त का सदैव स्वागत होना चाहिए। वर्तमान बृद्ध नेता आचार्य पद की गरिमा का अनुभव करके तरुण रक्त को स्थान देते हुए उनका मार्ग दर्शन करें तथा स्वयं पदलिप्सा त्याग दें।

प्रो. कृष्णलाल

नहीं। सत्संगों के अतिरिक्त भी युवकों के लिये कार्यक्रम होने चाहिये। आर्य-समाजी विद्यालयों में यह सब करें, जीवनियां सुनाई जायें, भाषण हों। यह बहुत कम हो गया है।

जगतराम आर्य

खेद की बात है कि आज आर्य-समाज के कुछेक नेता कुर्सी कायम रखने और गुटबंदी बनाए रखने की चिंता में रहते है। यदि महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, पं० गुरुदत्त, पं लेखराम, महात्मा हंसराज के जीवन पर विचार करें तो सब बातों को भूल कर केवल आर्य-समाज के प्रचार और प्रसार में जुट जाएं। हर समय आर्य-समाज का ही उनके सिर पर भूत सवार हो। आर्य-समाज में नित नया जीवन तभी आ सकता है यदि हम सैद्धान्तिक दृष्टि से दृढ़ आर्य समाजी बनें तथा फिर अपने परिवार को आर्य-समाजी बनाएं। हमारे प्रत्येक कार्य में आर्यत्व की सुगन्ध हो, एक आदर्श जीवन हो, तभी दूसरों को आर्य-समाजी बना सकते हैं। जिस प्रकार आर्य-समाज का काम चलाया जा रहा है, मैं उससे संतुष्ट नहीं हूँ।

डॉ. दुखनराम

देश-विदेश में आर्य-समाजों की जो स्थिति है आर्य नेतागण जिस प्रकार से चला रहें हैं, उससे किसी को भी संतोष नहीं है। हमें भी नहीं है। नवयुवकों के आम-आगमन से समाज में प्रगति आ सकती है।

देवेन्द्र आर्य

नहीं, आर्य-समाज में मिशनरी भावनाओं से परिपूर्ण व्यक्तियों का समावेश करना चाहिए।

प्रताप सहगल

एकदम असंतुष्ट हूं। नौजवानों को सामने आने दें। स्वामी दयानन्द के पिच्छलग्गू न बनें। उनके सुधारवादी दृष्टिकोण पर भी प्रश्न चिह्न लगाएं। उन्हें श्रद्धा की नहीं तर्क की जरूरत है। वर्तमान नेतागण या ऐसे ही दूसरे दृष्टिहीन लोगों को

आर्य-समाज से अलग हो जाना चाहिए। आर्य-समाज को एक मृत संस्था नहीं, एक आंदोलन बनाएं, तब शायद कुछ हो सके।

प्रो. प्रभुशूर आर्य

मैं वर्तमान कार्यप्रणाली से संतुष्ट नहीं हूं। आर्य-समाज को अपना आन्दोलनकारी रूप बनाये रखना होगा और समाज में व्याप्त कुरीतियों को मिटाने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहना होगा। आर्य-समाज को समझोतावाद छोड़ना होगा, सत्य के के प्रति निष्ठावान बनना होगा और सत्य ही, कहना होगा जो मधुर और हितकर हो।

प्रेमनाथ

इस प्रश्न का भी उत्तर ऊपर दिया जा चुका है। हमें स्वयं नियमों का पालन करके ऊंचा उठना चहिये। सदस्य विशेषकर अधिकारी स्वाध्यायी शीलवान सात्याचरण वाले हों। पद की लालसा अथवा वाद विवाद उनमें न हो। निस्वार्थी कर्मठ हों। जो आचार भ्रष्ट हो वह चाहे कितना ही शास्त्रों व संस्कृतादि का विद्वान हो, उसका वाणी से भी सत्कार नहीं करना चाहिये। सत्कार से वे और नीचे गिरते हैं। धार्मिक विद्वानों का सत्कार अधिक से अधिक होना चाहिये।

डॉ. प्रशांत कुमार

(क) यदि ६० वर्षों की आयु के बाद आर्य-समाज का कोई पदाधिकारी न बने तो उसमें नया जीवन आ सकता है।

(ख) आर्य-समाज का धर्म केवल शहरी आर्य-समाज संस्था का संचालन नहीं है। वानप्रस्थी प्रान्तों में रहकर वैदिक धर्म का प्रचार करें।

प्रहलाद दत्त वैद्य

एक विचारगोष्ठी बुलाकर, जिसमें आर्य-समाज के हितैषी अन्य व्यक्तियों को आमंत्रित किया जाए, इस पर निर्णय लेने में मतभेद नहीं होगा।

भगवान चैतन्य

आर्य-समाज आज भी विभिन्न क्षेत्रों में जो कार्य कर रहा है वह सराहनीय तो हैं, मगर उससे किसी प्रकार भी संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता है। व्यक्तिगत स्वार्थ, पदलोलुपता, चारित्रिक पतन, सिद्धांत विमुखता, विघटन एवं श्रेष्ठ नेतृत्व की कमी आदि बुराइयों से यह संस्था भी बच नहीं पाई है इसका, यह अर्थ कदापि नहीं है कि आर्य-समाज राष्ट्र या समाज के लिए घातक सिद्ध हो बल्कि मेरे कहने का आशय केवल इतना ही है कि इन कमियों के कारण आर्य-समाज स्वयं अपने लिए घातक सिद्ध हो रहा है।

एक प्रमुख सभा (या पदाधिकारी) जो भी नियुक्त की जाए जिसके निर्देश सर्वमान्य होने चाहिए तथा समस्त कार्य, गतिविधियां उसी की देखरेख में होनी चाहिए। प्रत्येक आर्य-समाजी का आर्यकरण होना परम-आवश्यक है। पदाधिकारी वैसे भी कट्टर सिद्धांतवादी एव ऋषि-भक्त चाहिए। आजीवन सेवा करने वाले कार्यकर्ता तैयार करने पड़ेंगे जिनका आठों पहर आर्य-समाज की विचारधारा को फैलाने के सम्बन्ध में ही चिन्तन हो। इसके लिए क्रमांक दो में दिए गए सुझाव ही विस्तृत रूप रेखा तैयार करके लागू किए जाने चाहिए विद्वान, दानी कार्यकर्ता आर्य-समाज के पास हैं, मगर सुनिश्चित कार्य पद्धति नहीं है। इसके लिए दृढ़ प्रयास करने चाहिए। यहां तो सकेत मात्र ही दिए जा सकते हैं, इसके लिए मेरा विशेष सुझाव यह है कि आर्य जगत के महात्माओं, विद्वानों एवं कार्यकर्ताओं के लिखित रूप से विचार मांगे जाएं तथा फिर एक बैठक करके लिखित रूप में कोई कार्य-पद्धति बनाई जाए और उसी को कार्य रूप दिया जाए।

डॉ. भवानीलाल भारतीय

आर्य समाज के वर्तमान संचालन से पूर्णतया संतुष्ट होने का प्रश्न ही नहीं है। आर्य-समाज को नया जीवन विद्वान संन्यासी एवं त्यागी तपस्वी पुरुष दे सकते हैं, राजनीतिक स्वार्थों को समक्ष रखने वाले वर्तमान नेता नहीं। सुझाव अनेक हैं, जिन्हें संक्षेप में प्रस्तुत करना भी कठिन है।

मदनगोपाल खोसला

समाज की स्थिति से बिलकुल संतुष्ट नहीं हूं नए लोगों को समाज में लाने के लिए घर-घर जा कर लोगों से सम्पर्क करना चाहिए। आर्य विचारों की पुस्तकें बांटी जानी चाहिएं। प्यार की भावना को जागृत करना चाहिए, जो प्रायः लुप्त हो चुकी है।

डॉ. मण्डन मिश्र

आर्य-समाज ही नहीं, राष्ट्र में किसी भी संगठन के कार्य-कलापों से आज कोई भी संतुष्ट नहीं है। सार्वजनिक जीवन में भी अच्छी मान्यताएं बहुत कम रह गई हैं और इसीलिए सार्वजनिक संस्थाओं के लिए न अच्छे कार्यकर्ता मिलते हैं और न नेता।

मुल्कराज भल्ला

हम कहते बहुत है, करते कम है, दिखावा ज्यादा है। अपने आपको सुधारने की जरूरत है। काम काफी हुआ है, लेकिन ज्यादा हमसे पहली पीढ़ी ने किया है। आज के आर्य-समाजी का वह मान नहीं जो स्वामी श्रद्धानन्द तथा महात्मा हंसराज के समय था।

यशपाल वैद

आर्य-समाज की वर्तमान स्थिति से संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता राजनीति यहां भी घुस ही आई है, जोड़-तोड़ की राजनीति। स्वस्थ आलोचना सदा स्वागत योग्य है, किन्तु यहां भी कहीं-कहीं स्वार्थवश आलोचना होती है। आर्य-समाज के अनुयायियों और संचालकों में आर्य-समाज और स्वामी दयानन्द के बैनर के नीचे अपना ही उल्लू सीधा करने का ढंग मन में ग्लानि उत्पन्न करता है। यद्यपि कुछ निकष पर आर्य नेताओं की उपस्थिति मन को आश्वस्त भी करती है।

राजकुमार कोहली

आर्य-समाज अच्छा कार्य कर रहा है, परन्तु अभी और अधिक कार्य करने की आवश्यकता है। युवा वर्ग को समुचित रूप में कार्यक्रमों में सम्मिलित कर हम आर्य-समाज के कार्य को आगे बढ़ा सकते हैं।

कु० विद्यावती आनंद

देश-विदेश में आर्य-समाज की जो स्थिति है उससे मैं संतुष्ट नहीं हूं। आर्य-समाज में नित्य नया जीवन लाने के लिये प्रत्येक आर्य-समाजी को चाहिये कि अपने जीवन को आर्य-समाज के नियमों के अनुसार ढाले। आराम तलबी और कुर्सी की चाहना छोड़ दयानन्द का वीर सैनिक बन देश की, समाज की और मानवता की सेवा में लगा रहे। देश के किसी कोने में भी प्रकृति का प्रकोप हो, महामारी आये, वहां सेवा के लिये पहुंचे।

विद्यानंद सरस्वती

वर्तमान में आर्य-समाज की स्थिति सर्वथा निराशाजनक है। आर्य-समाज का नेतृत्व यदि चरित्रवान विद्वानों के हाथों में नहीं आयेगा और उनमें प्रचलित अप्रजातन्त्रात्मक रूप को समाप्त नहीं किया जाएगा तो उसके बचने की कोई आशा नहीं।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक

आर्य-समाज को नया जीवन देने के लिए ऐसे नेताओं की जरुरत है, जिनके दिमाग की खिड़कियाँ खुली हों, छोटी-मोटी कुर्सी के लालच से जो ऊपर हों और दुनिया को बदलने की ख्वाहिश जिनके दिल में हो।

वैद्यनाथ शास्त्री

हम बिल्कुल ही संतुष्ट नहीं हैं। निर्वाण शताब्दी को ही लिया जा सकता है। कितनी बड़ी अनुशासनहीनता, स्वार्थ परम्परा, चढ़ा-ऊपरी की भावना, पदलोलुपता और एकाधिपत्य दृष्टि में सामने आई है। इनका परिणाम आगे भी भयावह होगा।

अनाधिकारी व्यक्ति अधिकार जमाना चाहते हैं । आर्य-समाज के गौरव को घटाया जा रहा है। जिस कार्य को कर सकने का सामर्थ्य नहीं उसे अपने हाथ में लेकर अब आंटा मांगने पर उतारु हो रहे हैं। आज तक शताब्दियों में ऐसा कभी नहीं हुआ। प्रच्छन्नों से समाज को साफ कर उसकी अपनी स्थिति को समक्ष उपस्थित करना चाहिए। प्रत्येक कार्य को उत्साह और नियमानुसार करना चाहिए।

सत्यदेव विद्यालंकार

यह प्रश्न ही एक मात्र मुख्य समस्या हैं। चन्द लाइनों में, राह चलते हुए इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया जा सकता।

डॉ. सहदेव वर्मा

अभी तो कहा कि देश में ही स्थिति काबू से बाहर है तब बाहर तो रहन-सहन, खान-पान, अध्यापन, सिद्धांत-व्यवहार में समानता का प्रश्न ही नहीं। सुझाव है आर्य-समाज का तीसरा चौथा व आठवां नियम।

सुदर्शन देव

देश विदेश में सामान्यतः आर्य-समाज का कार्य सुचारू रूप से चल रहा है। किन्तु आर्य-समाज के जन्म की स्थिति को देखते हुए मत-सम्प्रदाय तथा आन्दोलन आज चाहे सामाजिक, राजनैतिक विषयों पर अधिक प्रभाव न डाल सके किन्तु जनमानस की आस्थाओं पर अधिक अधिकार प्राप्त कर उन्हें अपनी संख्या अवश्य बढ़ाकर घुड़सवार की हैसियत प्राप्त कर लनी चाहिए। अतः संतुष्ट न रहकर अपने महान प्रवर्तकों तथा नेताओं की पद गरिमा का गर्व एवं दायित्व अनुभव करते हुए आज से ५० गुणा वर्चस्व आर्य-समाज को प्राप्त करना चाहिये था। नेताओं का दोष इतना ही है कि वे मात्र प्रदर्शनात्मक मेला इकट्ठा कर लेते हैं, किन्तु इससे ठोस अनुयायी वर्ग तथा विचारधारा का ठोस प्रचार नहीं हो पाता। होना यह चाहिये कि उपलब्धियों का आकलन प्रति वर्ष हो तथा भावी योजनाएं स्पष्ट एवं निश्चित रूप से आर्यों के समक्ष आयें एवं आर्य वीर दल व राजनीति में विधायक संख्या में वृद्धि, वैदिक साहित्य के समुचित प्रकाशन आदि की सफलताओं को जमा खाते में अंकित करने का उत्तरोत्तर निर्णय ही आर्य-समाज की प्रगति के संकेतक तथा नेताओं के कार्यों के औचित्य का प्रमाण हो सकता है। ग्राम नगर स्तर पर जो आर्य-समाज निष्क्रिय है वहां नगर की इकाई स्तर पर प्राण संचार एवं फिर तहसील व जिला स्तर पर संगठन योजनाएं बनें तथा कार्यान्वित हों। तभी ठोस रूप से आर्य-समाज का प्रचार कार्य बढ़ सकता है।

डॉ. सुधीर कुमार गुप्त

जी नहीं, आर्य नेता तो राजनीतिक नेताओं के समान आचरण कर रहे हैं। उनमें से बहुतों का आर्यत्व ऊपरी है। नये जीवन को लाने के लिए आर्य-समाज के

विधान में कुछ प्रतिबन्धात्मक परिवर्तन किए जा सकते हैं। कुमार-कुमारियों और युवक-युवतियों में आर्य विचारधारा के प्रचार-प्रसार की क्रियात्मक योजनाएं ऐसी बनानी होंगी, जिनसे उ से उनके अपने परिवेश में, बिना आर्य-समाज मन्दिर के सत्संगों आदि में आए, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सम्पर्क किया जा सके। जो कुमार आदि आर्य-समाज में आएं उनसे मधुर व्यवहार, उनकी सहायता आदि की जाएं। पुस्तकालय और वाचनालय, शिक्षा संस्थाएं, धार्मिक पाठ वितरण और परीक्षाएं आदि अनेक योजनाएं हैं, जिनको लागू किया जा सकता है।

हरिकिशन मलिक

मैं संतुष्ट नहीं हूं। आर्य-समाज के नेताओं की ढिलमिल नीतियों के कारण आज आर्य-समाज मृतप्रायः हो गया है और वही समस्याएं पुनः उभर रही हैं जिनका आर्य-समाज सर्वदा विरोध करता रहा। आर्य-समाज में नया जीवन तब आता था जबकि आर्य-समाजी गली और बाजारों में, खेतों और खलियानों में, पार्कों में और पहाड़ियों पर दहाड़ा करते थे, किन्तु आज का आर्य-समाज छोटे-छोटे समाज-मन्दिरों में संकुचित होकर रह गया है। बाहर इसकी आवाज पहुंचती नहीं, नया जीवन कहा से आए। अभी मीनाक्षीपुरम् के काण्ड को लेकर आर्य-समाज सरे बाजार दहाड़ा था तो न केवल अनेक हिन्दुओं को मुसलमान बनने से बचा लिया अपितु जीवन मित्र, ज्य प्रकाश और अमरेश आर्य जैसे जन्म के मुसलमानों को अपना अनन्य सेवक बना लिया। आर्य-समाज को अपने सीमित साधन बड़े-बड़े जलसे-जलूसों पर अथवा मिट्टी के घरौंदे बनाने पर व्यय करने के बदले वैदिक धर्म के मिशनरी प्रचारक तैयार करने पर लगाने चाहिए और शुद्धि का इतना जबरदस्त आन्दोलन चलाना चाहिए कि भारत भर में एक भी विधर्मी न रहे। फिर देखिए इस कार्य के लिए कितना रुपया बरसता है और आर्य-समाज में कितना जीवन आता है। मैं तो समझता हूं कि आर्य-समाज को अपनी सम्पत्तियां बेचकर भी शुद्धि का कार्य चलाना पड़े तो भी कोई हानि नहीं। देश की अनेक समस्याओं का मूल नष्ट कर देने के प्रयत्न में विजय पाकर आर्य-समाज को आज से भी दस गुणी सम्पत्तियां प्राप्त हो जाएंगी।

□

२०

आर्य-समाज और मानव-कल्याण

प्रश्न

आपके अनुसार आर्य-समाज क्या है और आर्य-समाज को विश्व-कल्याण के लिए मानव जाति के कल्याण के लिए क्या-क्या कार्यक्रम अपने हाथ में लेने चाहिएं ?

उत्तर

अक्षयकुमार जैन

आर्य-समाज को नैतिक जागरण के कार्यक्रम हाथ में लेने चाहिए।

अमरनाथ कांत

मेरे विचार के अनुसार आर्य-समाज मानव मात्र का ही नहीं, बल्कि प्राणी मात्र का हितैषी और विद्वान आचारवान कर्मयोगियों का समूह है। विश्व-कल्याण व मानव जाति के कल्याणार्थ आर्य-समाज ने कौन-सी कमी छोड़ रखी है जो और कहीं से लानी है। वेद प्रभु की कल्याणकारी वाणी है जो ज्ञान-विज्ञान से पूर्ण है। उसके प्रचार कार्य में हर समय रत व चिंतन करते हुए उसके प्रचार-प्रसार में किसी भी प्रकार की कमी न छोड़ना अवश्यक है। छोटी बड़ी बातें तो सब करते रहते हैं। अस्तु।

प्रो० कैलाशनाथ सिंह

आर्य-समाज शाश्वत ज्ञान ज्योति (Permanent Light Tower) है। जैसे हाथी के पैर में सब पैर समा जाते हैं उसी प्रकार नवशक्ति एवं उत्साह के साथ आर्य-समाज का वैज्ञानिक आधार पर प्रेम पूर्वक विद्वानों द्वारा प्रचार-प्रसार हो। आर्य-नेता और विद्वान केवल संस्कार की लक्ष्मण रेखा में न बंधे रहे। जीवन के व्यावारिक दर्शन की परिधि में आयें।

प्रो० कृष्ण लाल

मेरे बताने को कुछ नहीं है। महर्षि दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट मार्ग ही श्रेयस्कर है।

जगतराम आर्य

आर्य-समाज एक क्रांतिकारी आन्दोलन है। जो भारतीयों में ऐसी क्रांति लाना चाहता है सत्य-असत्य का विवेक हो, धर्म-निष्ठ हों। अपने पूर्वजों का नाम रोशन करे, अन्धविश्वास और अन्ध-श्रद्धा के कीचड़ में न फंसें। कुरीतियों और रुढ़िवाद का त्याग करें। एक ही निराकार परमेश्वर की आराधना करें, ईश्वरी ज्ञान वेदों को पढ़े पढ़ावें और सुनें-सुनावें, इत्यादि।

विश्व कल्याण और मानव जाति के कल्याण के लिये आर्य-समाज के महान दस नियमों पर चलना और चलाना पड़ेगा। जैसे कहते हैं हाथी के पावों में सबका पाव, इसी में सबका कल्याण हो सकता है।

डॉ० दुखनराम

आर्य-समाज के जो आन्दोलन हैं उनमें विश्वकल्याण के कार्यक्रमों को मानव जाति के कल्याण के लिए ही प्रस्तुत किया गया है।

देवेन्द्र आर्य

आर्य-समाज मानव कल्याणकारी संस्था है जो वेद विहित आदेशों का प्रचार-प्रसार करता है। संसार को मानवों की मानवता का दिशा निर्देश करता है। संसार के कल्याण के लिए कृण्वन्तोविश्वमार्यम् की भावना के निहित संसार की समस्त भाषाओं में आर्य भाषा सहित आर्य-समाज के दस नियम, 'सत्यार्थ प्रकाश' का अनुवाद एवं अन्य सहित्य प्रकाशित कराया जाकर प्रचारित किया जाये।

विदेशों में जहां-जहां भी आर्य-समाज है वहां उनके सदस्य भारतीय मूल के व्यक्ति ही हैं लेकिन वहां के स्थाई निवासी उक्त समाज के सदस्य नहीं हैं। कारण उनकी भाषा में साहित्य का न होना तथा वहां बसे भारतीय मूल के व्यक्तियों की संकीर्णता।

प्रताप सहगल

आर्य-समाज आज एक कुन्द हथियार है। विश्व कल्याण और मानव-जाति का कल्याण ऊंचे शब्द हैं। पहले इसे ही पाखण्ड और आडम्बर से मुक्त करें। यही कार्यक्रम सबसे बड़ा है। यह संभव हो गया तो शेष कार्यक्रम स्वतः बनेंगे।

प्रो० प्रभुशूर आर्य

मेरी इस विचारधारा में पूर्ण निष्ठा है कि आर्य-समाज सम्प्रदाय नहीं है अपितु एक जीवन्त आन्दोलन है। यह श्रेष्ठ मनुष्यों का समाज है और अगर कोई

यवन या ईसाई श्रेष्ठ गुण अपना लेता है तथा ईश्वर की न्याय व्यवस्था को स्वीकारता है तो वह भी आर्य हो सकता है। आर्य-समाज को सिद्ध करना होगा कि यह आज भी श्रेष्ठ मनुष्यों का समाज है। आर्य-समाज मानव जाति और प्राणीमात्र के कल्याण के लिये आज भी प्रमुख भूमिका निभा सकता है। प्रामीण-मात्र को ईश्वर की सन्तान मानने-मनवाने से एक-दूसरे को एक दूसरे के गले काटने से रोका जा सकता है। हमें स्वयं उदाहरण बनकर दिखलाना होगा कि जन्म से कोई ऊंच-नीच नहीं है। वेद संदेश को देशांतर में फैलाने के लिये संस्कृत की शिक्षा-दीक्षा आवश्यक है। अत: जम्मू काश्मीर, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, बिहार आदि प्रदेशों की संस्कृत विरोधिनी नीतियों का मुकावला करना होगा। भारत का गौरवमय अतीत लौटाने और उसे पुन: विश्व गुरु पद प्राप्त करवाने में भी आर्य-समाज को प्रमुख एवं महत्त्व-पूर्ण भूमिका निभानी है। मानव-मानव में लिंग, रंग, भाषा तथा प्रदेश के आधार पर फैले भेदभाव को मिटाना होगा। अत: सत्य हमारा प्रकाश स्तम्भ बना रहना चाहिये।

प्रेमनाथ

मेरी समझ में अब आर्य-समाज उद्देश्यों से च्युत होकर अवनति को पहुंच चुका है। यदि इसके सदस्य व विशेषकर अधिकारी वर्ग वेद का स्वाध्याय नहीं करेंगे और इन नियमों का पालन नहीं करेंगे तो आर्य-समाज विश्व-कल्याण अथवा मानव-जाति का क्या कल्याण कर सकता है? आर्य-समाज का कार्य तो वेद, वेदोक्त धर्म व ईश्वर के सत्यस्वरूप का प्रचार करना है वह तभी हो सकता है जब हम पहले इनको अपने जीवन में क्रियान्वित कर लें।

डॉ० प्रशान्त कुमार

हमें यह समझना होगा कि आर्य-समाज केवल संस्था का नाम नहीं है, वरन् वह एक सिद्धांत का नाम है। यद्यपि आर्य-समाज के सिद्धांतों का भी विश्व भर में प्रचार होना चाहिए, पर केवल सिद्धांतों के प्रचार से आर्य-समाज का काम पूरा नहीं होता। आर्य-समाज व्यक्तिगत उन्नति की योजना प्रस्तुत करता है। व्यक्ति की उन्नति समर्थ शिक्षा व उन्नति के समान अवसर से ही हो सकती है।

प्रह्लाददत्त वैद

प्रत्येक दृष्टि से आर्य-समाज एक सुधारक संस्था है और एक प्रबल आन्दोलन है। मानव जाति के कल्याण के लिये पृथक्-पृथक् विभाग स्थापित हों जिनमें प्रचार और सुधार की दृष्टि से प्रत्येक का अपना-अपना उत्तरदायित्व हो और एक केन्द्रीय कार्यालय से सबका संबंध हो।

भगवान चैतन्य

आर्य-समाज वेद प्रचार करने वाली एक सर्वश्रेष्ठ संस्था है। कुछ लोग इसे नया मत या संप्रदाय समझने की निकृष्ट भूल करते हैं, लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है।

यह तो सत्य सनातन वैदिक धर्म (जो ईश्वरीय है) का प्रसार-प्रचार करने वाली संस्था है। यही संस्था मानवकल्याण का कार्यक्रम अपने हाथ में ले सकती है क्योंकि यह किसी विशेष मत, संप्रदाय, जाति या राष्ट्र के लिए नहीं बल्कि मानव मात्र के लिए है। आर्य-समाज को मानव की चतुर्दिक उन्नति के लिए कार्य करना चाहिए और उसके लिए वेद का प्रचार-प्रसार ही एक मात्र माध्यम हो सकता है। मनुष्य की शारीरिक तथा आत्मिक उन्नति करके सामाजिक उन्नति प्राप्त की जा सकती है। इसी के लिए योग संस्थान, वेद संस्थान, प्रकाशन संस्थान खोलने की आवश्यकता है, ये सब संस्थान प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत कार्य करें। इसके अतिरिक्त इसी सभा के अन्तर्गत धर्मार्य सभा, राज आर्य-सभा एवं शिक्षा आर्य-सभा का गठन होना चाहिए, ताकि विधिवत् प्रत्येक कार्य हो सके। संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य लक्ष्य है अत: वैदिक (सार्वभौमिक) दृष्टिकोण को लेकर कार्यक्षेत्र में उतरना होगा। प्रमुख तीन सभाएं एवं तीन ही प्रमुख संस्थान बनाकर पुनः प्रान्तीय स्तर पर तथा जिला स्तर पर समितियां बनानी होंगी। विदेशों के लिए भी यही व्यवस्था करनी होगी, लेकिन यह सब कार्य एक मुख्य प्रतिनिधि (सार्वदेशिक) सभा के अन्तर्गत ही हों, ताकि एकरूपता रहे तथा निश्चिय दिशा-निर्देश के आधार पर निरन्तर सफलता मिलती चली जाए। नेतृत्व भी सक्षम, सुयोग्य एवं सुनिश्चित होना चाहिए।

डॉ० भवानीलाल भारतीय

आर्य समाज मानव के व्यापक कल्याण की एक ऋषि निर्मित योजना है। उसके कार्यक्रमों के बारे में गम्भीरता से सोचना होगा।

मदनगोपाल खोसला

जैसे शरीर में प्राण कार्य कर रहे हैं, वैसे ही संसार में आर्य-समाज है। सर्व-प्रथम आर्य-समाज को शिक्षक का कार्य करना चाहिए। भारी संख्या में कार्यकर्ता होने चाहिए जो भारत के कोने-कोने में जा कर और विदेशों में जाकर प्रचार कर सकें। सबसे पहले अपने घरों से यह कार्य आरम्भ करें।

डॉ० मण्डन मिश्र

मेरे मत में आर्य-समाज एक हमारा आदर्श संगठन है और आर्य-समाज को विश्व और मानव जाति के कल्याण के लिए चरित्र निर्माण के कार्यक्रम को भी महत्त्व देना चाहिए, क्योंकि आज सारे संसार में भौतिक वैभव जितना बढ़ता जा रहा है, मनुष्यता का उतना ही पतन होता जा रहा है। यह सारे संसार के लिए चुनौती है। यदि इस चुनौती का हम सामना कर सकें तो इससे बढ़कर प्रसन्नता का विषय नहीं होगा। यही हमारी पूज्यपाद महर्षि स्वामी दयानन्दजी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

मुलकराज भल्ला

यह बहुत विस्तार से लिखने की बात है। दो शब्दों में यह कहा जा सकता है कि आर्य-समाज चरित्रनिर्माण की तरफ ध्यान दे। अच्छे और सच्चे नागरिक बनाने का यत्न करे। स्वार्थी लोगों को पद न दें।

यशपाल वैद

सकल संसार की सारी जनता के लाभार्थ समर्पित जनसमुदाय आर्य-समाज कहलाने की शक्ति और क्षमता रख सकता है। वेदों के सूत्रों को साथ लेकर मानव-हित का उत्तरदायित्व ले आर्य-समाज अवश्य आगे बढ़ सकता है। ऐसी हार्दिक इच्छा और मनोकामना की जा सकती है।

डॉ० रघुवीर वेदालंकार

आर्य-समाज एक चेतना, जागृति एवं आंदोलन है। जीवन, समाज एवं राष्ट्र की सम्पूर्ण शान्त क्रांति है। आर्य-समाज की वर्तमान स्थिति से असन्तोष एवं आर्य-समाज के प्रति इतर लोगों की अश्रद्धा बढ़ती जा रही है। पदलोलुपता एवं झगड़े बढ़ते जा रहे, हैं। प्रचार कार्य शिथिल या कहें कि समाप्त हो गया है। समाज में रविवार तथा वार्षिक उत्सवों, सम्मेलनों तक में हमारा प्रचार परम्पराबद्ध हो गया है। शास्त्रार्थ एवं विद्वता की परम्परा समाप्त हो रही है। सन्यासी या तो आर्य-समाज में बन ही नहीं रहे। अब जो बन रहे हैं वे भी सर्वात्मना प्रचार को समर्पित न होकर पैसे आदि के लिए प्रचार करते हैं! वानप्रस्थ आश्रम की तो और भी अधिक दुर्दशा है। समाज में यहां तक कि नेताओं तथा अधिकारियों में भी असत्य, अशुचिता, अनैतिकता मद्य, मांस आदि की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है, जिस कारण आर्य-समाज की पूर्ववत् प्रतिष्ठा न होकर मात्र संगठनात्मक रूप रह गया है। युवक इस ओर आकृष्ट नहीं हो रहे हैं। आर्य-समाज धार्मिक स्तर पर, धर्म, ईश्वर का स्वरूप समझाकर, शुद्धि कार्य चलाकर, सामाजिक स्तर पर छुआछूत, अशिक्षा, दहेज, भ्रष्टाचार आदि बुराइयों को दूर करके तथा हो सके तो बेरोजगार युवकों के लिए कोई आर्थिक कार्यक्रम चलाकर मानव जाति का उत्थान कर सकता है।

राजकुमार कोहली

आर्य-समाज को यह सिद्ध करना होगा कि यह सचमुच श्रेष्ठ व्यक्तियों का समाज है। आर्य-समाज का जन्म ही विश्वकल्याण के लिये हुआ था। आर्य-समाज को दहेज आदि कुरीतियों को मिटाने के लिये संघर्ष रत हो जाना चाहिये।

कु० विद्यावती आनंद

मेरे अनुसार आर्य-समाज एक आन्दोलन है, क्रान्ति की एक चिन्गारी है जिसका कार्य कभी समाप्त नहीं होगा। जिसे सदैव जलते रह कर विश्व को, मानवता को

रोशनी देते रहना होगा, रास्ता दिखाते रहना होगा। आर्य-समाज को मानव जाति के कल्याण के लिए विभिन्न कार्यक्रम हाथ में लेने चाहियें—

१. निम्न वर्ग के उत्थान के लिए उनमें जाकर काम करना।

२. दीन दुखियों, रोगियों की सेवा के लिये अस्पताल खोलना।

३. अनाथ बच्चों के लालन-पालन के लिये अनाथालय खोलना।

४. वृद्ध आश्रम स्थापित करना।

५. संन्यास आश्रम स्थापित करना।

६. शिक्षा संस्थाएं स्थापित करना। इन संस्थाओं में आधुनिक शिक्षा के साथ वैदिक सभ्यता-संस्कृति एवं राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ाने का प्रबन्ध करना।

७. शिक्षण संस्थान स्थापित करके भावी शिक्षकों को ऐसी शिक्षा देने का प्रबन्ध करना जिससे वह अपने विद्यार्थियों के जीवन का निर्माण करने में समर्थ हों।

८. उपदेशक विद्यालय खोलकर विद्वान प्रचारक तैयार करना।

९. वेद प्रतिष्ठान स्थापित कर विभिन्न भाषाओं में वेदों का भावार्थ सहित सरल अनुवाद करवाना।

१०. शुद्धि का कार्य शिथिल पड़ गया है। इस कार्य को सक्रिय करना तथा इस कार्य के लिये कार्यकर्ता तैयार करना।

विद्यानंद सरस्वती

आर्य-समाज की स्थापना करते समय गिनाये गये नियमों में पहले नियम में इसका उत्तर इस प्रकार है—

"आ सभाजनों मुख्य उद्देश्य ए छे के वेदविहित धर्मतत्वों प्रत्येक सभासदे मान्य करवा अने तेनो प्रसार देश प्रदेश करवाने यथाशक्ति प्रयत्न करवों।"

डॉ० वेदप्रताप वैदिक

आर्य-समाज अनेक नए कार्यक्रम अपने हाथ में ले सकता है और पुराने कार्यक्रमों को अधिक तेज कर सकता है। इस संबंध में १९७५ के शताब्दी समारोह के अवसर पर नव भारत टाइम्स में मैंने एक लेख लिखा था, कृपया उसे देखें।

वैद्यनाथ शास्त्री

आर्य-समाज वही है जो उसके नियमों में वर्णित है। उसी के आधार पर विश्व कल्याण के कार्य को लेना चाहिए। वेद समस्त विश्व के लिए है और सभी प्रकार के मानव कल्याण के उपाय उसमें बताये गये हैं। आर्य-समाज को उसके अनुसार चलना चाहिए। प्रत्येक कार्य की योजना को बनाकर कार्यान्वियन के लिए समितियां बनानी चाहिएं और उनके कार्यों पर देखभाल होनी चाहिए।

सत्यदेव विद्यालंकार

आर्य-समाज क्या-क्या कार्यक्रम चलाए इसका उत्तर १० नियमों में स्पष्ट निहित है।

मेरे विचार-सुझाव अटपटे भी लगें तो कोई हानि नहीं। आर्य-समाज की एक मात्र देन गुरुकुल कांगड़ी तथा उसी की दिशा में चलने वाले अनेक गुरुकुल थे—इनका सर्वनाश समाज के ही क्षुद्रहृदय नेताओं द्वारा हो गया है। आपके सब प्रश्नों का हल ये गुरुकुल ही हो सकते थे, जिन्हें रोने वाले भी प्राय: नहीं रहे।

डॉ० सहदेव वर्मा

वैदिक विचारधारा को आन्दोलन का रूप देकर निरन्तर उसकी अभिवृद्धि में लगना ही आर्य-समाज है। वेद के आधार पर व्यक्ति, समाज, राष्ट्र, तथा विश्व का कल्याण संभव है।

सुदर्शन देव

आर्य-समाज मानव की व्यक्तिगत एवं समष्टि गत उत्थान की सही महायोजना है। उससे अन्तर्राष्टीय स्तर पर शोषण, पाखण्ड, राष्ट्रीय विघटन, पारिवारिक शिक्षा युवा महिला, ग्राम नगर, आर्थिक दारिद्रय, राष्ट्रीय शासन निर्माण तथा उस पर अंकुश का कार्य हाथ में लेना चाहिये, वैदिक शोध संस्थान, साहित्य प्रकाशन व प्रचार-तंत्र आदि का सुनियोजन करना चाहिये। विश्व में निरस्त्रीकरण सहअस्तित्व आदि पंचशील साम्राज्यवाद विरोध, मानव तथा समाज की स्वतंत्रता पर आधारित परस्पर सहयोग की भावना का प्रचार एवं प्रसार होना चाहिये।

डॉ० सुधीर कुमार गुप्त

आज आर्य-समाज विशाल सम्प्रदाय का रूप ले चुका है और प्रचार का लक्ष्य विश्व कल्याण नहीं रहा है, संख्या वृद्धि और दिखावा ही अधिक प्रतीत होता है। अधिकांश कार्यक्रम जलसों या मेलों तक सीमित हैं। इस स्थिति से ऊपर उठकर अपने सिद्धांतों का प्रचार और सर्व हितकारी प्रवृत्तियों को जन्म देना चाहिए। बम्बई की आर्य-समाज फोर्ट कई ऐसे कार्य कर रही है। सब को समान स्तर पर रखकर ही विश्व कल्याप सम्भव है।

हरिकिशन मलिक

आर्य-समाज संसार के श्रेष्ठतम मानवों के उस समाज का नाम है जो जीव मात्र का हितैषी बनकर प्रभु की श्रेष्ठतम कृति मानव को संसार में जीने का ढंग और तदुपरान्त मोक्ष प्राप्ति का साधन सिखाता है। विश्व कल्याण तथा मानव जाति के कल्याण तथा मानव जाति के कल्याण के लिए आर्य-समाज को वह सारे कार्यक्रम हाथ में लेने चाहिए जिनका उपदेश महर्षि दयानन्द जीवन भर करते रहे। इसके लिए सबसे पहले आर्यावर्त को वास्तविक अर्थो में आर्यावर्त बनाना अत्यन्त आवश्यक है।

परिशिष्ट

※ कुछ अन्य विद्वानों के विचार

※ कुछ विद्वानों के पत्र

ओम्प्रकाश, प्रिंसिपल के विचार

आज जब हमारे प्यारे देश भारत में विघटन की लहरें चारों ओर उठ रही हैं और विदेशी शक्तियां भारत राष्ट्र को कमजोर करने के लिए राष्ट्रघाती तत्वों को सहायता दे रही हैं, राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता पर ठीक ही बहुत बल दिया जा रहा है। १९४७ ईस्वी में भारत का तीन भागों में विभाजन मान कर तत्कालीन नेताओं ने कहा था कि अब देश सुख-चैन की नींद सोएगा ! पर ३६ वर्षों की आज़ादी में साम्प्रदायिक एवं अराष्ट्रीय तत्वों ने भयावह बरबादी की और अब देश के और टुकड़े करने की साज़िश रची जा रही है। उत्तर में कश्मीर में राष्ट्र-द्रोह का नंगा नाच हो रहा है एवं पंजाब में 'खालिस्तान' के नारे लग रहे हैं; पूर्व में आसाम में ज्वाला भड़क रही है और बांग्लादेश की उस पर वक्रदृष्टि है; दक्षिण में अरब-डालरों के ज़ोर पर राम-कृष्ण के नामलेवाओं को ईसा-मुहम्मद के अनुयायी बनाकर उन्हें राष्ट्र-विरोधी बनाने का षड्यंत्र रचा जा रहा है; पश्चिम में पाकिस्तान भारत को तबाह करने की योजनाएं बना रहा है और अमरीका उसे आधुनिक हथियार सप्लाई कर रहा है !

स्पष्टतः राष्ट्र के सामने भीतरी और बाहरी चुनौतियां मुंह खोले खड़ी हैं। उस की प्रभुसत्ता एवं स्वतंत्रता की रक्षा का प्रश्न आज प्रत्येक देश-भक्त की ज़बान पर है। भारत की प्रधान-मन्त्री बार-बार कह रही हैं कि राष्ट्रीय एकता की जितनी आवश्यकता आज है, पहले कभी नहीं थी, क्योंकि देश को चारों तरफ से खतरा है और हमें एकजुट होकर अलगाववादी शक्तियों का दृढ़ता से मुकाबला करना होगा। भारत के राष्ट्रपति सभी देशवासियों से अपील कर रहे हैं कि देश की अखण्डता की रक्षा के लिए सभी को छोटे-मोटे भेदभाव दूर कर देने चाहिए। राजनीतिक पार्टियां 'राष्ट्रीय एकता रैलियां' कर रही हैं और धार्मिक संगठन 'एकता यज्ञ' ! कहीं पद-यात्राएं हो रही हैं, तो कहीं जुलूस निकाले जा रहे हैं ! पर दुःख का विषय यही है कि राष्ट्रीय एकता की शुद्ध भावना उजागर नहीं हो रही।

कारण स्पष्ट है कि एकता के मूल तत्वों पर ध्यान नहीं दिया गया। जिस महर्षि की आज हम निर्वाण-शताब्दी मना रहे हैं, उस ने अपनी दिव्यदृष्टि से आज से १०५-६ वर्ष पूर्व राष्ट्रीय एकता की अलख जगाई थी, पर देश का दुर्भाग्य कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के मूल प्रणेता उस महान् राष्ट्र-निर्माता की बात पर हमारे नेताओं तथा भारतीय जनता ने सम्यक् ध्यान नहीं दिया और परिणाम-स्वरूप राष्ट्रीय एकता की यथावांछित भावना के अभाव के कारण राष्ट्र संकट में फंसता रहा और आज पुनः विकट संकट में ग्रस्त है।

दिव्य द्रष्टा दयानन्द वस्तुतः राष्ट्रीय एकता के प्रथम सूत्रधार थे। उस योगी ने इण्डियन नेशनल कांग्रेस के जन्म से ९ वर्ष पूर्व १८७६ में भारत की राजधानी दिल्ली में महारानी बिक्टोरिया के दरबार के समय सर सैयद अहमद खां और बाबू केशव चन्द्र सेन आदि सभी सम्प्रदायों के नेताओं को आमन्त्रित करके इस भावना को दृढ़ीभूत करने का घोर प्रयास किया था। १८७७ के चांदापुर के सुविख्यात मेले के अवसर पर दयानन्द ने कुरआन, बाइबल, कबीर-पंथ आदि को मानने वाले पादरी स्कॉट, मौलवी मुहम्मद कासिम जैसे विद्वानों को सत्य धर्म-विचार के लिए बुलाया था; पर दूसरों की स्वार्थपरता एवं दुराग्रह के कारण उन्हें अपने यत्न में सफलता न मिली।

युग-प्रवर्तक दयानन्द अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' में राष्ट्रीय एकता का कार्यक्रम उस समय बना रहे थे, जब महात्मा गान्धी अभी ४-५ वर्ष के बच्चे थे और पं० नेहरू तथा नेताजी सुभाष जैसे महान् राष्ट्रीय नेताओं का अभी जन्म नहीं हुआ था एवं देश में कोई राजनीतिक पार्टी बनी न थी। १८७५ में 'आर्यसमाज' की स्थापना कर जहां उन्होंने ईश्वर व वेद पर श्रद्धा करनी सिखाई, वहाँ आर्यों के चक्रवर्ती राज्य की याद दिला कर इण्डिया को पुनः आर्यावर्त बनाने का संकल्प करना भी सिखाया। इसकी नीव उन की दृष्टि में आर्य-राष्ट्र के प्रत्येक घटक को एकता के सूत्र में पिरोती थी।

और दयानन्द की राष्ट्रीय एकता की भावना भी अनोखी थी! वे व्यक्ति और समाज के जीवन में उच्च भावनाओं का संचार करके, उसमें सर्वतोमुखी क्रान्ति लाकर राष्ट्र के जीवन में स्वतः प्रेम-भावना का संचार करना चाहते थे। वे केवल नारों में, केवल आन्दोलनों में, गुटबन्दियों में, कूटनीतियों में विश्वास न रखकर राष्ट्र को ठोस आधार पर संगठित करना चाहते थे। और वह ठोस आधार था भारत का 'स्वधर्म, स्व-संस्कृति, स्वभाषा, स्वइतिहास'!

क्रांतिदर्शी दयानन्द ने ११० वर्ष पहले हिमालय की चोटी से ललकार कर कहा था कि राष्ट्रीय एकता के मार्ग में मुख्य रूप से चार प्रकार की बाधाएं आ खड़ी हुई हैं: सम्प्रदायवाद या मतमतान्तरवाद, भाषावाद, प्रान्तवाद एवं जातिवाद। इन चारों के मूल में स्वार्थवाद! महर्षि ने आर्य समाज के नियम 'प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए', इत्यादि बनाकर व्यक्ति को स्वार्थवाद से ऊपर उठ, देश-जाति और धर्म की तन-मन-धन से सेवा करने का उपदेश दिया। 'संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्' आदि संगठन-सूक्त के वेद-मन्त्रों का पाठ बारम्बार करने का आदेश देकर उस दिव्य पुरुष ने आर्य-जाति को एकता के सूत्र में बांधने का भरसक प्रयास किया।

ऋषिवर ने अपनी दिव्य-दृष्टि से शताब्दी पहले ही इन राष्ट्रघातक वादों को को देख लिया था। आज हृदय की गहराइयों से हमारे नेता उनकी बातों को मान रहे हैं, पर उनपर आचरण अपने ढंग से ही कर रहे हैं। वोट लेने का उनका स्वार्थ

उनके दिल की बात ज़बान पर नहीं आने देता, अतः क्या सत्ताधारी कांग्रेस और क्या विपक्षी राजनीतिक दल राष्ट्रीय एकता की भावना उजागर करने में बुरी तरह असफल हुए हैं !

सम्प्रदायवाद ने भारत को भीतर से खोखला कर दिया है। देव दयानन्द की आत्मा इसे देखकर कराह उठी थी। आर्य राष्ट्र का विनाश होता देखकर वे रो उठे थे। अतः उन्होंने तुमुल ध्वनि से घोषणा की कि आर्यों की भूमि भारत का मूल धर्म वेद है, उसको माने विना भारत का कल्याण नहीं होगा। देश में विदेशी शासन के साथ फैले ईसाईमत और इस्लाम पर उन्होंने कुठाराघात किया और भारतवासियों को चेतावनी देते हुए कहा कि वेद के सूर्य के सामने ये मत दीपक समान हैं। अन्य मतों व पंथों की विवेचना करते हुए उन्होंने तुमुल ध्वनि से कहा सम्प्रदायवाद को बढ़ावा देने से न जाति संगठित होगी, न राष्ट्र में एकता की भावना दृढ़ होगी। वेद की दुन्दुभी आज भी मद्रासियों-बंगालियों, महाराष्ट्रियों, उत्तर प्रदेशियों, राजस्थानियों, आन्ध्र-प्रदेशियों, आसामियों, पंजाबियों आदि को एकता के सूत्र में बांध सकती है, इसका प्रमाण भारत की राजधानी दिल्ली में हुआ 'अखिल भारतीय वैदिक विद्यार्थी सम्मेलन' था।

भाषा की एकता राष्ट्र के लिये संजीवनी बूटी हैं, यह सिंहनाद भी उस राष्ट्र-रक्षक ने हिमालय की चोटी से ललकार कर किया था। संस्कृत के विद्वान् और गुजराती मातृभाषा वाले उस राष्ट्र-भक्त ने अपने जीवन के अन्तिम काल में आर्य भाषा हिन्दी सीखी, अपने भाषण उसमें दिए, अपने ग्रन्थ उसमें लिखे, क्योंकि जब वे प्रचार-कार्य करते-करते देश के विशाल प्रांगण में घूमे, तो उन्हें विश्वास हो गया कि भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी है और यही राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांध सकती है। उन्होंने यह घोषणा ब्रिटिश साम्राज्यशाही के आतंक काल में की थी। स्वतंत्र भारत का संविधान बनाने वालों ने महर्षि की घोषणा स्वीकार कर भारत की राजभाषा हिन्दी को बना दिया था, पर जिन लोगों के हाथ में शासन की बागडोर आई, वे या तो स्वयं अंग्रेजी के भक्त थे या वे सत्ता पर अधिकार जमाए रखने की खातिर भाषावाद के बवंडरों के आगे झुकते रहे। परिणाम भयावह हुआ ! पंजाब, नागालैंड, केरल आदि जैसे छोटे-छोटे सीमा प्रान्त बन गए जहां भाषावाद और सम्प्रदायवाद के संयुक्त मोर्चे ने राष्ट्र को चुनौतियां देनी आरम्भ कर दीं।

बात सीधी थी। राष्ट्र की भाषा के रूप में हिन्दी का बोल-बाला हो और हर प्रान्त में अपनी भाषा पनपे। पर स्वार्थी राजनीतिक नेताओं ने गुलामी के दिनों की भाषा अंग्रेजी को सह-राजभाषा बनाकर हिन्दी के ऊपर लादे रखा और प्रान्तीय भाषाओं की हिन्दी से लड़ाई करवा दी। राष्ट्रीय एकता को जितना आघात इस भावना से पहुंचा, सम्भवतः और किसी से नहीं !

प्रान्तवाद और जातिवाद की भावना ने भी राष्ट्रीय एकता की भावना को

भारी आघात पहुंचाया है। प्रान्तवाद के कारण देश में छोटे-छोटे प्रान्त बन गए। दिल्ली से पेशावर तक कभी पंजाब एक था ; आज वह पाकिस्तानी पंजाब, भारतीय पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश व दिल्ली में बँट चुका है और पाकिस्तान से मिलता हमारा पंजाब आज उपद्रव-ग्रस्त है। पूर्वी सीमा पर स्थित एक आसाम, नागालैंड, त्रिपुरा, मेघालय आदि अनेक भागों में बंट चुका है और विदेशी षड्यंत्र का अड्डा बनता जा रहा है !

जातिवाद ने देश की एकता भंग करने में कम अनर्थ नहीं किया और उसको मिटाने में भी दयानन्द सबसे आगे थे। तथाकथित अछूतों के उद्धार में उस आदर्श मानव ने जो कार्य किया, उसमें महात्मा गांधी तक ने उन्हें अपना गुरु माना। पर गांधी भटक गए ! दयानन्द ने 'अछूत को 'आर्य' बना कर एकता की माला में पिरोया; गांधी ने उसे 'हरिजन' बना कर अलगाव की वृत्ति पनपाई ! 'ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र' शरीररूपी एक समाज के चार अंग-सिर, भुजा, पेट, पैर—हैं; हर एक का अपना-अपना महत्व है। 'वे जन्म से नहीं, कर्म से बनते हैं' सिद्धान्त की घोषणा करके तो दयानन्द ने जातिवाद को जड़ से काटने का प्रयास किया था। दयानन्द का ही प्रताप है कि तथाकथित अछूतों के घर पैदा हुए श्री जगजीवन राम पण्डित कहलाए और भारत के उपप्रधान मन्त्री बने एवं डॉ अम्बेडकर विधि-मन्त्री। जाट और बनिया, कायस्थ और चमार आदि भेदों को वोट की प्राप्ति की खातिर उभारना दयानन्द के उपदेशों के बिपरीत था।

राष्ट्रीय एकता के प्रथम सूत्रधार दिव्यद्रष्टा दयानन्द को निर्वाण-शताब्दी मनाते समय उस महान् गुरु के शिष्यों का दायित्व बहुत बढ़ जाता है कि भारत में राष्ट्रीय एकता की भावना जगाएं ! हमें उनकी पुण्य-स्मृति करते हुए संकल्प लेना होगा कि सम्प्रदायवाद, प्रान्तवाद, भाषावाद एवं जातिवाद की जड़ें खोखली करने के लिए भरसक प्रयत्न करेंगे। 'एक देश, एक भाषा, एक धर्म, एक जाति' अर्थात् एक राष्ट्र की भावना जागृत करके ही भावात्मक एकता की जड़ मजबूत होगी, जिस के लिए भगीरथ यत्न करने की महती आवश्यकता है। राष्ट्रीय एकता को दृढीभूत करने का महर्षि दयानन्द का यही मार्ग है ! बिना इसके कुछ हाथ न लगेगा और हमारी मातृभूमि पर जो संकट आए दिन आते रहते हैं, उनसे छुटकारा न मिल पाएगा।

दीवान कौल के विचार

१. निर्वाण शताब्दी के शुभ एवं महान अवसर पर मैं महर्षि के प्रति तथा उनकी स्थापित संस्था के प्रति अत्यंत गर्व एवं श्रद्धा का अनुभव कर रहा हूँ।

२. टंकारा, मथुरा, अजमेर तीनों स्थलों में शिक्षा-दीक्षा तथा देश और समस्त मानव जाति के सुधार, उद्धार के लिए गतिविधियों का यथोचित ढंग से चलाना अत्यावश्यक है। उपदेशक विद्यालयों का पाठ्यक्रम विश्व व्यापी हो और अधिक से अधिक योग्य व्यक्तियों का निर्माण हो।

३. निसंदेह महर्षि ने वेदों की शिक्षा, संस्कृति और भावना का चहुंमुखी विस्तार करने का जो प्रयास आरम्भ किया, उसमें भारी सफलता प्राप्त हुई है। लाखों व्यक्ति वैदिक विचार-धारा से न्यून व अधिक परिचित हुए और उसी रंग में उनके विचार, जीवन, उनके उद्देश्य और आदर्श ढल गये —भारतीय समाज निस्संदेह अंधकार से प्रकाश की ओर बढ़ता गया—हर प्रकार के झूठे और गलत तौर तरीकों का ह्रास हुआ और होता जा रहा है इस पावन विचारधारा का अधिकाधिक प्रचार और विस्तार होना चाहिए।

४. जितना मुझे मालूम है या पढ़ने में आया है, अनुयाइयों ने कोई ढील नहीं की। शायद उस समय में चिकित्सा का इतना उत्तम प्रबन्ध न था, तथापि जिन महानुभावों ने इस विषय पर अनुसंधान किया है उनका मत महत्व रखता है।

५. हमारा अटल विश्वास है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है। अतएव विज्ञान, इलेक्ट्रोनिक्स, आकाश अनुसंधान की नई-नई जानकारियां वेद प्रचार में सहायक ही होंगी। जरूरत इस बात की है कि आर्यसमाज के रोज-रोज के काम तथा उनके ढंग में समयानुसार परिवर्तन और शोध करना है। १८८३ में या उसके बाद वेद-प्रचार और आर्यजीवन के जो ढंग निर्णय हुए थे, उनमें परिवर्तन की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में हमें भारत भर और विदेश की धार्मिक-सामाजिक संस्थानों के कार्य-विधियों को भी विचार में लाना चाहिए तथा उनसे लाभकारी संकेत लेना चाहिए।

६. महर्षि के ग्रन्थों का मेरे जीवन पर अत्युत्तम प्रभाव है, जिस पर मैं संतोष अनुभव करता हूँ। ऋषि के जो ग्रन्थ हैं, उनमें कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिए। हां, इन ग्रन्थों को भिन्न-भिन्न प्रान्तों और देशों की भाषाओं में अनूदित करना चाहिए। इस संबन्ध में मेरा निजी अनुभव है। मैं चर्खा संघ के मुख्य कार्यालय सेवाग्राम में १९४८-५४ तक सायंकालीन प्रार्थना सभा में प्रवचन देता रहा। श्रोताओं में हर धर्म के देशी-विदेशी होते थे जो मेरे प्रवचनों को (जो वैदिक विचारधारा पर आधारित होते थे) बहुत पसंद करते थे।

७. मेरे परिवार में और नजदीकी संबंधियों में मेरे तौर तरीकों और सोच-समझ की गहरी छाप है। पौराणिक विधियों और त्यौहारों के स्थान में हमारे धार्मिक त्यौहार आर्य समाजिक ढंग से स्थापित हुए हैं। मेरा अनुभव है कि आर्य सामाजिक सिद्धान्त अतीव सहज और सरल है। यही कारण है कि जब मैं कश्मीरी हूं, मेरा पुत्र कश्मीरी है तो मेरी महाराष्ट्र की पत्नी और पंजाब की पुत्र वधू के साथ स्वस्थ गृहस्थ जीवन चल रहा है

८. मेरे बाद मेरे परिवार में आने वाली पीढ़ी आर्य-सिद्धांतों पर कितनी आस्था रखेंगी, इस संबन्ध में कुछ कहना कठिन है, परन्तु मेरे होते हुए सभी बातें होती हैं तथा होती रहेंगी। आगे ईश्वर जाने।

९. स्वामी दयानन्द ने जो खुद वेदों का भाष्य किया है, उसको मान्य समझ कर दूसरे दो वेदों का भाष्य ऐसे विद्वानों से कराया जाये जिनमें वैदिक विज्ञान और आधुनिक दर्शनशास्त्र के जानने वाले हों।

१०. इसमें कोई संशय नहीं कि आर्यसमाज ने स्त्रियों के लिए कार्य किया है। अब जो स्कूल अथवा कॉलेज हैं उनमें योग्य अध्यापकों या प्रोफेसर लिये जायें, जिन्होंने आधुनिक स्तर के उपदेशक विद्यालयों में कम से कम दो वर्ष की ट्रेनिंग प्राप्त की हो।

११. संगच्छध्वं के सूत्रों को भारत की मुख्य भाषाओं तथा अंग्रेजी, फ्रेंच आदि भाषाओं में अनुवाद किया जाये, परन्तु यह किसी को न लगे कि भारत संसार के लोगों पर अपने विचार थोप रहा है।

१२. आर्यसमाज को वैदिक सभ्यता का प्रचार करना है और बस किसी पहरावे की तरफ ध्यान नहीं देना है। मैं यह भी कहूंगा कि यदि कोई हवन में मेज-कुर्सी का भी इस्तेमाल करना चाहे तो कर सकते हैं। मैं यह भी चाहूंगा यदि हवन-कुण्ड में इलेक्ट्रिक पावर का भी इस्तेमाल किया जा सके तो अच्छा होगा, ऐसे कुण्ड बनाने में इलेक्ट्रिक इंजीनियर सहायता दे सकते हैं। हवन-मंत्रों का अनुवाद हिंदी-अंग्रेजी भाषाओं में भी होना चाहिए। हमें अपने विचारों को आधुनिक तरीकों से संसार के सामने रखना चाहिये।

१३. सन् १९२२ में मेरा सम्बन्ध स्वामी सियाराम जी से हुआ एवं मैंने योग की बातों को समझा और उस पर अमल करने की कोशिश करता रहा। स्वामी जी सन्त थे और बहुत ही ऊंचे दर्जे के। इनकी विचारधारा वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार थी। मैं उस समय नवीं कक्षा का विद्यार्थी था।

१४. हम सब भारतवासी जानते हैं कि इस देश की हालत इस समय क्या है। हर एक अपनी कुर्सी के लिये लड़ रहा है। आर्यसमाज को राजनीति की बातों में शामिल नहीं होना चाहिए। हां, अलग-अलग हर एक सोच सकता है।

१५. आर्यसमाज के सदस्यों को चाहिए कि वह पुराने जात-पांत को तोड़कर अपने बच्चों का विवाह करें और यह संस्कार समाज मन्दिरों में ही हों। इससे लेने देने का सिलसिला समाप्त होने की आशा है। आर्यसमाजों में जो भी उत्सव मनाए जायें उनके साथ प्रीति-भोज की भी व्यवस्था हो और इससे छुआछूत की बुराई दूर हो सकती है।

१६. आर्यसमाज का शिक्षा विभाग बहुत कुछ कर रहा है। यदि बी. एड. कॉलिज भी खोले जायें और उनमें एक विषय अनिवार्य तौर पर धर्म-शिक्षा का भी प्रबन्ध हो तो उस हालत में उन अध्यापकों को अपने स्कूलों में स्थान दिया जाये। इससे बहुत कुछ परिवर्तन आ सकता है।

१७. राष्ट्र भाषा हिन्दी का प्रचार वर्धा राष्ट्रभाषा समिति कर रही है। उसका साथ देना चाहिए।

१८. यदि आज महर्षि दयानन्द जीवित होते तो वर्तमान परिस्थितियों को देखकर उनकी क्या प्रतिक्रिया होती, इस पर कुछ कहना कठिन है।

१९. आर्यसमाज चलाने वाले ऐसे होने चाहिए, जो सब धर्मों व उनके मुख्य प्रचारकों के तौर-तरीकों से परिचित हों, और संसार के सभी समाजों में जायें और वैदिक धर्म का प्रचार करें।

२०. यदि आर्यसमाज के पास धन हो तो यहाँ पर हमारा अंग्रेजी भाषा में एक पत्र हो। हमारी सभा एक मासिक अंग्रेज़ी पत्र तो निकालती है, परन्तु उसमें सुधार की आवश्यकता है। मेरे कहने का मतलब यह है कि कुछ किया जाये।

धर्मेन्द्र गुप्त के शेष विचार

अब शेष प्रश्नों का उत्तर मैं अपनी इस टिप्पणी के साथ देना चाहता हूं कि मेरी राय में आर्यसमाज मनुष्य की सभी प्रकार की गलत मान्यताओं से जूझने की शक्ति का केन्द्र होना चाहिये। स्वामी दयानन्द जी ने प्रान्त, भाषा, जाति, गरीब-अमीर, ऊंच-नीच की संकीर्ण सीमायें तोड़ दी थीं और आदमी को साहस के साथ जीना सिखाया था। क्या आज अपने को 'पक्का आर्यसमाजी, कहने वाले इस संकीर्णता से मुक्त हैं ?

इसी के साथ आर्यसमाजी व्यक्ति का आज धन के प्रति मोह समाप्त होना चाहिये। पैसे के नाम पर जो ऊँच-नीच की स्थिति सत्ता की ओर से पैदा की जा रही है, उससे आर्यसमाज को सीधा संघर्ष का आवाहन करना चाहिए। दहेज-प्रथा, जाति-प्रथा, प्रान्त का मोह, एकदम समाप्त हो सकता है अगर अपने को आर्यसमाजी मानने वाले व्यक्ति अपने लड़के-लड़कियों का विवाह बगैर किसी संकोच के सादगी के साथ आपस में करने लगें। यह बड़े दुःख की बात है कि आर्य-समाज भी आज 'रोटी-बेटी' एक नहीं कर सका है।

देश के दस करोड़ हरिजनों से भी आर्यसमाज कटा हुआ है। दिल्ली में नई बसी झुग्गी-झोपड़ी कालोनियों में भी आर्यसमाज मन्दिरों की स्थापना नहीं हो सकी है। वेद केवल सवर्ण हिन्दुओं तक ही सिमटकर रह गये हैं, यह चिन्ता की बात है।

'तीसरा विश्व-हिन्दी-सम्मेलन' मेरी राय में आने वाले चुनाव में हिन्दी भाषी जनता के वोट बटोरने के लिये ही सत्ता की ओर से प्रच्छन्न रूप से आयोजित किया गया है, अन्यथा क्या कारण है कि जो शासक दैनिक व्यवहार से 'हिन्दी भाषी प्रान्त में ही' हिन्दी को निकाल रहा है और अंग्रेजी को थोप रहा है, वह सहसा हिन्दी को विश्व के सन्दर्भ में देखने लगता है। आर्यसमाज को इस राजनीतिक स्टंट को समझ कर हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को अपनाना चाहिए और अंग्रेजी की मानसिक गुलामी का घोर विरोध करना चाहिये।

मै पहले ही कह चुका हूं कि आज आर्यसमाज ऐसे हाथों में फंस गया है जो कुछ वेद की पंक्तियों को अवश्य रटे हुए हैं और और आर्यसमाज के बस नियम भी मुंह जबानी सुना सकते हैं, किन्तु जिनके पास न आधुनिक दृष्टि है और न ही आज के इंसान को राहत देते की इच्छा। ऐसे महानुभाव आर्यसमाज के नाम पर एक भीड़ तो अपने आसपास चाहते हैं, किन्तु स्वामी दयानन्द जी के समान

जीवन में संघर्ष करते हुए सत्य के लिये हलाहल पीने की कल्पना नहीं कर सकते। वह किसी से भी टकराना नहीं चाहते, चाहे वह सत्ता हो याकि घर परिवार में पनप रहीं सड़ी-गली मान्यतायें। वह उस नौजवान तब के से भी दूर रहना चाहते है जो हर बुराई से लड़ सकता है, क्योंकि ऐसा विद्रोही चरित्र किसी की नेतागिरी सहन नहीं कर सकता। शास्त्रार्थ, आर्यसमाज का मजबूत अस्त्र रहा है, किन्तु दुख के साथ यह स्वीकार करना पड़ रहा कि आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि के अभाव में आर्यसमाज के नेता सिर्फ अपने विरोध को 'गलत' कहना ही जानते हैं, उसे तर्क से काटने का साहस नहीं जुटा पाते।

फिर भी भविष्य के प्रति मेरी गहरी आस्था है और मैं मानता हूं कि आर्य समाज को अगर हम आज के सन्दर्भ में व्याख्यायित करें, तो हमारी सामाजिक बुराइयां दूर होकर एक नये सुखद समाज की पुनः रचना हो सकती है। स्वामी जी ने नाई के घर भोजन किया था, स्वामी जी ने राजा के निकट पहुंच कर भी वैभव और धन तथा पद को नकार दिया था, स्वामी जी ने पददलित स्त्री को मान दिया और स्वामी जी ने सभी मनुष्यों को एक समान माना। अतः स्वामी जी के बताये इस 'समता के समाज' को ही स्थापित करने का लक्ष्य होना चाहिये। आर्यसमाज मंदिर को ऐसे नये रूप में ढालना होगा, जहां क्रान्तिधर्मी युवक आकर संघर्ष की प्रेरणा ग्रहण करें और पुनः रामप्रसाद 'बिस्मिल' जैसे क्रांतिकारी भारत भूमि में जन्म लें। आर्यसमाज को राजनीतिक सन्दर्भ में उस लड़ाई के लिये तैयार रहना होगा जो प्रत्येक इंसान को रोजी-रोटी देकर सुखद समाज की रचना कर सकता है।

मेरी राय में आर्यसमाज एक मिशन है, एक ऐसा मिशन जो सभी इंसानों को एक समाज मानकर सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक न्याय दे सकता है, पर इसके लिये हमें अपनी सोच को आज के युग की वास्तविकता से जोड़ना होगा।

मैं रचनाकार हूं, मेरी इच्छा है कि स्वामी दयानन्द जी का सम्पूर्ण जीवन चरित्र, उनका संघर्ष और उनका इंसान के सुख के लिये बलिदान हो जाने की महान घटना को एक कथा के रूप में प्रस्तुत करूं। यह बृहत पुस्तक भी हो सकती है। इसके लिये मैं टंकारा, उदयपुर, जोधपुर, अजमेर और मथुरा की यात्रा भी करना चाहता हूं, जहां स्वामी जी गये और कार्य किया। अगर मैं अपने इस कार्य को पूरा कर सका तो मैं इसे अपने जीवन की एक बड़ी उपलब्धि मानूंगा।

डॉ० (श्रीमती) महाश्वेता चतुर्वेदी के विचार

टंकारा, मथुरा तथा अजमेर, इन तीनों स्थानों को दर्शनीय स्थल बनाया जाये, इसके साथ ही ये स्थल वैदिक धर्म प्रचार के प्रेरणास्पद स्थाल भी बनाये जायें। वैदिक-शोध संस्थानों के माध्यम से वैदिक साहित्य का प्रचार हो, जिनसे आगामी पीढ़ियां प्रेरणा ग्रहण कर सकें। वैसे महापुरुषों के सच्चे स्मारक उनके सद्ग्रन्थ और सत्कार्य ही है, और इनसे क्षमता के अनुसार प्रेरणा ग्रहण की जा सकती है। हमारा लक्ष्य वैदिक विचाधारा है।

महर्षि दयानन्द अपने समय के सभी महापुरुषों की तुलना में सर्वाधिक सफल रहे, यही कारण है कि आर्यसमाज का व्यापक प्रसार हुआ। अब भी आर्यसमाज एवं महर्षि दयानन्द का लोहा प्रत्येक विद्वान मानता है। खेद है कि आर्यत्व दिन प्रतिदिन अब क्षीण होता जा रहा है, क्योंकि महर्षि दयानन्द की विचारधारा को क्रियात्मक रूप देने वाले अत्यल्प लोग हैं।

जैसा सार्थक और उपयोगी आर्य समाज पहले था, वैसा आज भी है, और सर्वदा रहेगा, क्योंकि इसका आधार वेद-पथ है, तथा वेद अपौरुषेय, ज्ञान-और विज्ञान के अथाह सागर हैं, जहां रूढ़िवादिता, अन्धविश्वास एवं कुतर्क आदि का स्थान नहीं। वेदों के कारण भारत विश्व-गुरु होने का गौरव प्राप्त कर चुका है।

महर्षि दयानन्द के व्यक्तिगत-जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रभाव यही है कि प्रत्येक विचार एवं वस्तु को तर्क की कसौटी पर कसकर ही स्वीकार करना चाहिये। उनके ग्रन्थों में कोई भी स्थल हटाने योग्य नहीं है। वेद मानव-कल्याण के लिए हैं। अन्धभौतिकवाद, पश्चात्य संस्कृति के अन्धानुकरण, उथले ज्ञान, अनास्था, अश्रद्धा दुर्बुद्धि, पाखण्ड एवं लक्ष्यहीन व्यस्तता के कारण लोग वेदों से विमुख होते जा रहे हैं। वेद-वाणी को धार्मिक प्रवचनों, आकाशवाणी, टेपरिकार्डर, वैदिक पत्रिकाओं आदि के माध्यम से जन-जन तक पहुंचाया जा सकता है।

वेदों में स्त्रियों का प्रत्येक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थाना है। 'स्वातन्त्र्य' का अभिप्रायः अश्लीलता, अनुशासन हीनता, एवं नैतिक और सामाजिक नियमों का भंग नहीं अपितु इन नियमों के निर्वाह से ही स्वातंन्त्र्य सुख का अनुभव होता है। स्वतन्त्रता के दुरुपयोग से स्त्री समाज एवं राष्ट्र का अभिशाप बनकर रह जाएगी। तत्सम्बन्धित आर्यसमाज की भूमिका के अन्तर्गत वैदिक संस्कृति का अनुगमन ही है।

वैदिक-संगठन सूत्र के अनुपालन से निस्सन्देह विश्व-समाज का निर्माण हो सकता है। पश्चिमी सभ्यता का दुष्प्रभाव सद्विचारों द्वारा ही मिट सकता है।

भारत समस्या ग्रस्त है। बीस सूत्रीय कार्यक्रम के स्थान पर केवल 'मानव-सूत्र' के पालन से ही अनेक समस्याओं का समाधान सम्भव है। 'मानव-सूत्र' की शिक्षा वैदिक-धर्म प्रचार द्वारा ही सम्भव है।

वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति के पालन, तथा अतीत की गरिमा-मंण्डित स्मृति के द्वारा राष्ट्रीय-भावना विकसित की जा सकती है। अस्पृश्यता व अन्य समस्याओं के समाधान के लिए आज वैचारिक क्रान्ति की व्यापक-स्तर पर अपेक्षा है। वैदिक-धर्म का सिंहनाद ही सुप्त भारत की चेतना पुनः जागृत कर सकता है। राष्ट्रीयता की भावना का विकास सचेत भारत ही कर सकता है, आर्यसमाज ही सुप्त भारत को जगा सकता है।

विश्व में हिन्दी को उचित स्थान दिलाने के लिये आर्यसमाज को चाहिये कि संगठित होकर इसे अन्तराष्ट्रीय-भाषा का क्रियात्मक स्थान दिलायें। आर्यसमाज ने हिन्दी सम्मेलन किया था। फीजी व अन्य देशों में जो हिन्दी' है उसका साराश्रेय महर्षि दयानन्द को है, जिसे सभी विचारकों ने स्वीकार किया है।

यदि महर्षि दयानन्द आज जीवित होते तो आज की बुरी अवस्था के सन्दर्भ में यथोचित करते तथा भारतीयों को धिक्कारते कि 'स्वतंत्रता' को पाकर भी वे अज्ञान वश परतन्त्र होक अनेक दुःखों और क्लेशों को स्वयं ही भोग रहे हैं और देश को पतनोन्मुख कर रहे हैं। इतना अधिक पाखण्ड भी व्याप्त नहीं होता, जितना कि आज है।

आर्यसमाज में आज अनेकों भ्रष्टाचारी अनार्यों का प्रवेश हो चुका है। जो जातिवाद के संकीर्ण घेरों में आबद्ध, अवसरवादिता एवं स्वार्थपूर्ति में लिप्त होकर आर्य-समाज को चला रहे हैं। किन्तु ऐसे लोग न प्रेरणा दे सकते हैं और न कल्याणोन्मुख हो सकते हैं। आर्यसमाज को नया जीवन देने के लिए केवल नैतिक बल में समुन्नत, आर्यसिद्धान्तों पर चलने वाले, सदाचारी, एवं विद्वानों को प्रश्रय मिले।

विश्व कल्याण एवं मानव-कल्याण के लिए आर्यसमाज को विश्व-संगठन एवं मानव-एकता संगठन, तथा तत्सम्बन्धित अन्य संगठन अपने हाथ में लेने चाहिये, क्योंकि वैदिक संस्कृति ही ऐसी है जो धर्म का मूल है तथा जिसमें विश्व को जीवित रखने की क्षमता है। आज राष्ट्रीय-स्तर पर ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी इसे जीवित रखने की अपेक्षा है। इसी में मानव मात्र का ही नहीं प्राणी भाग का कल्याण है।

रमेश चन्द एम. ए., सम्पादक "आर्य मित्र' के विचार

मानव चेतनाशील स्वतन्त्रचेता प्राणी है, कल्पना-निधि तथा तर्क-प्रज्ञा से से भूषित है। स्वतंत्रचेता महाशक्ति का अंश प्रतिबिम्ब होने के कारण अंशुमाली है, प्रभा किरण दीप्त है।

मानव स्वाभाविक रूप से रूढ़ियों तथा बन्धन के प्रति विद्रोही हो जाता है, इतिहास के पृष्ठों पर मानव के विद्रोह की ही कहानियां अंकित हैं।

वैदिक कर्मकाण्ड बहुदेवतावाद की उपासना के बन्धनों के प्रति विद्रोह ही दार्शनिक विचारों के प्रस्फुटन की आधारशिला है। स्वार्थी धर्मगुरुओं द्वारा यज्ञ, पशुबलि के प्रति सचेत मानव का विद्रोह, वासुदेव धर्म तथा तीर्थकंरों और तथागत की वाणी में मुखरित हो उठा जर्जरित बौद्ध आस्थाओं के प्रति आक्रोशमय विद्रोह शंकराचार्य की वाणी में ध्वनित हो उठा। इस्लामी रूढ़िवादिता के प्रति विद्रोह ही कबीर की सक्षम वाणी है। वैष्णवी शृंगारमयी रासलीला के प्रति विद्रोह ही तुलसी की वाणी में उजागर होकर शक्तिवर्धन राम के धनुष टंकार में झंकृत हुई।

दयानन्द ऋषिवर की वाणी बौद्धिक बंधन, रूढ़िवादिता, प्रतिभा कुण्ठा और विधर्मियों के शोषण के प्रति प्रलयकारी विद्रोह है। काल संसृति पर जो प्रहार करके दिशा बदल दे—समय की शिला पर जो अमिट रेखाएं खींच सके, वहीं क्रांतिदर्शी है। स्वामी दयानन्द क्रांतिदर्शी थे।

क्रान्ति की भावना से परिपूर्ण वेद को आधार मानकर उनके निहित सत्यदर्शिता को निकष रूप में स्वीकार करके आर्य-संस्कृति की स्वर्णिम रेखाओं का जाल बिछाने में ऋषिवर समर्थ हुये—देश को नव शक्ति, नव विचार, नव दिशा प्रदान की।

प्रभुवर दयानन्द के दर्शित मार्ग पर चलते हुए सौ शरद और सौ बसंत पार हो गये, जैसे जलाशय के निर्मल तट पर साधु स्नान करके वारि-चेतना से प्रदीप्त हो उठते हैं। ऐसे कतिपय आर्यजन हमारे बीच हुए और हैं। कोई मूढ़ प्राणी अपने घर की समस्त गन्दगी भरे पात्र और वस्त्र जलाशय तट पर एकत्रित करके उसे गन्दा और कल्मष बनाते हैं, ऐसे सहस्रों आर्यजन हमारे बीच में है। स्वार्थी एवं लोभी

प्राणी प्रवाह को स्थिरता में, जीवन को मृत्यु में, संवेदना का रूढ़िवादिता में बदलने का प्रयास करते हैं। आर्यसमाज ऐसे ही व्यक्तियों के हाथों में फंसकर पंगु हो गया है, जो उसकी निष्क्रियता का मुख्य कारण है।

बौद्ध धर्मदुराग्रह, अकर्मण्यता-रूढ़िवाद तथा साधु एवं भिक्षु पूजा में जब जकड़ गया तो हीनयान से महायान की धारा फूटकर विदेशों में बिखर गयी और वर्तमान में लंका, इण्डोनेशिया, चीन, जापान, कोरिया तथा मंगोल देश में महायान फलफूल रहा है। कैथोलिक ईसाई चर्च तथा पादरी को गहरे बंधन में जब कसा गया तो प्रोटेस्टेन्ट विद्रोही बन कर उभर कर आ गये। ऋषिय दीवारों से घिरी जल राशि नव प्रवाह का मार्ग बनाती है।

आज आर्यसमाज को रूढ़िवादिता में जकड़ा जा रहा है। अयोग्य अधिकारी पदों पर बैठकर आर्यसमाज की सम्पत्तियों पर अधिकार जमाने के लिये ऋषिवर की क्रान्तिदर्शिता को रूढ़िवादिता में बदल रहे हैं। आर्यसमाज का उपदेशक मंच पर सिद्धान्त और विज्ञान की बात कम करेगा। अधिकारी प्रधान और मंत्री के पद का यशगान अधिक करेगा। अयोग्य पूजा-विद्वान की अवहेलना, तरुण रक्त का मार्ग अवरोध कारण बन रहे हैं कि आर्यसमाज में भी नव-क्रांति हो और परम्परावादी आर्यसमाज से नवीन क्रांतिकारी आर्यसमाज की धारा फूट निकले। आर्यसमाज का तरुण विद्रोह सिद्धांतों के प्रति नहीं संगठन के ठेकेदारों के प्रति होगा। यह आर्य-जगत की क्रांति होगी। इसे आर्यसमाज का पुनरोत्थान या 'रेनेसां' कहा जायेगा। परम्परागत आर्य-समाज (Traditional) नव-रक्त को आकर्षित करने में अक्षम है। विज्ञान के पथ से हटकर दयानन्द की कल्पित रेखा में खींचकर उसमें भ्रमित है।

आर्यसमाज का प्रचार-माध्यम क्षीण और पंगु है उपदेश-विभाग निष्क्रय हाथों में फंसे हैं। विज्ञान की प्रगति के साथ हम चल नहीं पा रहे हैं। आर्य-साहित्य का प्रचार व्यापक हो। उच्चस्तरीय आकर्षक साहित्य प्रकाशित किया जाय। प्रचार-प्रसार में तीव्रता तथा तरुण-रक्त का आह्वान आवश्यक है।

विदेशों में आर्यसमाज सीमित है, उस देश में जहां भारतीय मूल के व्यक्ति रह रहे हैं। अत: आर्यसमाज के विदेश-प्रसार पर संतोष करना आत्म-प्रवंचना है। विचारना होगा कि हमारे प्रचार और प्रसार-शैली में कहां त्रुटि है। इतिहासकारों ने स्वीकार किया है कि योरोपियन जातियां-जर्मन, रशियन, फ्रेंच तथा ब्रिटिश आर्य-परिसर के अंग हैं। हम आर्य हैं, इस ऐतिहासिक तथ्य पर उन जातियों को निकट लाना होगा। इसके लिय उच्च-शिक्षा प्राप्त योरोपियन भाषाओं में निष्णात व्यक्तियों की हमें आवश्यकता है।

आर्यसमाज के मठाधीश यदि समय रहते चेत जायें और नवीन क्रान्ति, जो द्वार पर दस्तक दे रही है, पहिचान लें तो ठीक, नहीं तो आर्यसमाज का तरुण वर्ग विद्रोही आर्यसमाज बन जायेगा तथा समय के साथ आगे बढ़ेगा। नवीन शाखा फूट निकलेगी, नाम कुछ भी हो।

ये इतिहास के निष्कर्ष पर आधारित विचार है, किसी व्यक्ति के प्रति कोई दुर्भावना नहीं है। आर्यसमाज का भविष्य व्यापक और उज्ज्वल हो, यह कामना है।

बनारसीदास चतुर्वेदी का पत्र

प्रिय भाई रामगोपालजी,

सादर प्रणाम।

आपका ७ तारीख का कृपा पत्र परसों मिला और प्रश्नों की सूची भी। प्रश्न निस्संदेह महत्वपूर्ण है। पर उसका उत्तर देने के लिये बहुत समय चाहिए।

मैं अब किसी धर्म विशेष के प्रचार के बजाय धार्मिक समन्वय की नीति का पक्षपाती हूँ। खण्डन की नीति तो बिल्कुल समय के विपरीत हो गई है। पर एक प्रश्न उठता है जब ईसाई और मुसलमान धर्म-परिवर्तन के लिए करोड़ों रुपए खर्च करने के लिए तैयार हों, तब क्या किया जाये।

बहुत वर्षों से आर्यसमाज से मेरा विशेष सम्बन्ध नहीं रहा है, यद्यपि मैं स्व० भाई हरिशंकर जी के साथ 'आर्यमित्र' का सहकारी सम्पादक रहा। विशाल भारत में मैंने एक लेख सर्वथा सद्भावनापूर्वक आर्यसमाज की त्रुटियों पर छापा था। इसके लिखने में भाई हरिशंकर जी ने बहुत मदद दी थी। आत्म-निरीक्षण के लिए यह आवश्यक है कि हम लोग समय-समय पर अपनी पुरानी कार्य पद्धति पर विचार कर लिया करें।

भावी समाज व्यवस्था के विषय में आर्य समाज के क्या विचार हैं, यह भी निश्चित कर लेने की जरूरत है। यह युग साम्यवाद का है। जब तक साधन अल्प-संख्यक व्यक्तियों के हाथ में रहेंगे, तब तक साधारण को मुक्ति मिल ही नहीं सकती। इन साधनों को सर्वजन सुलभ कैसे बनाया जाये, यह आज का मुख्य प्रश्न है। धार्मिक झगड़े अब समय की गति के सर्वथा विपरीत है। जब तक आर्यसमाज आगे बढ़ कर प्रगतिशील आन्दोलनों में सक्रिय सहयोग नहीं देगा, इसका प्रभाव कदापि नहीं बढ़ेगा।

आर्यसमाज ने अपने साहित्य-सेवियों की बड़ी उपेक्षा की है। सम्पादकाचार्य रुद्रदत्त शर्मा आगरे में भूखों मर गये। महाकवि शंकर जी और पं० पद्मसिंह जी शर्मा की स्मृति-रक्षा के लिए हम लोगों ने कुछ भी नहीं किया। हमें कार्य विभाजन की नीति से काम लेना है। जिस कार्य-कर्त्ता की रुचि जिस विभाग में हो उसे उस कार्य में जाने देना है। श्रद्धेय राजा साहब रणञ्जय सिंह जी दो बार यहाँ पधार चुके है। उनमें जो सजीवता और उत्साह है उसका हमारे नवयुवकों में अभाव ही है। आर्यसमाज की तन्द्रा कैसे टूटेगी, यह प्रश्न उनके भी सामने है। फिर भी हमें निराश होने की जरूरत नहीं है। हमें महात्मा गाँधी जी की लोक-संग्रह की नीति से काम लेना है। दक्षिणी अफ्रीका में एक समय ऐसा भी आया था जब महात्मा जी के साथ केवल १६ व्यक्ति रह गए थे फिर भी वे निराश नहीं हुए। आज तो सम्पूर्ण संसार में उनके सिद्धांतों की चर्चा है और 'गांधी' फिल्म ने दुनिया में धूम मचा दी है। हम सभी जानते हैं कि भारत वर्ष से बौद्ध-धर्म का लोप-सा हो गया फिर भी विदेशों में वह अब भी सजीव है। मैंने स्वयं अपनी आंखों से पूर्व अफ्रीका में आर्यसमाज के कार्य को देखा था और मैं दंग रह गया था।

सन् १९२५ में महर्षि दयानन्द जन्मशताब्दी के अवसर पर मैंने एक प्रस्ताव मथुरा के उत्सव में रखा था जो सर्व सम्मति से पास भी हो गया था।

अभी हाल में मेरे पास एक अंग्रेजी ग्रन्थ 'आर्यसमाज एंड इण्डियनस एब्रोड' आया है जिसका सम्पादन बन्धुवर नरदेव विद्यालंकार तथा मनोहर सोयेरा ने किया है। आवश्यकता इस बात की है कि उसका हिन्दी अनुवाद शीघ्र प्रकाशित किया जाये। जिन-जिन लोगों ने वैदिक संस्कृति के प्रचार (विदेशों में) के लिए कार्य किया था उनके रेखाचित्र तो प्रकाशित होने ही चाहिए। स्वयं मैंने एक पुस्तिका 'अमेरिका में केशव देव शास्त्री' लिखी थी पर वह अब अप्राप्य है। और लोग केशवदेव शास्त्री को बिल्कुल भूल ही गए। हिन्दी प्रचार के लिए जिन स्वामी भवानी दयाल जी ने जो महान कार्य किया उसे भी हम लोग भूल चुके हैं। अजमेर के प्रवासी भवन की दुर्दशा हमारे सिर पर एक कलंक है। हमें एक-एक कार्य हाथ में लेकर उसे निबटाना चाहिए। अधिक क्या लिखूं।

—बनारसी दास चतुर्वेदी
फिरोजाबाद

वीरेन्द्र, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का पत्र

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (रजि०)
(सन् १८६० के ऐक्ट २१ के अनुसार रजिस्ट्री हुई)
गुरुदत्त भवन, किशनपूरा चौक, जालंधर शहर—४

मान्य महोदय,

सादर नमस्ते।

आपका पत्र दिनांक सात अक्तूबर १९८३ प्राप्त हुआ। हार्दिक धन्यवाद। उसी के साथ 'आर्यसमाज : आज के सन्दर्भ' में, इस विषय की प्रश्नावली भी प्राप्त हुई। इसमें सन्देह नहीं कि प्रश्नावली का विषय आज की परिस्थितियों में बहुत अधिक महत्वपूर्ण है। इसके लिग आपने जो प्रश्न बनाये है, वे भी आवश्यक हैं। और उनके उत्तर पर ही इस प्रश्न का उत्तर मिल सकता है कि आर्यसमाज भविष्य काक्या है और आज के सन्दर्भ में उसे क्या करना चाहिये। परन्तु क्या आप समझते हैं कि इन २० प्रश्नों का कोई व्यक्ति आठ दिन के अन्दर उत्तर दे सकता है? एक-एक प्रश्न ऐसा है, जिस पर एक निबन्ध लिखा जा सकता है। यह काम जो आपने अब प्रारम्भ किया है, एक वर्ष या छः मास पहले प्रारम्भ होना चाहिए था। मुझे खेद है कि इतने थोड़े समय में मैं इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दे सकता।

भवदीय
वीरेन्द्र
सभाप्रधान

प्रो० धर्मपाल आर्य जी,
ए-एच-१६ शालीमार बाग,
दिल्ली-११००३३

विद्यासागर विद्यालंकार का पत्र

दूरभाष : ७११३७६३

प्रकर

पुस्तक-समीक्षा का मासिक   ए-८/४२, राणा प्रताप बाग, दिल्ली-११०००७

दिनांक १२ १०.८३

प्रिय भाई,

आपका भेजा परिपत्र और डॉ० कमलकिशोर गोयनका द्वारा भेजा परिपत्र दोनों प्राप्त हुए, बाहर था, इसलिए दोनों एक साथ मिले।

आपने जो प्रश्नावली भेजी है, उसका उत्तर देना निष्ठावान् आर्यसमाजी के लिए सहज नहीं है। सीधा उत्तर देने का अर्थ होगा आर्यसमाज संगठन के कर्णधारों के सामने चुनौती देकर खड़ा होना। एक बार संगठन में व्यक्तिगत रूप से असफल हो जाने पर तथा किसी चुनौती का सफलतापूर्वक उत्तर देने में असफल रहनेपर ललकारने की मुद्रा में फिर से खड़ा होना तभी सार्थक होगा जब इतनी शक्ति जुटाने में समर्थ हो सकूं। महर्षि दयानन्द का धैर्य, साहस, निष्ठा, दूरदर्शिता जैसी शक्तियां प्राप्त करने के लिए जिस साधना की अपेक्षा है, वह भी अपने भीतर नहीं पाता। ऐसी प्रभावहीन स्थिति में प्रश्नावली का सटीक उत्तर देना अपने को ही हास्यास्पद स्थिति में डालना है।

वैसे भी मैं अब आर्यसमाज संगठन का सदस्य नहीं रहा। सब ओर से मुक्ति पाली है। अब केवल पत्रकारिता धर्म का निर्वाह करने के लिए लिखा जा सकता है, परन्तु सार्वजनिक रूप से। जिससे आर्यसमाज के कर्णधारों को ही नहीं, अन्य लोगों को भी और सम्पूर्ण सामाजिक दृष्टि से भी इस पर विचार करने का अवसर मिल सके। आपके आयोजन के लिए लिखना सीमित क्षेत्र के लिए होगा और केवल संगठन से प्रतिबद्ध लोगों के लिए होगा जो कि किसी की विमतिपरक टिप्पणी सुननेपर आपसे बाहर हो जाते हैं। इसलिए यदि कभी सार्वजनिक और सामाजिक प्रभाव की दृष्टि से कुछ लिखना संभव हुआ तो लिखूंगा, परन्तु अभी तो आपसे क्षमा प्रार्थी हूँ।

आपने स्नेहपूर्वक स्मरण किया, इसके लिए आभारी हूं। आपके दोनों लिफाफे लौटा रहा हूं, जिससे आप इनका उपयोग अवश्य कर सकें।

साभार,

सस्नेह आपका

वि० सा० विद्यालंकार

प्रो० वेदव्रत का पत्र
रायसीना प्रेस
४ चमेलियन रोड़, दिल्ली-६

माननीय प्रो० धर्मपाल जी,

अभी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान लाला राजगोपाल जी शाल वाले की ओर से एक सर्कुलर पत्र दिनांकित ७-१०-८३ प्राप्त हुआ है। इसके साथ एक प्रश्नावली भी मिली है। इस सम्बन्ध में स्मरण करने के लिये धन्यवाद देता हूँ।

निर्वाण शताब्दी के अवसर पर महर्षि दयानन्द के कार्यों का लेखाजोखा करना और इतिहास में उनके स्थान का एसैसमेंट बहुत अच्छा और महान् कार्य है। यह जो आप लोगों ने कार्य उठाया है, बहुत अच्छा है।

आपकी प्रश्नावली का मैं उत्तर देना चाहूंगा, परन्तु इसके लिये समय की जरूरत है। आपकी प्रश्नावली भी बहुत व्यापक है। मैं अपने व्यस्त कार्यक्रम में से कुछ समय निकाल कर यथासंभव शीघ्र अपना उत्तर आपको भेजने का प्रयत्न करूंगा।

आशा है, आप सब सानन्द हैं और सब काम सुचारू रूप से चल रहा है।

भवदीय

वेदव्रत

डॉ० रामनाथ वेदालंकार का पत्र

८०, आर्य वानप्रस्थाश्रम
ज्वालापुर (सहारनपुर) २४९४०७
दिनांक २४-१०-८३

प्रिय महोदय,

सार्वदेशिक सभा की ओर से अभी एक प्रश्नावली प्राप्त हुई है, जिसका उत्तर आपको भेजने के लिए लिखा है। उत्तर में सूचित करना चाहता हूं कि 'आर्यसमाज आज के सन्दर्भ में' पुस्तक यदि शताब्दी से पूर्व छप रही है तो इतनी शीघ्रता में अपनी बात लिख सकना संभव नहीं है।

भवदीय
रामनाथ

ट्रस्ट के उद्देश्य

प्राचीन वैदिक साहित्य का अन्वेषण, रक्षा तथा प्रचार, तथा भारतीय संस्कृति, भारतीय शिक्षा, भारतीय विज्ञान पौर चिकित्सा द्वारा जनता की सेवा।

ओ३म्

श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट

पंजीकृत (रजिस्टर्ड)

[प्रधान कार्यालय—गुरु बाजार, अमृतसर]

पो० बहालगढ़

(सोनीपत-हरियाणा)

पिन १३१०२१

दिनाङ्क १०.१०.१९८३

मान्यवर महोदय,

सादर नमस्ते

आपका प्रश्नावली पत्रक प्राप्त हुआ। निवेदन यह है कि पूज्य पंडित जी इस समय ऐसी स्थिति में नहीं है कि आपको कुछ लिख सकें।

सूचनार्थ निवेदन है।

आपका

जीवन नाथ
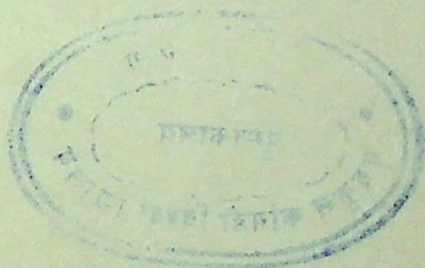
सत्यकेतु विद्यालंकार
डी० लिट्० (पेरिस)

ए-१/३२ सफदरजंग एन्क्लेव
नई दिल्ली-२९

दिनांक-१४.१०.८३

आदरणीय महोदय,

नमस्ते

७-१०-८३ का आपका कृपापत्र प्राप्त हुआ, धन्यवाद। 'आर्यसमाज—आज के सन्दर्भ में' विषय पर आपने जो प्रश्नावली भेजी है, वह बहुत बड़ी है। मैंने उसके उत्तर लिखने प्रारम्भ किये थे, पर पहले चार प्रश्नों के उत्तर में ही पांच पृष्ठ लिखे गये। सब प्रश्नों का उत्तर समय पर दे सकना सम्भव नहीं है। अतः केवल प्रथम प्रश्न के उत्तर में यह लिख कर भेज रहा हूं—

महर्षि दयानन्द सरस्वती के निर्वाण शताब्दी महोत्सव के अवसर पर जो अनुभूति मुझे हो रही है, उसे तीन शब्दों में प्रकट किया जा सकता है—उमङ्ग उल्लास और स्फूर्ति।

आपने जो प्रश्न उठाये हैं, वे बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। उन पर शीघ्रता से जो उत्तर दिये जायेंगे, वे उपयोगी नहीं होंगे। अतः क्षमा प्रार्थी हूं।

भवदीय
सत्यकेतु विद्यालंकार